भक्ष्य निर्णय भास्करः

श्रीहरिद्वारे पातञ्जलाश्रम निवासि
स्वामि तेजोनाथेनोदितीकृतः

सचतेनैव
मुद्रणयन्त्रालयाधिपति लालादीवानचंदद्वारा
लवपुरे तस्यैव मरकनटाईलाख्य
मुद्रणयन्त्रालये मुद्रापयित्वा
दार्शितः

१५ मार्च १९२३

प्रथमावृत्ति १०००]

रु...आना
[तत्पूजने २ ... १२

भूमिका प्रस्तावः

ओम् तत्सत् ॥ प्रसिद्धहीहै कि— अजशशहरिण प्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानमें व विहितमांसके भक्षणमें बहुतपुरुष विवाद करतेहैं उस्सें अतिक्लेशको पातेहैं और यथार्थअर्थके लाभसें शून्य रहितेहैं, वो प्रबलप्रमाणोंके तथा स्पष्टदृष्टान्तोंके और दृढयुक्तिओंके निरूपणकियेविना विवादक्लेश निवृत्तहोसकें नहीं और सत्यअर्थका लाभभी होसके नहीं, अतः उनप्रबल प्रमाणादिकोंके निरूपणालिये इस भक्ष्यनिर्णयभास्करग्रन्थका उदयकरणा अवश्यंही चाहताथा ॥

——

हेपाठको—वेदोंके संहिताभागोंमें, तथा ब्राह्मणभागोंमें उपनिषद्भागोंमें, वेदान्तउपनिषदोंमेंभी, तथा सायणभाष्यआदिकोंमें, शाङ्करभाष्यमें, आश्वलायनगृह्यसूत्र, पारस्करगृह्यसूत्रप्रभृतिगृह्यसूत्रोंमें, कात्यायनश्रौतसूत्रादि श्रौतसूत्रोंमें, तथा वैष्णवोंकेआदिआचार्य्य श्रीरामानुजस्वामिकृत श्रीभाष्यमेंभी, और मनुस्मृति, वसिष्टस्मृति, व्यासस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृतिआदिक स्मृतिओंमे, बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्रमें, तथा कूर्मपुराण, वराहपुराण, पद्मपुराण भगवद्भागवतपुराणादिकपुराणोंमें, और महाभारत,वाल्मीकीय रामायण,अध्यात्मरामायणादि इतिहासग्रन्थनमें, इत्यादिअसंख्यआर्षग्रन्थनमें अजशशहरिणप्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानका व मांसभक्षणका विधान हजारों वाक्यनसें कराहुआहै ॥

उनसर्ववाक्यनको सनातनधर्मीपण्डितजन तो यथार्थही मानतेहैं अर्थात् प्रक्षिप्त नहींमानते, और केईक समाजीभाईभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींमानते किंतु यथार्थहीमानतेहैं परंतु बहुतसे नवीनसमाजीभ्राता उनवाक्य-

नको प्रक्षिप्त कहतेहैं, वो उनका कथन असत्यहीहै, यिह इसभक्ष्यानिर्णय-भास्करग्रन्थके आरम्भमेंही अनेकयुक्तिप्रमाणोंसें सिद्धअर्थ दिखलाया-जावेगा

शङ्का—केईपुरुष कहतेहैं कि-साधुमहात्मापुरुषोंको धर्मात्माजनोंको तो अजप्रभृतिपशुओंके वलिप्रदानका व मांसभक्षणका प्रकरणचलाना योग्य नहींहै ॥

समाधान—भ्रान्तिसें और नास्तिकतासें यिह उनका कथनहै-तथाहि कहताहूं सुनिये—

१ प्रसंगचलाना तो क्याहै हेभ्रातः अजआदिकोंके वलिप्रदान का व मांसभक्षणका तो वेदानुसारी वेदोंकेभाष्यग्रंथनमें सायणाचार्य्यआदिकों ने तथा स्मृतिआदिकधर्मशास्त्रोंमें मनु व्यास पराशर वसिष्ट आश्वलायन याज्ञवल्क्यप्रभृति महर्षिओंने और इतिहास पुराणादिकोंमें वाल्मीकी व्यास आदिमहर्षिओंने व श्रीरामकृष्णादिअवतारोंने अनेक २ वाक्यनमें विधान कराहुआहै, तथा उपनिषदादिकोंके भाष्यग्रन्थनमें श्रीशंकराचार्योंने विहित मांसके भक्षणका विधान कराहुआहै, श्रीभाष्यमें श्रीरामानुजस्वामीने भी विहित पशुका मारणा स्वर्गप्राप्तिका हेतु मानाहीहै, तथा श्रीस्वामीदयानन्द सरस्वतीजीनेंभी अपने संस्कारविधिग्रंथमें और सत्यार्थप्रकाशमें मांसभक्षण का विधान अनेकस्पष्टवाक्यनसें कराहुआहै ॥

तो अब विचार करिये कि, यदि साधुमहात्माको धर्मात्माजनोंकों मांसका प्रसंगभी चलाना योग्य न होता तो भगवद्व्यास आश्वलायन कात्यायनआदिकोंसें लेकर श्रीशंकराचार्य्य श्रीरामानुजस्वामी श्रीस्वामी दयानन्दसरस्वतीपर्य्यन्त परमपूज्यसाधुमहात्मा धर्मात्माजन वलिप्रदानका व मांसभक्षणका विधानही कैसे करसक्तेथे अर्थ यिह, व्यर्थकार्य का और दोषकारीकार्य्यका तो महर्षिसाधुधर्मात्माजन विधान नहींकरसक्ते इस्सें

निश्चयहोताहै कि, बलिप्रदानका और मांसभक्षणका विधान करना आवश्यकथा तो उक्त महर्षिसाधु धर्मात्माजनोंने व श्रीराम कृष्णादिक अवतारोंने विधान कराहै अतः (बलिप्रदानका व मांसभक्षण का प्रसंग चलाना साधुमहात्मा धर्मात्माजनोंको योग्य नहींहै) यिह कथन तो भ्रान्तिसेंहीहै ॥

—०—

२—भक्ष्याभक्ष्यकेखानेसेंजन्य धर्माधर्मके निर्णयलिये यदि साधुमहात्मा पुरुषोंको मांसका प्रसंग चलानाही योग्य नहींहै तो इसधर्माधर्मका निर्णय क्या असाधुमूर्खजनोंसें होसक्ताहै सो असाधुमूर्खजनोंसें कदापि निर्णय नहीं होसक्ता किन्तु साधुविद्वान्धर्मात्माजनोंसेंही सो निर्णय होसक्ताहै इसहेतुसें भी (मांसका प्रसंगचलाना साधुपुरुषोंको योग्य नहींहै) यिह कथन भ्रांति सें ही है ॥

—०—

जिनपुरुषोंको वेद और महर्षिओंके रचितस्मृतिआदिक धर्मशास्त्र निःसंशय प्रबलप्रमाणहैं अतः परममाननीयहैं वहपुरुष आस्तिक कहलायसक्तेहैं, वेदोंमें तथा स्मृतिआदिक धर्मशास्त्रोंमें तो बलिप्रदानका और मांसभक्षणका बहुत २ वाक्यनसें विधान कराहुआहै उनसें विरुद्ध जोलोक कहतेहैं कि--(बलिप्रदानका मांसभक्षणका प्रसंगभी चलाना योग्य नहींहै) ऐसे श्रुतिस्मृतिओंसें विरुद्ध कहनेवाले आस्तिक नहींकहलायसक्ते अतः उनका श्रुतिस्मृतिओंसेंविरुद्धकथन तो नास्तिकतासेंहीहै ॥

४—जोकेईपुरुष कहतेहैं कि-साधुमहात्मापुरुषोंको धर्मात्मजनोंको तो अजप्रभृतिपशुओंके बलिप्रदानका मांसभक्षणका प्रकरण चलाना योग्य

नहींहै और श्री रामानुजस्वामी भगवत्शंकराचार्य स्वामीदयानन्दसरस्वतीजीने उसका वेदानुसारी विधानकराहै तो वो श्री रामानुज स्वामी भगवत्शंकराचार्य स्वामीदयानन्दसरस्वतीजी क्या उनकी दृष्टिमें साधुमहात्मापुरुष नहींथे, तथा मनुव्यास वसिष्ट पराशर याज्ञवल्क्य आश्वलायन कात्यायन वाल्मीकी आदिक योगीन्द्रमहर्षिओंनेभी वेदानुसारी अपने२ धर्मग्रन्थनमें बलिप्रदान का और मांसभक्षणका विधान कराहै तो वो मुनियाज्ञवल्क्य वसिष्ट पराशर प्रभृतिभी क्या उनकी दृष्टिमें साधुमहात्मा धर्मात्माजन नहींथे हेमित्र-यिह उक्तमनु वसिष्ट याज्ञवल्क्यआदिकोंसेलेकर श्रीशंकराचार्य श्री रामानुजस्वामीआदिक महानुभावपुरुष तो साधुमहात्मापुरुषोंसेभी परममाननीय हुएहैं अतःउनसें विरुद्धकथन तो भ्रान्तिसें और नास्तिकतासेंहीहै, इससें वो माननीय नहींहोसक्ता ॥

शंका—स्मृतिइतिहासपुराणआदिकोंमें महर्षिओंने जीवहिंसाका और मांसभक्षणका निषेधभी कराहुआहै तो वो महर्षिओंके वाक्य क्या माननीय नहींहैं ॥

समाधान—मनु व्यास वसिष्ट याज्ञवल्क्यप्रभृति महर्षिओंके सर्ववाक्य माननीयहैं, महर्षिओंका कोईभीवाक्य अमाननीय नहींहोसक्ता, परंतु इसमें विचारकराचाहिये कि—

स्मृतिआदिकोंमें महर्षिओंने बहुतजगें तो देवतापितरअतिथिआदिकोंके उद्देशसें पशुहिंसाका विधानकराहै, ऐसीपशुहिंसाका स्वर्गादिकोंकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफल कहाहै, फिर देवता पितर अतिथिआदिकोंप्रति समर्पण करके शेषमांसके भक्षणका विधानकराहै, ऐसे मांसभक्षणसें निर्दोषताकहीहै, और विहितमांसके नहींखानेसें नरकादिकोंकी प्राप्तिरूप अनिष्टफल कहाहै ॥

और केईजगें हिंसाका मांसभक्षणका निषेधकेराहै, हिंसाका मांसभ-

णका अतिदोष कहाहै, हिंसाके मांसभक्षणके त्यागसें पुण्यबोधनकराहै, तो हेपाठको–उनमहर्षिओंके वाक्य उन्मत्तप्रलापवत् विरोधीहैं ऐसेनहीं, ऐसेनहीं, किंतु मनुव्यास वसिष्ट याज्ञवल्क्यप्रभृतिमहर्षि तो परमधर्मनिष्ठ योगीन्द्रहुएहैं अतःप्रमादिदोषोंसें रहितहुएहैं इस्सें उनमहर्षिओंके वाक्य विरोधी नहींहैं, क्योंकि उनवाक्यनका विषय भिन्नभिन्नहै सो मैं दिखलाताहुं देखिये ॥

महर्षिओंके जोवाक्य हिंसाका मांसभक्षणका निषेधकर्तेहैं, हिंसासें मांसभक्षणसें अतिदोष कहतेहैं, हिंसाके मांसभक्षणके त्यागसें पुण्य कहते-हैं, ऐसे२ सर्ववाक्यनका तो अविहित हिंसाका अविहितमांसके भक्षणका त्याग विषयहै ॥

और जो महर्षिओंके वाक्य देवता पितर अतिथिआदिकोंके उद्देशसें हिंसाका व देवताअतिथिआदिकोंको समर्पणकर्के मांसके भक्षणका विधा-नकर्तेहैं, देवताऽऽदिकोंके निमित्तसें करीहिंसाका श्रेष्ठफल कहतेहैं, देवकर्म-पितृकर्मआदिकोंमें मांसके नहींखानेसें नरकादिकोंकी प्राप्तिरूप अनिष्टफल कहतेहैं, ऐसे२ सर्ववाक्यनका विहितहिंसा, विहितमांसकाभक्षण विषयहै ॥

एवं अविहितहिंसाका अविहितमांसकेभक्षणका त्याग भिन्नविषयहै, और विहितहिंसा विहितमांसकाभक्षण भिन्नविषयहै, भिन्नभिन्नविषयवाले वाक्यनका विरोध नहींहोसकता अतः वो महर्षिओंके वाक्य अविवेकीज-नोंको विरोधीभास्तेहुएभी विरोधी नहींहैं इस्सें महर्षिओंके सर्ववाक्य मान-नीयहीहैं ॥

अथर्ववेदकी मुण्डकोपनिषद्–सत्यमेवजयते । मु॰ ३ ॥ खण्ड १ ॥ ६ ॥ अर्थ–सत्यही जयका हेतुहै अर्थात् सत्यसेंही श्रेष्ठधर्म व ब्रह्मलो-कादिकंजीतेजावेहैं ॥

अथर्ववेदकी प्रश्नोपनिषद्—**समूलोवा एष परिशुष्यति योऽनृतमभिवदति** ॥ प्रश्न६ ॥ १ ॥ अर्थ—भाग्यरूपमूलके सहित यिह पुरुषरूप वृक्ष सूकजाताहै जो झूठ बोलताहै अर्थात् मिथ्यावादी-पुरुष इसलोकके परलोकके सुखसें रहितहोजाताहै ऐसे सत्यके और मिथ्याके फलको जाननेवाला पुरुष हृदयमें सत्यव्रतको दृढकरकेंही लेखनीको ग्रहण कर्ताहै-- जोपुरुष सत्यमिथ्याके फलमें दृष्टिको न देकर कलमको उठातेहें वहपुरुष विद्वज्जनोंमें धर्मवेत्ता नहींकहलायसक्के अतः मांसविषयमें जैसाअर्थ श्रुतिस्मृतिओंमें लिखाहै वैसेहीअर्थको मैं दिखलाताहूं ॥

—o—

शंकासमाधानकर अर्थकेनिरूपणमें सुन्दरता और सुखसेंबोध होताहै अतः शंकासमाधानकर ग्रन्थकी रचना कीजावेगी—यहां शंकाकाकर्ता वेदस्मृतिओंके प्रतिकूलनिश्चयवालेको पूर्वपक्षीनामसें, और समाधानकाकर्ता श्रुतिस्मृतिओंके अनुकूलनिश्चयवालेको आस्तिकनामसें लिखेंगे ॥

—o—

पूर्वपक्षी—सात्त्विकआहारके विषयमें श्रीभगवान् ऐसाकहतेहैं—**आयुः सत्त्वबलारोग्य सुखप्रीतिविवर्धनाः ॥ रस्याः-स्निग्धाःस्थिराहृद्या आहाराःसात्त्विकप्रियाः ॥** गी-अ-१७ ॥८॥ आयुः उत्साह पराक्रम नीरोगता सुख और प्रसन्नताके बढानेवाला रसीला चिकना और बहुतकालतकशरीरमें बलरखनेवाला आनन्ददायक भोजन सत्त्वगुणवाले पुरुषोंको प्यारा लगताहै, जैसे बनके कन्द मूल फल श्यामाकादि मुनियोंके अन्न एवं गेहूंजौंआदिअन्न गोदुग्ध-दधि मक्खन इक्षुरस गंगाऽऽदि पवित्रनदीयोंका जल यहसब सात्त्विक-आहारहैं इसके विरुद्ध रोग आलस्यादिदोषोके उत्पन्नकरनेवाले आहार सब

राजस और तामस कहातेहैं जैसे लशुन प्याज मस्सरआदि, और सबसें बढकर भारतके धर्मधनआदि चारपुरुषार्थोंसें भ्रष्टकरनेवाले, भारतकेही दुर्भाग्यसें भारतमें प्रविष्टहुआ २ मद्य और मांसहै इसके सेवनसें मनुष्य मनुष्यतासें गिरकर राक्षस और पिशाच कहातेहैं और परमात्माको न जानकर निरंतर जन्ममरणके प्रवाहमें एवं नरकोंमेंही पडे रहतेहैं अतः ऐसेदुष्टभोजनको केवलइन्द्रियारामही कियाकरतेहैं और मुक्तिकी इच्छावाले सर्वदा सात्त्विकआहारही कियाकरतेहैं ॥

—०—

आस्तिक०—हेमित्र जबसें सृष्टि व वेद उदयहुएहैं तबसें वेदादिविहित मांसभक्षणका प्रचारहै, हेपाठको देखो प्रमाणांक २२० आदिकोंमें मनुआदिकोंनें स्पष्टकहाहुआहै किंवा-पहिले सत्ययुग त्रेताआदिक समयोंमें वेदविहित मांसकेभक्षणका प्रचार बहुतथा, इसीसें वेदवेत्ता महर्षिजन, तथा इक्ष्वाकु त्रिकुक्षि अम्बरीष दिलीप भरत नल श्रीरामचन्द्र युधिष्ठिरप्रभृतिधर्मात्माराजे, और सीतादमयन्तीआदिक सतीकुलीनस्त्रीजन भी वेदविहितमांसको खाते खुलातेरहेहैं, फिर केईवर्षोंसें जैनीसाधुओं के व्याख्यानोंद्वारा वैदिकमतवालोंमें वेसमझीसें जैनमतका असरहुआ तबसें वेदविहित बलिप्रदानका तथा मांसभक्षणका प्रचार प्रतिदिन कमती होता गया अतः पहिलेसमयोंकीदृष्टिसें इससमयमें बहुत कमहै ॥

यदि विहितमांसका भक्षण धर्मधनआदि चारपुरुषार्थोंसें भ्रष्टकरणेवाला होतातो उसको वेदवेत्तामहर्षिजन और इक्ष्वाकु रामचन्द्र युधिष्ठिरप्रभृति धर्मात्माजन कैसे खायसक्तेथे ॥

हेभ्रातः क्या उन धर्मात्मामहर्षि और महाराजोंके चारोंपुरुषार्थ नष्ट होगएथे, यिह नास्तिकोंसें विना कौन कहसकताहै, वेदविहितमांसके भक्षण सें क्या वो महर्षि और रामचन्द्र युधिष्ठिरआदि महाराजे राक्षस और पिशाच कहेजातेथे, क्या वो सर्वउत्तमब्राह्मण और महाराजे परमात्माको न

जानकर नरकमेंही पडेहैं, बहुत क्या इत्यादिक तुमारेलेख नास्तिकतासेंबिना लिखे नहींजासक्ते--

देखो प्रमाणांक २८१ आदिकोंको आदिसमयसें वेदविहितमांसके भक्षणका प्रचारहै भारतखण्डमें किसी देशान्तरसें प्रविष्ट नहींहुआ किन्तु भारतके दुर्भाग्यसें जैनमतका असरहोनेकर बहुतही अदीर्घदृष्टिवाले स्वल्प दृष्टि पुरुष वैदिकमतसें गिरपडेहैं, जो कि वेदस्मृतिआदिकोंमें मांसभक्षणके विधानोंको देखतेहुएभी वैदिकमतको नास्तिकतासें दुराग्रहकर बदलतेहैं ॥

भगवद्गीता--कट्वम्ललवणात्युष्ण तीक्ष्णरुक्ष विदाहिनः । आहाराराजसस्येष्टा दुःखशोकामय प्रदाः ॥ अ० १७ ॥ ६ ॥

अर्थ--अतिकटु अतिखट्टा, अतिलवण, अतिगर्म, अतितीक्ष्ण, अति रुक्ष, अतिविदाही, ऐसे आहार जो तत्काल पीड़ाशोक रोगोंके देनेवालेहैं सो राजसपुरुषोंको प्रियहैं अर्थात् सो राजसआहारहैं ॥

हेभ्रातः--यिह राजसेंआहारका गुणघट्टितलक्षण भगवत्नेकहाहै, सो यिहलक्षण मांसमें नहींहै अतः मांसको राजसआहार कहना अयुक्तहीहै क्योंकि, अजशशहरिणादिकोंका मांस अतिकटु नहीं, अतिखट्टा नहीं, तीक्ष्ण नहीं, रुक्ष नहीं, विदाही नहीं, पीड़ाशोकरोगदेनेवाला नहीं, क्योंकि, सर्व रोगोंका नाशकरणेवाला मांसका रसहै, यिह चरकसंहितामें कहाहै, तथा होर बहुतगुण मांसके चरकसंहिता निघण्टुरत्नाकरआदिकोंमें कहेहैं ॥

शंका-जब खटाई, वा अतिलवण, वा अतितीक्ष्ण मिर्चाआदिगेर कर वा अतिउष्ण खायाजावे तो मांस राजसआहार क्यों नहींहै ॥

समाधान-ऐसे तो खटाई अतिलवण अतिमिर्ची आदि गेरकर वा अतिउष्णभोजन घृतसहित मुंगकीदाल भातआदिक जोभी कुछ खाया पीयाजावे वोसब राजस आहार होजातेहैं अतः इतनेसें आप मांसको राजस आहार नहींकहसक्ते ॥

भगवद्गीता-यातयामंगतरसं पूतिपर्युपितंचयत् ॥
उच्छिष्टमपिचामेध्यं भोजनंतामसप्रियम् १७।१०

अर्थ - जिसको पकाय एकप्रहर व्यतीतहुआहै ऐसाअतिशीतलभोजन और जिसका रस जलगया वा निकासदिया ऐसा गतरसभोजन और दुर्गंधवाला, दिनान्तरका पकायाबासी, उच्छिष्ट और अशुद्ध अपवित्र भोजन तामसजनोंको प्रियहै अर्थात् वो तामसआहारहै ॥

शंका-तो क्या मांस अशुद्ध अपवित्र नहींहै ॥

समाधान-हेमित्र देखो प्रमाणांक १ आदिकोंको मनुस्मृति आदिक धर्मग्रन्थोंमें मांसको घृततैलकीन्याई शुद्धपवित्रकहाहै तोफिर कौनआस्तिक पुरुष विहितमांसको अशुद्धअपवित्र कहसक्ताहै औरभी इसविषयमें अधिक शंकाहुए विशेषसमाधान इसग्रन्थमें लिखाजावेगा ऐसे भगवत्के उक्तराजस तामसआहारके लक्षण मांसमें नहींहैं अतः यदि खटाई वा अतिलवण अति मिर्ची आदि नहींगेरें व नांही अतिगर्म खावें और नाहीं उच्छिष्ट वा बासीकरके खावें तो मांसको राजस तामस आहार कहना अयुक्तहीहै ॥

हेमित्र—सात्त्विकआहारके निरूपणमें भगवत्ने कन्द मूल फलगेहूं आदिकोंकी गणना नहीं की किंतु भगवत्ने सात्त्विकआहारका गुणघट्टित लक्षण कहाहै अतः उनगुणोंमेंसे जिसआहारमें थोड़ेगुणहों वो, थोड़ा सात्त्विकहै जिसमें अधिकगुणहों वो अधिक सात्त्विकहै, जिसआहारमें भगवत्के उक्त सर्वगुणहों वो पूर्णसात्त्विक जाननाचाहिये ।

पूर्वपक्षी—ऐसे कौनपुरुष कहसक्ताहै कि भगवत्के उक्त सात्त्विक आहारके गुण मांसमेंभीहै ॥

आस्तिक०—यद्यपि शास्त्रानभिज्ञपुरुष वा दुराग्रहवान्जन ऐसेनहीं कहसक्ता तथापि शास्त्रवेता सत्यवक्ता पुरुष कहसक्ता है जैसे सर्वशास्त्रवेता भीष्मपितामहजीने महाभारतमें कहाहै—

एवमेतन्महाबाहो यथावदसिभारत ॥ नमांसात्परमंकिञ्चिद् रसतोविद्यतेभुवि पर्व१३॥अ० ११६
७॥ क्षतक्षीणाभितप्तानां ग्राम्यधर्मरतात्मनाम् ॥ अध्वनाकर्शितानांच नमांसाद्विद्यतेपरम् ॥८॥ सद्योवर्द्धयतिप्राणान् ॥ पुष्टिमग्र्यांदधातिच नभक्ष्योऽभ्यधिकःकश्चि न्मांसादस्तिपरंतप ॥९

अर्थ—हेमहाबाहो युधिष्ठिर जैसे तूं कहता है यिह ऐसेहीहै कि भूमिमें कोईवस्तु मांससें श्रेष्ठ रसवाला नहींहै ॥७॥ व्रणवालेको, क्षयरोगसेंपीडित जनोंको मैथुनमें रागवालोंको, मार्गसे कृशहुएजनोंको, मांससे अन्यवस्तु श्रेष्ठहितकर नहींहै अर्थात् इनचारोंजनोंको मांसअतिहितकरहै ॥८॥प्राणोंको अर्थात् आयुको शीघ्रबढातेहै और अत्यन्तपुष्टिको करेहै, हेपरंतप युधिष्ठिर मांससेंश्रेष्ठ कोईखानेयोग्य वस्तुनहींहै ॥९॥

महर्षिचरकका रचित चरकसंहिता—

अतोऽन्यथाहितंमांसं बृंहणंबलवर्द्धनम् । प्रीणनःसर्वभूतानां हृद्योमांसरसःपरम् अ० २७॥३०५
शुष्यतांव्याधियुक्तानां कृशानांक्षीणरेतसाम् ॥

बलवर्णार्थिनांचैव रसंविद्याद्यथाऽमृतम् ॥३०६॥
सर्वरोगप्रशमनं यथास्वंविहितंरसम् । विद्यात्स्व र्य्यंबलकरं वयोबुद्धीन्द्रियायुषाम् ॥३०७॥

अर्थ-वहांपूर्वश्लोकमें जोकहाहै कि रोगसे मरेहुए बकरेआदिकोंका मांस, बाल वा बृद्ध अजआदिकोंका मांस, विषसे वा सर्पाऽऽदिकोंसे मरे हुएका मांस, इनमांसोंको न खावे (अतोऽन्यथा) उन मांसों से अन्यप्रकारका अर्थात् युवा नीरोग मारेहुए अजआदिकोंका जो मांसहै वो हितकारीहै, वीर्यका वर्द्धकहै, बलका वर्द्धकहै, अबमांसके रसके गुणकहतेहैं मांसका रस सर्व जीवोंको तृप्तकरेहै, हृद्यहै अतिरुचिरहै ॥३०५॥ क्षयरोगवालोंको और रोगी जनोंको; कृशजनोंको, सुष्टुरूपकी कामनावालोंको, मांसका रस अमृतके तुल्य जानना ॥३०६॥ जिसरोगमें जैसा बनाना चाहिये वैसा यथायोग्य बनाया हुआ मांसका रस सर्वरोगोंका नाशकरेहै, स्वरको आवाज को सुंदर करेहै, अवस्थाको इन्द्रियोंको आयुको बलकरणे वाला मांसका रसहै अर्थात् मांसके रससें आयु बुद्धिआदिक बलवान्होतेहैं ॥३०७॥

यद्यपि—भीष्मजीके और चरकसंहिताके वाक्य प्रबलप्रमाणहैं अतः इनसेभिन्न होर चिकित्साशास्त्रके अधिकप्रमाण लिखनेकी आवश्यकता नहींहै तथापि प्रसंगानुसार इसग्रंथमें होरभी चिकित्साग्रंथनके प्रमाण प्रमाणांक १३६ आदिकों में दिखलाय जावेंगे ॥

देखिये--गीतामें भगवत्ने सात्त्विकआहारके जो गुणकहेहैं भीष्म पितामहजीने और आर्षग्रंथचरकसंहिताऽऽदिकोंमें सोगुण मांसके वा मांस रसके कहे हैं और अत्यन्त पुष्टि व स्वरको सुंदर करना, शरीरके रंगका सुन्दर करना, आयुःइन्द्रियबुद्धिआदिकोंको बलदेना इत्यादिक अधिकगुण मांसके रसमें कहेहैं ॥

हेभ्रातः—भगवतूने सात्त्विकआहारके जो गुण कहेहैं वोगुण मांसमें व मांसके रसमें उक्तप्रमाणोंसें सिद्धहीहैं—

श्रुतिस्मृतिआदिकोंनेभी हजारोंवाक्यनसें विहितमांसके भक्षणका विधान-कराहुआहै, तथा विहितमांसकेभक्षणमें हजारों श्रेष्ठपुरुषोंके आचार रूप दृष्टान्तभीहैं और इस्में बहुतप्रबलयुक्तिआंभीहैं तो फिर श्रुतिस्मृतिआदिक धर्मपुस्तकोंमें जैसाअर्थ लिखाहै वैसेही सत्यअर्थको प्रकटकरना साधुमहा-त्माजनोंका उचितधर्महै—

और श्रुतिस्मृतिआदिप्रमाणोंसें तथा दृष्टान्तोंसें और प्रबलयुक्तिओंसें सिद्धअर्थको छिपाना वा बुद्धिपूर्वक उससिद्धअर्थका बदलना नास्तिकताहै क्योंकि, जिनको विश्वासहै कि, 'युक्तयोगीईश्वर व युंजानयोगिमहर्षिओंसें वेद व स्मृतिसूत्रग्रन्थ प्रकटहुएहैं, ऐसेविश्वासवाले आस्तिकपुरुष श्रुतिस्मृति सूत्रोंके अर्थको छिपा व बदल नहींसके,

अतः विद्वजनोंसें प्रार्थना कर्ताहुं कि-यदि कोईविद्वान् किसीविषयमें लेखलिखाचाहे तो उनकेलिये योग्यहै कि-सत्य व मिथ्याके फलका बोधक जो उपनिषद्वाक्य दिखाचुकाहुं उनवाक्यनके अर्थको स्मरणकरकेही कलमको ग्रहणकरें, क्योंकि सर्वधर्मों का मूल सत्यहै, ऐसेसत्यका त्याग-करने वाला पुरुष धर्मनिष्ठजनोंमें सम्मानको नहींपायसक्ता, व नांहीं वो धर्मवेता कहलायसक्ताहै ॥

जो साधनोंसें विना योगारूढहै उसको युक्तयोगी कहतेहैं, ऐसा एक ईश्वरहीहै। और जो साधनोंके अनुष्ठानकर योगावस्थाको प्राप्तहुएहैं वो युञ्जानयोगी कहजातेहैं जैसे कि-वसिष्ट पराशर याज्ञवल्क्य अगस्त्य भरद्वाजआदि हुएहैं इति ॥

अनुबन्धचतुष्टय

जोजानेहुए ग्रन्थके पठनादिकोंमें प्रवृत्तकरें वह अनुबन्ध कहेजातेहैं ऐसे 'विषयानुबन्ध' प्रयोजनानुबन्ध, अधिकारी।अनुबन्ध, संबन्धानुबन्ध, यिहचार अनुबन्धहोतेहैं वो, ग्रन्थकेआदिमें दिखलानेयोग्यहैं अतः दिखलाताहूं ॥

१—श्रुतिस्मृतिआदिकोंके विधिवाक्यनसें विहितअजशशहरिणादिकों का बलिप्रदान, व विहितमांसकाभक्षण, इसग्रन्थका विषयहै ॥

२—उसविषयद्वारा अधिक बुद्धिबल पुष्टिआदिकोंका लाभ और उनविधिओंकेपालनसें पुण्योत्पत्तिद्वारा सद्गति प्रयोजनहै ॥

३—आस्तिकगृहस्थजन अधिकारीहैं ॥

४ विषय और ग्रन्थका प्रतिपाद्यप्रतिपादकभाव सम्बन्धहै, अधिकारी और विषयका कर्तृकर्त्तव्यभाव सम्बन्धहै, फल और अधिकारी का प्राप्य प्रापकभाव सम्बन्धहै, इत्यादिक सम्बन्ध यथायोग्य जानलेने ॥

—०—

शंका—क्या जीवहिंसासेंभी पुण्य उदय व सद्गति होसकेहै -

समाधान—हां विहितहिंसासें अवश्यंहोनेहीहै, हेभ्रातृजनों प्रबलप्रमाणोंसें तथा प्रामाणिकदृष्टान्तोंसें, और युक्तिओंसेंभी यिहअर्थ सिद्धहीहै तथाहि दिखलाताहुं, ॥

१—देखो प्रमाणांक ५६ में श्रीरामानुजस्वामीभी वेदमंत्रसें विहित हिंसाका सद्गतिरूप श्रेष्ठफलही लिखतेहैं, हेपाठको एकतो वेदमंत्र सें लिखना, दूसरा वैष्णवोंके आदिआचार्य्य श्रीरामानुजस्वामी लिखने वालेहैं ऐसे प्रबलप्रमाणको देखकरभी यदि तुम्हारी शंका दूर नहीं होती तो और देखो प्रमाणांक ५७, व ६५, व ६६, व ७१, व ७४, व ७५, व १६२,

व २४२, व २४४, आदिकोंसें विहितपशुहिंसाकर धर्म और दोनोंकी सद्गति सिद्धहीहै—

इसीसें प्रमाणांक ४८ आदिबहुतप्रमाणोंमें विहितहिंसा, अहिंसारूपही मानीहै, जैसे मनुस्मृति-**यज्ञार्थंपशवःसृष्टाः, स्वयमेवस्वयंभुवा । यज्ञोऽस्यभूत्यैसर्वस्य, तस्माद्यज्ञेवधोऽवधः** ॥ अ॰ ५ ॥ ३९ ॥

इसश्लोककी टीकाओंभी प्रमाणांक ६१ आदिकोंमें दिखादीहैं-

अर्थ—यज्ञकी सिद्धिलिये आपब्रह्माजीने पशु रचेहैं, वो यज्ञ सबजगत् की वृद्धिका और ब्राह्मणक्षत्रियादिकोंके ऐश्वर्य्यकाकारणहै, इस्सें यज्ञमें जो वधहै वो अवधहीहै, अहिंसाहीहै क्योंकि, वो दोषकाकारण नहींहै ॥

हेपाठको—जैसे वृत्तिज्ञानके नाशसें होनेवाले स्मृतिज्ञानके कारण जो संस्कारहैं वह अतीन्द्रियपदार्थहैं, वैसेही शुभाशुभ कर्मोकर चित्तमें होने वाले सुखदुःखके और सुखदुःखके साधनोंके कारण जो 'पुण्यपापहैं' धर्मा धर्महैं वहभी अतीन्द्रियपदार्थहैं, ऐसेअतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्ष योगारूढ पुरुषोंकोही योगकर होसक्ताहै, अयोगीजनोंको नहीं ॥

इसीसें पुण्यपापमें नानामतवालेमनुष्योंके विवाद होतेहैं, जैसे शौचस्नानआदिकोंसें वैदिकमतवाले पुण्य और जैनमतवाले पाप मानतेहैं इसीसें जैनीसाधु ढूंढिएआदि वर्षरदोर वर्ष स्नानादि नहींकरते ॥

अयोगीजनोंको पुण्यपापका प्रत्यक्ष नहींहोसक्ता किंतु योगावस्थामें देखकर योगारूढमहर्षिओंने जो स्मृतिआदिशास्त्र रचेहैं, उनशास्त्रोंसेंही अयोगीजनोंको पुण्यपापका निश्चय होसक्ताहै ॥

जैसे अविहितहिंसाका, निषिद्धहिंसाका पापफल श्रुतिस्मृतिआदिकोंसें सिद्धहैं, वैसेही विहितहिंसाका दोनोंको सद्गतिरूप श्रेष्ठफल श्रुतिस्मृति-आदिकोंसें सिद्धहै, अतः वह आस्तिकजनोंसें अमाननीय नहींहोसक्ता ॥

विदितहो कि-इसग्रन्थमें जो पशुबलिदान व मांसविषयके प्रमाण स्थूलअक्षरोंसें दिखलाएहैं उनमें हरएक प्रमाणके साथहीप्रथम प्रमाणांक लिखदियाहै, क्यों कि---जिस्सें वहप्रमाण फिर जहां २ दिखलाना आवश्यकहो वहां२ बहुतजगें न लिखना पड़े, किंतु प्रमाणांक दिखलानेंसे प्रमाण देखा जाए ॥

२-देखो दृष्टान्त-महाराजादशरथके यज्ञमें रामजीकी माताकौसल्यानें आप तीन कृपाणोंसें अश्वका बलिदानकिया, महाराजारन्तिदेव नित्य मांससहितअन्नका दान करते रहे श्रीरामजीने चित्रकूटमें कृष्णमृगके मांससें देवतोंको बलिदानकर्केही कुटीकी प्रतिष्ठाकी, महाराजायुधिष्ठिरने भी इन्द्रप्रस्थ, देहलीमें मांसआदि भोजन खुलाकर ही सभास्थानमें प्रवेश किया, पापोंकी निवृत्तिलिये युधिष्ठिरके श्रीगंगाजीके तटपर यज्ञमेंभी ३०१ अजआदिपशुओंका बलिप्रदान किया गया, ॥

पांचोपांडव बनमें हजारोंमृगोंको मारकर मांसोंको खुलाते खातेरहे;

देखो प्रमाणांक २८१ को पुरातनऋषिओंके यज्ञनमेंभी मांसके पुरोडाश होतेरहे, तो इत्यादिक वो सबमहाशय सद्गतिओंकोही प्राप्तहुएहैं ॥

३-यद्यपि प्रबलप्रमाणोंके तथा दृष्टान्तोंके होते आस्तिकपुरुषोंको युक्तिकी अपेक्षा नहीं, तथापि अब युक्तिओंसेंभी विचारिये,—

रामलक्ष्मणादिअवतार, व परमधर्मनिष्ठ अगस्त्यादिमहर्षि, व और वेदवेता पुरुष उनहीकर्मोंमें विशेषतासें प्रवृत्तहोसक्तेहैं जो सद्गतिके देनेवालेहों, सोपरमपूज्यपुरुष उसमें प्रवृत्तहुए हैं अतः जानाजाताहै कि-विहितपशुबलि प्रदान सद्गतिकाही कारणहै ॥

आयुर्वेदविहित औषधोंके दानमें व सेवनमें, व्रणकृमि रुधिरकृमि मलकृमि दद्रुआदिरोगकृमि कूपकृमि इत्यादिअसंख्यजीवोंकी हिंसाद्वाराही पुण्य उदय होताहै ॥

हेभ्रातृजनों-यद्यपि इससमयमें प्रायः किसीको किसीकीभी सद्गति व दुर्गतिका प्रत्यक्ष नहींहै तथापि, देखो प्रमाणांक ३० को जबसें जैनमत का असर होनेकर वैदिकमतवालोंमें पशुबलिप्रदानका प्रचार दूरहुआहै, तब सें प्रतिदिन अधोऽधःपतनरूपही फल प्रत्यक्षदेखनेमेंआयाहै, इत्यादिक युक्तिओंसें व प्रबलप्रमाणोंसें तथा सद्दृष्टान्तोंसें विधिविहितहिंसा सद्गति का ही कारण सिद्धहै ॥

—o—

अब विद्वज्जनोंसें प्रश्नपूर्वक प्रार्थनाकी जातीहै सुनिए-

प्रश्न-श्रौतसूत्र गृह्यसूत्र स्मृतिआदिग्रन्थोंके कर्ता जो पुरातन महर्षिहैं वहभी क्या नवीनपण्डितोंजैसेही हुएहैं अथवा वह योगजन्य अतीन्द्रिय पदार्थोंके प्रत्यक्ष ज्ञानवाले योगारूढ़ हुएहैं ॥

इनमें प्रथमपक्ष कहो तो बस धर्माधर्म व योगशास्त्र व योगके साधन ध्यानादिकभी व्यर्थही सिद्धहोंगे उस्सें नास्तिकमतकोही पुष्पाञ्जलि देनी होगी क्योंकि पुरातन महर्षिओंकोभी ध्यानादिकोंकी परिपक्वतारूप योग व परमात्मा जीवात्मा प्रकृति धर्माधर्म, आदि अतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्ष नहीं हुआ तो नवीनपण्डितोंके योगारूढ़ता, व अतीन्द्रियपदार्थोंका प्रत्यक्ष तो हैही

नहीं, इस्सें उक्तअतीन्द्रियपदार्थोंकी सिद्धि नहीं होनेसें नास्तिकमत सिद्ध होगा ॥

यदि द्वितीयपक्ष कहो तो--उन परमपूज्यपुरुषोंके योगजमहत्त्वको विस्मृतकर्के लोकवासनासें, वा अधीरतासें, वा अन्याकिसीनिमित्तसें उन दीर्घदृष्टि योगारूढ महर्षिओंके विधिवाक्यनसें बाहिर क्यों होतेहो, उन परमपूज्यपुरुषोंके वाक्यनको क्यों छिपातेहो, ।

क्या उनको तुम अपनेजैसे महात्मा नहीं समझते हो, वा उनको क्या तुम्हारेजैसा धर्मज्ञान नहींथा, वा उनके आचारको क्या तुम शिष्टाचार नहीं समझतेहो ।

हेभ्रातृजनों--तुम्हारे ख्याल किदर लगेहुएहैं, चित्तको सावधानकर्के विचारिये कि-वो योगारूढमहर्षि योगजपरमधर्मनिष्ठ प्रसिद्धहीहैं तो उनके आचरणकों कौनआस्तिकपुरुष सदाचार नहीं कहसक्ता, ।

हेपाठको-ऋतम्भराप्रज्ञ होनेसें वो महर्षिही महात्मापदका वाच्यहैं, औरमेरेजैसे तो मानात्माहैं ॥

अथवा इससमयमें अपने२ ख्यालसेंही धर्माधर्म मानाजाताहै, पुरातन योगारूढ महर्षिओंके तो कहां श्रीस्वामिदयानन्दसरस्वतीजीकेभी वाक्यनका सम्मान नहींकराजाता, हे प्रियभ्रातृजनो-देखो संस्कारविधिग्रन्थमें स्वामीजी मांसभक्षणविषयका परमप्रमाण बृहदारण्यकउपनिषत्का मंत्र, तथा आश्व-लायन गृह्यसूत्र लिख गएहैं, फिर उसका अर्थभी मांसभक्षणही लिखगएहैं, तो आप स्वामिजीके लेखका अनादर क्यों करतेहो, व अपनी जिदोजिदीकर क्यों क्षति पहुंचातेहो देखो प्रमाणांक ३२६में श्रीबालगंगाधरतिलकजीके भाषणको,तिलकमहाराजकेभी भाषणसें सिद्धहै कि जैनउपदेशकोंके कथनसें ही वेदविहित पशुयज्ञ व मांसभक्षण छोडा गयाहै, तो उनसबमहानुभावोंके

वाक्यनका मान न रखकर आप प्रक्षिप्त२ क्यों कहतेहो,

समाजी महात्मा स्वामीदर्शनानन्दजीनें 'स्थावरजीवविचार' कतावके सफ़ा १३ पर लिखाहै कि–सत्यार्थप्रकाशके आठवेंसमुल्लासमेंभी किसीमहात्माने इस मजमूनको मिलायाहै स्वामीदर्शनानन्दजीके इत्यादिलेखसेंभी जाना जाताहै कि–समाजीभाईओं ने सत्यार्थप्रकाश का पाठ कहीं अधिक कहीं न्यून करडालाहै ॥

प्रार्थनासें कहताहुं कि–ऋतुम्भराप्रज्ञ दीर्घदृष्टि महर्षिओंके बराबर अयोगिजनोंकी बुद्धि नहींहोसक्ती अतः जिदोजिदीको छोडकर ऋतुम्भराप्रज्ञ महर्षिओंके विधिवाक्यनके अनुकूलही वर्ताव परमहितकर होगा ॥

पदोंके	अर्थ
अज–छाग	बकरा
शश	खरगोश
प्रभृति	आदि
मत्स्य	मछी
आर्ष	वेद व ऋषिओंका
ध्येय	जिसका ध्यान करें वो
ऋतम्भराप्रज्ञ	संप्रज्ञात योगावस्थामें जो ध्येयका संशयविपर्ययसें रहित यथार्थ प्रत्यक्षज्ञान हुआकरताहै उससत्यार्थको विषयकरने वाले प्रत्यक्षज्ञानकी ऋतम्भरा संज्ञाहै, वो ऋतम्भरा 'प्रज्ञा' ज्ञान जिनमहानुभावोंके उदयहुआहै वो ऋतम्भराप्रज्ञ, इसनामसें कहजातेहैं

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	श्रागण	श्रीगण
२	२१	सिद्धम	सिद्धम्
३	१	पदाथा	पदार्थों
४	५	ध्यय	ध्येय
५	५	आषको	आपको
५	१५	गृस्थ	गृहस्थ
७	१६	स्नेद्रा	स्नेहा
६	२	योबल	योगबल
१५	१	दि	यदि
१६	१६	मूल	भूल
१६	२	वदन्तै	वदन्ति
२०	१७	ग्रन्पन	ग्रन्थन
३२	५	रव्याति	ख्याति
३२	७	प्रज्ञान	प्रज्ञात
३४	२०	गृह्म	गृह्य
३५	१	बृंहदा	बृहदा
३५	२३	नहाथा	नहींथा
३८	३	ग्रन्थों	ग्रन्थ
४१	१७	गृध्य	गृह्य
४३	१७	वेममझी	वेसमझी
४४	१	गोगज	योगज
४६	८	पितरोंके	पितरोंका
४७	५	ब्राह्मा	ब्राह्म
४८	१५	अतिथि समपर्ण	आतिथि समर्पण
४६	२	देवादी	देवादि
४६	८	श्रति	श्रुति
	१६	वद	वेद
५०	२१	तानंमत्र	तीन मंत्र
५१	१	लखतो यहं	लिखातोयहां
५२	२१	बाधेक	बोधक
५३	५	हाकेर	होकर
५८	८	सवर्प्र	सर्वप्र
५६	१२	उपदशे	उपदेश
६०	२	गाबो	गावो
	१५	हीहै	हीहैं
६२	५	महिंम	महिंसा
६३	७	अल्प	अल्प
	१८	हिंसाजन्य	हिंसाजन्या
६६	१	दवे	देव
६७	७	यज्ञस्य	यज्ञोऽस्य
७४	१२	अग्निषे	अग्नीषो
७६	४	ब्रह्मणो	ब्राह्मणो
	१२	तोवे	ताव
८०	१	श्राद्ध	श्राद्धे
	२	सुत्सृजेत्	मुत्सृजेत्
	१५	युधिष्ठर	युधिष्ठिर
	२१	दोप	दोष
८२	४	परन्तु	परंतु
	६	अर्यदि	अर्थादिखा
८४	१६	द्विज	द्विजः

	२४	कर	करें
८५	२	युक्त	नियुक्त
८७	२३	ब्रह्मचारी	ब्रह्मचारी
८८	३	॥५॥	॥१॥
८९	१६	ब्राहो	बाहो
९४	१२	रूष	रूप
९६	२१	ब्राह्मणौ	ब्राह्मणो
१०४	९	उनमसेंऐंक	उनमेंसेंएक
१०५	२२	निपेध	निषेध
११२	४	थर्का	थेका
११४	८	श्रति	श्रुति
	२०	ह	है
१२३	५	सारुय	सांख्य
१२४	४	शास्त्र	शास्त्र
१२९	१३	रूष	रूप
१३३	१	दशर्न	दर्शन
	६	त्रिशं	विंशं
	९	अपराध	अपराध
१३४	८	जोपची	जोपची
१३५	१	हाक़िर्मे	हीकर्मे
	२०	ऐसें	ऐसे
	२१	अर्चिमा	अर्चिर्मा
१३९	१४	कृमि	कृमि
१४०	१०	क्रतह	कर्तेहैं
१४२	१४	छिपा	छिपा
	१९	भावतीय	भागवतीय
१५२	२३	ब्राह्मणाकों	ब्राह्मणोंका
१५३	१५	व्यासादिकें	व्यासादिकों
	१५	रजोंने	राजोंने
१५४	१९	कारस	कारसें
१५७	८	कर्तेहैं	कर्तेहैं
१५८	४	भृङ्गी	भृङ्गी
१५९	१	जाताह	जाताहै
१६०	२१	निवार	नीवार
१६२	५	थोडेस	थोडेसे
१६७	२	ह्रुए	हुए
	१६	मैंटेके	मेंढके
१६८	१७	दयान्द	दयानन्द
१७१	६	रज्ञा	राज्ञा
१७२	२	लिंखैंह	लिखेहैं
१७४	६	दस्याप	दस्योप
	१२	भालभेत	मालभेत
	१५	लुभेत	लभेत
१७५	६	ब्रवीत	ब्रुवीत
१७७	५	जाकेथन	जोकथन
१७८	२	ब्रवीत	ब्रुवीत
	७	सके	सकें
	१७	मत्रों	मंत्रों
१८०	६	एवच्छागः	एषच्छागः
१८१	५	याग्ये	योग्य
१८४	२	हीहो	हीहै
१९२	१०	कुकन्लू	कुल्लूक
१९३	२०	दोपं	दोष

१६४	१६	समार्षीन	समीचीन
१६६	३	विनार्मा	विनाशी
२०२	६	मसमें	माससें
	२०	व्यनज	व्यंजन
२०३	११	वाकप्रमार	वाक्प्रसार
२०५	४	चाहतहैं	चाहताहै
२०६	१०	टींनि	र्दांनि
	११	सान्ताने	सान्तानि
२०७	१४	दोप	दोष
	१५	त्राक्य	वाक्य
२०६	८	मांराको	मांसको
२०८	३	अष्टरय	अष्टस्य
२०८	४	पालं	पलं
२१०	५	कां	को
२१२	१५	दृष्टान्तानूखलुदार्शितुंच	दृष्टान्ता।नभिधातुमेव
२१३	१६	भाष्मजी	भीष्मजी
२१४	२	।सद्ध	सिद्ध
२१७	२	हिसां	।हिंसा
	५	शास्त्रों	शास्त्रों
२१८	६	रेभे	रेमे
२१६	६	वामाय	वासाय
	१३	हित्व	हित्वा
२२०	३	मांके	मांसके
	१०	अर्य	अर्थ
२२२	१	मेमर्ता	मेमर्तो
२२५	६	आत	आज
२२६	२	हुकम	हुकम
	५	आरै	और
२२७	४	परिग्रहा	परिग्रहो
२३०	१३	इदमेद	इदमेक
२३१	७	नजा	प्रजा
२३४	४	यथाक	यथाके
२३६	१	पत्रसें	पात्रसें
२३७	३	परीत्रा	परीचा
२३८	१६	कमृग	केमृग
२३८	१७	ब्राह्मणों	ब्राह्मणों
२४१	८	मांसनं	मासनं
२४८	६	कहमी	कहामी
२५०	१३	पूर्वर्च।	पूर्वपची
२५१	५	पचाका	पचीका
२५२	१	स्हना	रहना
	१६	नचिाहिये	नीचाहिये
२५४	१७	रचेहैं	रचेहैं
	२२	मेंसें	सें
२६०	६	स्मृओं	स्मृतिओं
२६२	३	ऽथार्धर्मः	ऽर्थोधर्मः
	६	होंगा	होगा
	१८	ता	तो
	२०	वुके	चुके
२६३	३	श्रुति	श्रुति
२६४	७	वातप्ता	वातप्तो

	११	तृतिय	तृतीय
२६६	१२	वहां	वहां
२६७	१६	रहनी	रहने
२६८	१२	यया	यथा
२७५	८	न्य	ब्य
२७६	८	शगीर	शरीर
२७७	२०	हे	है
२७८	४	क्रतुमें	ऋतुमें
	२२	पक्र	पका
२८०	१	जीवनन	जीवन
	२१	ऍवं	एवं
२८१	१२	जवि	जीव
२८५	६	भूलक	भूलकर
२८६	८	आंत्र	आंव
२८९	२०	रागेके	रोगके
	२१	सकल	सफल
२९६	१४	जा	जो
२९७	९	वया	क्या
२९९	७	सादा	सर्वदा
३०१	७	वेदवतो	वेदवेता
३०२	४	दुगार्कुड	दुर्गाकुंड
	९	ज्वला	ज्वाला
३०६	११	•यते	श्रूयते
३०७	२१	रहेह	रहेहैं
३०८	१	मिथाला	मिथिला
	१०	जट	जड़
	२०	श्रति	श्रुति
३११	१४	कसोथ	केसाथ
३१३	१६	महारजे	महाराजे
३१६	२	रवहशी	क्रूरवहशी
	३	तक्त	ताक्त
३२०	२०	पौत्रों	पौत्रों
३२८	२०	विघातान	विधताने
३२९	५	त मारा	न मारा
३२९	५	पादैश	पैदाइश
३३०	१२	०००	१०००
३३१	३-८	पादैश	पैदाइश
	१७	प्रत्पुत	प्रत्युत
३३२	२२	जीवन्मुक्त	जीवन्मुक्त
३३८	६ ९	तथापि	तथापि
३३९	१	ग्रन्यका	ग्रन्थका

शुद्धि भूमिकाऽऽदिकी

१	२	क्लेश	क्लेश
२	११	म्मृति	स्मृति
३	७	मांम	मांस
१४	१४	पदार्थं	पदार्थ
४	१०	नारितक	नास्तिक
	११	मांम	मांस
६	२१	आलरयादि	आलस्यादि

ओम्

भक्ष्य निर्णय भास्कर

श्रीगणनाथायनमोनमः श्रीसरस्वत्यैनमोनमः ।

ध्याकरबन्दोताईशानं सबतेअधिकजोशक्तिमानं ।

हमरिधियोंकाप्रेरकजोई, सर्वकर्मफलदातासोई ॥

अथनिर्विघ्नग्रन्थकी समाप्तिलिये शिष्टाचारसें प्राप्त मंगलाचरणको प्रथम दो श्लोकोंसें कर्तेहैं ॥

ध्यात्वावन्देतमीशानं यःसर्वाधिकशक्तिमान् ।
धियोनः प्रेरयेद्यस्तु सर्वकर्मफलप्रदः ॥१॥
अत्रिकश्यपभृग्वाद्या येषांलोकेष्विमाःप्रजाः ॥
धर्मप्रवर्तकान्वन्दे सर्वास्तानपिसादरम् ॥२॥

टीका—उस परमेश्वर को ध्यानकर्के मैं वन्दना कर्ताहुं जो सर्वतें अधिकशक्तिमानहै व जो हमारीबुद्धिओंको प्रेरे है क्योंकि सर्वजीवोंको सर्वकर्मोंके फलोंका देनेवालाहै अर्थात् सर्वकर्मोंके फलभोगवानेकेलिये सर्व जीवोंकी बुद्धिओंका प्रेरक है ॥ १ ॥ भूआदि लोकोंमें जिनोंकी यिह प्रत्यत्त सन्तानाहैं ऐसेजो अत्रिकश्यप भृगु वसिष्टादि महर्षिजन धर्मोंके प्रवर्तकहैं उनसर्वयोगीन्द्र महर्षिओंकोभी मैं आदरसें वन्दना कर्ताहुं ॥२॥

ग्रन्थरचनाके हेतुको बोधनकर्तेहुए ग्रन्थके रचनकी अब प्रतिज्ञाकर्तेहैं ॥

विवदन्तेहिभक्ष्येषु तमसारुद्धबुद्धयः ॥ उदयामि ततश्चण्डम् भक्ष्यनिर्णयभास्करम् ॥ ३ ॥

टीका—तमकीन्याई तमोगुणसे वेष्टितबुद्धिवालेपुरुष अजशशहरिणाऽऽदिकोंके भक्ष्यमांसोंमें विवादकर्तेहैं, विवादसें अतिक्लेश पाते हैं उसहेतुसें चण्डसूर्यवत् तमकोदूरकरणेवाले भक्ष्यनिर्णयभास्करग्रंथको मैं उदयकर्ताहूं। इसग्रंथमें तीन विभागहोंगे उनमें प्रथम प्रमाणप्रकाश द्वितीयदृष्टान्तप्रकाश तृतीययुक्तिप्रकाश, नामसें होगा ॥३॥

हेपाठको—अन्यायसें सहायताका नाम पक्षपातहै जब किसीमतका वा पुरुषका पक्षपातहोताहै तब सत्यअर्थका निर्णय नहींहोसक्ता किंतु तब अवश्यंही अन्याय मिथ्याभाषणादि होतेहैं सो महापापहै इस्से पक्षपातको त्यागकर आर्षमतानुसारी यिहग्रन्थ रचियेहै, यिहअबकहतेहैं ॥

पक्षपाताद्भवेत्पापं पुण्यंनिष्पक्षपाततः । निष्पक्षपातमाश्रित्य लिखाम्यार्षमतानुगम् ॥४॥

टीका—पक्षपातसें पाप और पक्षपातके त्यागसें पुण्यउदयहोताहै इस्से निष्पक्षपातको आश्रयकरके, आर्षमतका वेद व ऋषिओंके मतका अनुसारीग्रंथकोमैं लिखताहूं ॥४॥

सर्वसांसारिक सुखसें विरक्तहुए जो केवलपरमात्माके ध्यानाभ्यासपरायणहैं उनपुरुषोंके खानेयोग्यअन्नको अबप्रथमकहतेहैं।

दृष्टश्रुतार्थेषुविहवीतरागा विश्रान्तिमिच्छन्तिपरावरेये । तैःस्निग्धमन्नंमृदुभक्षणीयं वेदेमनोह्यन्नमयंप्रसिद्धम् ॥५॥

टीका—स्त्रीपुत्रपति, धनभूमिगृह शब्दस्पर्शरूपरसादिक इष्टपदार्थों में और इन्द्रलोकादिकोंके दिव्यश्रुतविषयोंमें विरक्तहुए जोपुरुष परमात्मामें चित्तकी समाधिरूपास्थितिकोचाहतेहैं अर्थात् दृढवैराग्यसें ध्यानाभ्यास परायणहैं, इसजगतमें ऐसेनिवृत्तिमार्गवाले उनमनुष्योंने, स्निग्ध, गोके घृतदुग्ध आदिकोंसें मिश्रित मूंगदाल भातआदिक कोमलअन्न खानाचाहिये क्योंकि छान्दोग्यउपनिषदमें मनको अन्नमय कहाहै अतः जैसा २ कोमल वा बलिष्टपौष्टिकभोजन कराजाताहै वैसा २ मन होजाताहै, कोमलभोजनकरणें सें चित्तभी कोमलहोजाताहै, कोमलहुए चित्तको दीर्घकाल अभ्यासकर योगधारणामें स्थिर कर सकीताहै, अतः वीतराग ध्यानाभ्यासीपुरुषोंने अतिपौष्टिक मांसभोजनको त्यागकर दालभातदुग्धादिक कोमलआहार कराचाहिये, फिर धारणाकी दृढतासें अनन्तर ध्यानकी परिपक्कतालिये दालभातकाभी त्यागकर्के जलसेंमिश्रित, दुग्धकोहीपीवे, देखो महाभारत—

अपःपीत्वा पयोमिश्रा योगीबलमवाप्नुयात् ॥

पर्व १२ ॥ अ० ३०१ ॥ ४५ ॥ अर्थ—दुग्धसेंमिश्रितजलको पानकर योगाभ्यासीपुरुष, योगबलकों, चित्तस्थित करणेके बलकों प्राप्तहो ।

गोरक्षशतक—**अङ्गानांमर्दनंकृत्वा श्रमसंजातवारिणा । कट्वम्ल लवण त्यागी क्षीरभोजनमाचरेत् ॥५३॥**

अर्थ—प्राणायामादिकोंके प्रयत्न कर जो पसीना आवे उस पसीने के जलसें उर पृष्ठ उदर बाहुआदिअंगोंका मर्दनकर्के, कटु खट्टा लवणको त्यागकर योगाभ्यासीपुरुष दुग्धका भोजनकरे ॥

अब विचारिये कि जब निवृत्ति मार्गवाले योगाभ्यासीकोलिये कटु खट्टा लवनकाभी श्रीगोरक्षनाथजीने त्याग कहाहै तो उसलिये मांसादिकों-का खाना कैसे उचित होसक्ताहै

प्रश्न—ध्यानाभ्यासको निवृत्तिमार्ग क्यों कहतेहैं—

उत्तर—योगावस्थामें स्थाणुकीन्यांई शरीरभी बाहु ग्रीवा करचरणादिकोंके व्यापारसें निवृत्तहोताहै, और श्रोत्रत्वक्नेत्रआदिक इन्द्रियभी स्वस्व व्यापारसें निवृत्तहोतेहैं, और देशकालस्वशरीरआदिकोंको विस्मृतकर्के एकध्ययमात्रमें स्थिरहुआ चित्तभी अन्यसर्वादिव्यादिव्य विषयोंसे निवृत्त होताहै, अर प्राणअपानआदिकभीअपने २ व्यापारसें निवृत्तहोतेहैं, अतः ऐसेयोगकी ध्यानाभ्यासरूप साधनावस्थामें क्रम२सें शरीरके करचरणादिक अंगोंकोभी श्रोत्रत्वक् नेत्रआदिक इन्द्रियोंकोभी प्राणअपानआदिकोंकोभी चित्तकोभी स्वस्वव्यापारसें निवृत्त कराजाताहै अतः ध्यानाभ्यासको निवृत्ति मार्ग कहतेहैं ॥

सो योगाभ्यासरूप निवृत्तिमार्ग यद्यपि वैराग्य उदयहुए चारोंआश्रमों का धर्महै तथापि वानप्रस्थआश्रमका और संन्यासाश्रमका ग्रहण तो वैराग्य हुएहीयोग्यहै अतःवानप्रस्थका संन्यासीका साधुमात्रका तो यिहानिवृत्तिमार्ग नियत आवश्यक धर्महै, इस्से वानप्रस्थ संन्यासी साधुमात्रने अतिपौष्टिक मांसाहारको त्यागकर्के दालभात दुग्धका मिताहारही करणायोग्यहै—

प्रश्न—यदि साधुमात्रने मृदुमिताहारही करणायोग्यहै तो वहुतसें साधु योगी कहलातेहुएभी मांसभक्षण क्यों कर्तेहैं

उत्तर—उनका नाम योगीहै परन्तु वो योगके लक्षणको, योगके अवान्तरभेदोंको, योगके साधनोंको योगके विघ्नोंको, योगके अवान्तरफल को योगके मुख्यफलको योगाभ्यासमें पथ्यअपथ्यको नहींजानते अतः अज्ञानसें मांसभक्षणकर्तेहैं ॥

ऐसे योगीओंसों मैंभी प्रार्थना कर्ताहूं कि—हेभ्रातृगण तुमारा योगी नामहै इस्से आप कृपया योगके लक्षणादिकोंको योगाभ्यासमें पथ्यापथ्य

को योगग्रन्थनमें देखो —श्रीगुरुगोरक्षनाथजीनेभी उक्तश्लोकमें योगाऽभ्यासी लिये लवणकाभी त्यागकर्के दुग्धही भोजनकरणाकहाहै अतः आपको मांसका त्यागकरणाहीयोग्यहै क्योंकि—आपप्रवृत्तिमार्गको त्यागचुकेहैं इस्सें मांसको त्यागकर मृदुमिताहार कर्तेहुए निवृत्तिमार्गपरायणहोना आपकोयोग्यहै ॥५॥

प्रश्न यदि निवृत्तिमार्गवाले विरक्तजनोंने दालभाताऽऽदिक कोमल भोजन कराचाहिये तो प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंने कैसाभोजन करणा योग्यहै, इसकाउत्तर अब कहतेहैं—

दारासुत स्वामिसुतादिसक्ता गोऽजाधरा धाम-धनादिरक्ताः ॥ येकर्मिणोह्यार्षमता नुगास्तै र्मेध्यंपलंवृष्यमपीहभोज्यम् ॥६॥

टीका—स्त्रीपुत्रपतिकन्याभ्राता सासूसुसरआदिकोंमें आसक्त, गौबकरी हस्तीअश्व रथादिकोंमें तथा भूमि गृह धनादिकोंमें रागवाले जोपुरुष संध्योपासन अग्निहोत्रादिककर्मकरणेवाले वेद व ऋषिओंके मतानुसारीहैं ऐसे उन प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंने 'मेध्य' शुद्ध पवित्र, वीर्यवर्द्धक अतिपुष्टिकारक मांसभी भोजनकराचाहिये ॥

विदितरहेकि—सत्यधर्मानुकूल शरीरकी प्रवृत्तिसें, नेत्र घ्राण कर चरणादिक इन्द्रियोंकी प्रवृत्तिसें लाभाऽलाभविषयक विचारादिरूप चित्तकी प्रवृत्तिसें, जो धनका उपार्जनहोवे उस धनसें उक्तत्रिविध प्रवृत्तिमय पंचम हायज्ञोंका करणा, अपनेआश्रितबालवृद्धादिकोंका पालन, और संन्यासादि-आश्रमिओंका पालन, धर्मानुसार संततिका उत्पादन, इत्यादिक प्रवृत्तिमार्ग है क्योंकि यह शरीरइन्द्रियमनकी प्रवृत्तिसें सिद्ध होनेवाला है ॥

हेपाठकभ्रातः—यद्यपि निवृत्तिमार्ग अत्युत्तमहै ॥

तथापि—बालवृद्धआर्तजनोंउपरि उपकारक होनेसें, और निवृत्तिमार्ग वाले संन्यासादिआश्रमोंकाभी मूल होनेसें आधारहोनेसें, अन्नवस्त्रादिकोंकी सेवाकर षष्ठांशपुण्यका भागीहोनेसें, गृहस्थाश्रमीओंका प्रवृत्तिमार्गभी अत्युत्तमहै ऐसे गृहस्थजनोंने वीर्यवर्द्धक अतिपुष्टिकारक पवित्रमांसभोजनभी करणा आवश्यकहै ॥

पूर्वपक्षी०—कोई मांसको भी शुद्ध व पवित्र कहता है ॥

आस्तिक०—जिनोंने धर्मशास्त्रों को सम्यक्नहीं विचारदेखा वा दुराग्रहवालेहैं सो विहितमांसको अशुद्ध कहते हैं, धर्मशास्त्रोंमें तो श्वानके चण्डालआदिकों केभी मारे हुए अजशशहरिणादिकोंका मांस घृततैलकी न्याईं शुद्धहीकहाहै ॥

अब मांसकी शुद्धताके पवित्रताके प्रतिपादकप्रमाणोंको प्रथमदिखलाताहूं॥

ऋग्वेदसंहिता प्र० १—**मेधंशृतपाकंपचन्तु ॥**

अष्टक ३॥ मं० १॥ सूक्त १६२ ॥१०॥

इसमन्त्रपर सायणभाष्य प्र० २—**मेधंमेध्यंयज्ञार्हंपश्ववयवं शृतपाकं देवयोग्यपाकोपेतं यथाभवतितथा-पचन्तु ॥** अर्थ—पकानेवालेपुरुष यज्ञके योग्य पवित्र पशुके अवयव मांसको पूरापाकवाला पकावें अर्थात् देवतोंके योग्य जैसापाक होताहै वैसा पकावें ॥

मनुस्मृति प्र० ३—**श्वभिर्हतस्ययन्मांसं शुचि तन्मनुरब्रवीत् ॥ क्रव्याद्भिश्चहतस्यान्यै श्चण्डाला**

दैश्चदस्युभिः ॥ अ० ५॥१३१॥ अर्थ--कुत्तेआदिकोंकर मारेहुए और चोरचण्डालआदिकोंकर मारेहुए अजआदिकोंका जो मांसहै उस मांसको मनुजी शुद्ध कहते भए अर्थात् ब्राह्मणक्षत्रियादिकोंकर मारे हुए अजआदिकोंके मांसका तो क्या कहनाहै श्वानचंडालादिकोंकर मारेहुए अजआदिकोंका मांसभी शुद्धहै ॥

बृहत्पाराशरीय धर्मशास्त्र प्र० ४—क्रव्याद्यैःसार मेयाद्यै र्हतंमृगादिकंहरेत् ॥ इदंशाकवदिच्छन्ति पवित्रं मुनिसत्तमाः॥ अ० ४॥३२१॥

अर्थ· कच्चामांसखानेवाले श्वानआदिकोंने मारेहुए मृगआदिको लेआवे इसको शाककीन्याईं पवित्र श्रेष्ठ मुनिजन कहते हैं ॥३२१॥

उसीका प्र० ५—क्रव्यादाद्यैर्हतंमांसं सर्वदाशुचि-कीर्तितम् ॥३३१॥ अर्थ-महर्षिपराशरजी कहते हैं कि श्वान बाज आदिकोंकर मारेहुए मृगादिकोंका मांस सर्वदाशुद्ध धर्मशास्त्रोंमें कहाहै ॥

याज्ञवल्क्यस्मृति प्र० ६—शुचिगोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृति-स्थंमहीगतम् ॥ तथामांसंश्वचण्डाल क्रव्यादादि निपातितम् अ० १॥१९२॥

अर्थ—अपने शुद्धरूपसे स्थित, गौतृप्तिपरिमाणवाला महीगत जल शुद्धहै तथा श्वानचण्डालआदिकोंने मारेहुए मृगादिकोंका मांस शुद्ध है॥

लिखितस्मृतिप्र०७ आमंमांसंघृतंक्षौद्रं स्नेहाश्चफल संभवाः अन्त्यभाण्डस्थिताह्येते निष्क्रताः

शुचयःस्मृताः ॥६३॥ अर्थ—कच्चामांस, घृत, शहत, नारिकेल आदिफलोंके तेल, यिहचारों चण्डालके भाण्डेमें स्थितहों तो चण्डालके भाण्डेसें निकालेहुए यिहशुद्ध स्मृतिओंमें कहेहैं अर्थात् चण्डालके भाण्डेसें निकालाहुआभी कच्चा मांसघृततेलशहतकी न्याई शुद्धहीहै ॥

साक्षात्ब्रह्माकेपुत्र अत्रिमहर्षिकी अत्रिस्मृति प्र० ८

आर्द्रमांसंघृतंतैलं स्नेहाश्चफलसंभवाः॥
अन्त्यभाण्डास्थितास्त्वेते निष्क्रान्ताःशुद्धि-
माप्नुयुः ॥२४६॥

अर्थ—अशुष्कमांस घृततेल बादामआदिकोंके रोगन, यिह चंडालके भांडेमेंरखेहुएभी चंडालकेभांडेसें निकालेहुए शुद्धहोतेहैं, हेपाठक—देखो घृततेलके समान मांसको शुद्धकहाहै

साक्षात्ब्रह्माकेपुत्र वसिष्ठजीकी वसिष्ठस्मृति प्र० ६—

श्वहताश्चमृगावन्याः पातितंचखगैःफलम् ।
बालैरनुपरिक्रान्तं स्त्रीभिराचरितंचयत् ॥
परिसंख्यायतान्सर्वान् शुचीनाहप्रजापतिः ॥
अ० ३ ॥४४॥४६॥

अर्थ—श्वानोंने मारेहुए बनकेमृग, पक्षीओंने गिराए फल, बालोंने पकड़ा खाद्यवस्तु, स्त्रीओंने किया गृहका आचरण, गिनकर्के उनसर्वको ब्रह्माजी शुद्धकहते भए ॥

जब मुनिवर भरद्वाजजीने ससैन्य भरतजीको निमंत्रणकराथा तब योबलसें भरद्वाजजीने देवतोंका आह्वानकर्के नानाप्रकारके मांसादिक भोज्यपदार्थ रचे, तब भरद्वाजजीनेकहा—वाल्मीकीयरामायण प्र० १०

मांसानिचसुमेध्यानि भक्ष्यन्तांयोयदिच्छति ॥

काण्ड २॥सर्ग९१॥५२॥

अर्थ—सुष्ठु पवित्र मांसोंको खावो और जोपुरुष जिस वस्तुको खाया चाहे सो उसको खावे ॥

हेमित्र-देखो जहां गंगायमुनासरस्वतीके प्रवाह चलरहेहैं तहां तीर्थ राजप्रयागमें मुनिवर भरद्वाजजीने मांससें निमंत्रणकरा, और मांस मेध्य, पवित्रकहाहै ॥

वाल्मीकीयरामायण प्र० ११

तांतदादर्शयित्वातु मैथिलींगिरिनिम्नगाम् ॥
निषसादगिरिप्रस्थे सीतांमांसेनछन्दयन् ॥

कां २॥ स० ९६ ॥१॥

इदंमेध्यमिदंस्वादु निष्टप्तमिदमग्निना ।
एवमास्तेसधर्मात्मा सीतयासहराघवः ॥

२॥ इसकीटीका प्र० १२—

छन्दयन् मांसविशेषप्रदर्शनेन लालयन् सान्त्वयन् ॥

अर्थ—तब चित्रकूटमें श्रीरामजी जानकीको मन्दाकिनीनदी दिखलाय के पर्वतकी निवासयोग्यभूमिमें स्थितहुए सीताको मांसविशेषसें प्रसन्नकर्ते

हुए कहा कि - यिह मांस 'मेध्यहै' पवित्रहै यिह स्वादुहै, यिहमांस अग्निसें भुनाहुआ गर्महै, ऐसें सीताको प्रसन्नकर्तेहुए सोधर्मात्मा रामजी सीताके सहित स्थितहोतेभए ॥

वाल्मीकीयरामायण प्र० १३

क्रोशमात्रंततोगत्वा भ्रातरौरामलक्ष्मणौ ।
वहून्मेध्यान्मृगान् हत्वा चेरतुर्यमुनावने ॥

का० २॥सर्ग५५॥३२॥

अर्थ—भरद्वाजके आश्रमसें चलकर यमुनासें पार होकर उस्सें एक कोसमात्र जाकर रामलक्ष्मणदोनोंभ्राता यमुनाके वनमें वहुत पवित्रमृगोंको मारकर खातेभए ॥

भगवद्भागवत प्र० १४

सएकदाऽष्टकाश्राद्ध इक्ष्वाकुःसुतमादिशत् ।
मांसमानीयतांमेध्यं विकुक्षेगच्छमाचिरम् ॥

स्कन्ध ९॥अ०६॥६॥

सोइक्ष्वाकुमहाराजा एकसमय अष्टकाश्राद्धलिये विकुक्षि पुत्रको आज्ञा कर्ताभया कि—हेविकुक्षे श्राद्धलिये पवित्रमांसको ल्यावो, जाओ चिरमतकर ॥

हेपाठक—पौपमाघ फाल्गुनकी कृष्णाष्टमीमें जो श्राद्धहो सो अष्टका श्राद्ध कहाजाताहै ॥

मार्कण्डेयपुराण प्र० १५

शुचिगोतृप्तिकृत्तोयं प्रकृतिस्थंमहीगतम् ।
तथामांसंचचण्डाल क्रव्यादादिनिपातितम् ॥

अ० ३२॥२५॥

अर्थ—अपने शुद्धरूपसेंस्थित, गोतृप्तिपरिमाणवाला, महीगतजल पवित्रहै, तथाचंडालादिकोंके मारेहुए मृगआदिकोंका मांस पवित्रहै ॥

विदितरहेकि—श्रुतिस्मृतिओंमें जिनअजशशहरिणादिकोंके तथा तित्तिर आदिकोंके मांसभक्षणका विधानहै उनकाही मांस शुद्ध कहाजानना क्योंकि वो श्रुतिस्मृतिओंसें विहितहै। और जिन उष्ट्रवानरश्वानादिकोंके मांसभक्षण का निषेधहै उनका मांस शुद्ध नहींजानना क्योंकि वो श्रुतिस्मृतिआदिकोंसें निषिद्धहै, यिह व्यवस्था अर्थसें जानीजातीहै ॥

वेदस्मृतिओंसेंविहित मांस शुद्धहै इसीसें स्मृतिआदिक धर्मशास्त्रोंमें कहाहै कि—यदि कोई ब्रह्मचर्य्यसें पीछे ब्राह्मणको मांसदेवे तो उस मांसको 'हटावे नहीं' वापस नहीं फेरे किन्तु ग्रहणकरलेवे, इसअर्थके विधायक प्रमाणोंको अब दिखलाताहूं ॥

मनुस्मृति प्र० १६

शय्यांगृहान्कुशान्गन्धा नपःपुष्पंमणीन्दधि।
धानामत्स्यान्पयोमांसं शाकंचैवननिर्णुदेत्॥

अ०४॥२५०॥

अर्थ—शय्या गृह कुशा कपूरादिगन्ध जल पुष्प मणि दधि भूनेयव मत्स्य मांस शाक, इनवस्तुओंको 'हटावे नहीं' वापस नहींफेरे ॥

आपस्तम्बस्मृति प्र० १७—

आमंमांसं मधुघृतं धानाः क्षीरंतथैवच।
गुडस्तक्रंरसाग्राह्या निवृत्तेनापिशूद्रतः॥

अ० ८ ॥ १७ ॥— उसी का प्र० १८—

शाकंमांसंमृणालानि तुम्बरुः सक्तवास्तिलाः।

रसाःफलानिपिण्याकं प्रतिग्राह्याहिसर्वतः ॥१८॥

अर्थ- कच्चामांस, शहत घृत भूनेयंव दुग्ध गुड तक्र रस, यिह पदार्थ निवृत्तपुरुषनें भी शूद्रसें ग्रहणकरलेने ॥१७॥ शाक मांस, कमलमूल, धनिआं सत्तु तिल रस फल तिलोंकी खल, यिहपदार्थ सर्वतें ग्रहणकरलेने ॥

बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्र अ० १६

दधिक्षीराज्यमांसानि गन्धपुष्पाम्बुमत्स्यकान्।
शय्यातथासनंशाकं प्रत्याख्येयंनकर्हिचित् ॥

अ०४॥२३३॥

अपिदुष्कृतकर्मभ्यः समायातमयाचितम्।
पतितेभ्यस्तदातेभ्यः प्रतिग्राह्यमसंशयम् ॥२३४॥

दधि दुग्ध घृत मांस कपूरादिकगन्ध पुष्प जल मत्स्य शय्या आसन शाक, यिहपदार्थ कबीभी वापस नहींहटाने ॥२३३॥ जब बिनामांगे दुष्कृत कर्मीओंसें भी प्राप्तहोवें तब उनपतितोंसें यिहपदार्थ संशयराहितहोकर ग्रहण करलेने ॥२३४॥

याज्ञवल्क्य स्मृति अ० २०

कुशाःशाकंपयोमत्स्या गन्धःपुष्पंदधिक्षितिः ॥
मांसंशय्याऽऽसनंधानाः प्रत्याख्येयंनवारिच ॥

अ० १॥२१४॥

अयाचिताहृतंग्राह्य मपिदुष्कृतकर्मणः।
अन्यत्रकुलटाखण्ड पतितेभ्यस्तथाद्विषः॥२१५

अर्थ–कुशाशाक दुग्ध मत्स्य कपूरादिगन्ध पुष्प दधि भूमि मांस शय्या आसन भूनेयव जल, यिह पदार्थ वापस नहींहटाने ॥२१४॥ बिनामांगे किसीनेदिये यिहपदार्थ दुष्कृतकर्मीओंसेंभी ग्रहणकरलेने परन्तु व्यभिचारिणी स्त्री, नपुंसक, पतित, शत्रु, इनचारजनोंसें यिहपदार्थ ग्रहण न करें ॥२१५॥

हेपाठक–पहिले बृहत्पाराशरीयप्रमाणमें पतितशब्दसें दुष्कृतकर्मीका ग्रहण है, और यहां पतितशब्दका जातिपतित अर्थजानना ॥

हेभ्रातः–इत्यादिक मांसकी शुद्धताके और ग्राह्यताके प्रतिपादक वाक्यनको तथा वक्ष्यमाण अजशशहरिणादिकोंके बलिप्रदानके और मांस भक्षणके विधायक वाक्यनको केईनवीनसमाजी भ्रातृजन प्रक्षिप्तकहतेहैं वो उनका कथन असत्यहीहै, क्योंअसत्यहै तथाही कहताहूं सुनिये ॥

१—श्रीस्वामीदयानन्दसरस्वतीजीनें अपने बनाए सत्यार्थप्रकाशके समुल्लास ३ पृष्ट ४५ वेंपर वेदानुसारी लिखाहै–सत्यार्थप्रकाश प्र० २१

वेदब्राह्मण और सूत्रपुस्तकोंमें चारप्रकार के पदार्थ होमकेलिखेहैं एक तो जिसमें सुगंध गुण होय जैसेकि–कस्तूरी केशरादिक, और दूसरा जिसमें मिष्टगुणहोय जैसेकि–मिश्री शर्करादिक, और तीसरा जिसमें पुष्टिकारक गुणहोय जैसाकि–दूधघी और मांसादिक, और चौथा जिसमें रोगनिवृत्तिकारक गुणहोय जैसाकि–वैद्यकशास्त्रकी रीतिसें सोमलतादिक

औषधिआं लिखीहैं, इनचारोंका यथावत् शोधन उनका परस्परसंयोग और संस्कार करके होमकरै सायं और प्रातः ॥

इससत्यार्थप्रकाशके समुल्लास ४ पृष्ठ १४८ पर स्वामी दयानन्दजी लिखतेहैं देखो प्र०२२ **इसके कहनेसें अजामेधादिकोंका त्याग नहींआया ॥**

अर्थयिह वहां—पहिले स्मृतिश्लोकमें जो अश्वमेध गोमेधादिकोंकाकरणा कलियुगमें विवर्जित कराहै इसपर स्वामीजी लिखतेहैं कि—इसके कहनेसें अजामेधादिकों का त्यागनहींआया अर्थात् अजमेधादिकोंके करणेका तो कलियुगमेंभी निषेध नहींकरा ॥

सत्यार्थप्रकाश प्र० २३—**मांसको जो खाताहोय तो उसके वास्ते मांसके पिण्डकरनेका विधानहै इस्सें मांसके पिण्डदेनेमेंभी कुछपाप नहिं ॥**
समुल्लास ४॥ पृष्ठ १४६॥

सत्यार्थप्रकाश प्र० २४—**जो मांस खाय अथवा घृतादिकोंसें निर्वाहकरे वेभी सब अग्निमें होम के विना न खाय** ॥ समुल्लास १०॥ पृष्ठ ३०३॥ सत्यार्थप्रकाश में इत्यादिक बहुतलम्बे २ मांसविषयके स्पष्टलेख स्वामीदयानन्दजीनें

लिखेहुएहैं सो हेभ्रातृजन यदि मांसविषयकेवाक्य प्रक्षिप्त होते तो स्वामीजी ऐसेलेख न लिखसक्के परंतु स्वामीदयानन्दजीने वेदब्राह्मण और सूत्रपुस्तकों के अनुसारी सायंप्रातः मांसके होमकरनेका विधानलिखाहै, अजामेधादिकों के विधानको अंगीकार कराहै, मांसके पिण्डदानसें निष्पापता कहीहै, मांस वा घृतादिकोंको होमकेबिना न खाय, इसकथनसें होमकरके मांसादिकों के खानेका उपदेशकराहै तो अपने आचार्यसें विरुद्धकहना समाजीभ्राताओं का समीचीन नहीं किंतु असत्यहीहै ॥

हेपाठकभ्रातः-जोसत्यार्थप्रकाश स्वामीजीने रचकरके संवत् १९३२ सन् १८७५ इसवीमें राजाजयकृष्णदासद्वारा बनारसमें छपवायाथा वोही प्रथमावृत्तिछपा सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्दसरस्वतीजीका बनायाहुआ माननेयोग्यहै क्योंकि-फिर संवत् १९४० कार्तिकवदि १५-तदनुसार सन् इसवी १८८३ अकटोबर तारीख ३० में स्वामीजी परलोकगामी होगए तबतक द्वितीयवार सत्यार्थप्रकाश नहीं छपा । और जो स्वामीजीके परलोकगमनसेंपीछे सन् १८८४सें लेकर द्वितीयावृत्तिप्रभृति सत्यार्थप्रकाश समाजीभ्रातृजनोंने छपवाएहैं वो स्वामीदयानन्दजीके रचित माननेयोग्य नहीं क्योंकि स्वामीजीके छपवाए प्रथमावृत्तिसत्यार्थप्रकाशसें पीछेछपे सत्यार्थप्रकाशनमें बहुतपाठ समाजीभाईओंने कहीं न्यून कहींअधिक कर दियाहै, कहीं अदलबदल करडालाहै ॥

समाजीभ्राता०—जो सत्यार्थप्रकाश संवत् १९३२ में स्वामीजीने छपवायाथा उससें तीनवर्षपीछे संवत १९३५ में स्वामीजीने एकवि-ज्ञापनपत्रभी निकालाथा उसमें स्वामीजीने लिखने और शोधनवालोंकी भूलकहीहै ।

ग्रन्थकर्ता—सत्यार्थप्रकाश छपानेसें तीनवर्षपीछे जो विज्ञापनपत्रमें स्वामीजीने लेखकशोधककी, भूललिखीहै सो तर्पण और श्राद्धविषयमेंही भूललिखीहै क्योंकि उसविज्ञापनपत्रमें स्वामीजी ऐसे लिखतेहैं देखो-

इत्यादि तर्पण और श्राद्धके विषयमें जो लिखा गयाहै सो लिखने और शोधनेवालोंकी भूलसें छप गयाहै—इत्यादि इसविज्ञापनपत्रमें स्वामीजीने तर्पण और श्राद्धको छोड़कर होरकोईलेख सत्यार्थप्रकाशका अशुद्ध नहीं बतलाया इस सें निश्चितजानाजाताहै कि तर्पण और श्राद्धसेंबिना होरसमग्र प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश स्वामीदयानन्दजीको स्वीकृतथा -

सत्यार्थप्रकाशके बहुतजगोंमें जो स्वामीजीने वेदब्राह्मण और सूत्र पुस्ककोंके अनुसारी मांसके होमका, मांसके पिण्डदानका, होमकर्के मांसके खाने का विधानकराहै, इत्यादिक मांसके बहुतलेखोंमें तो स्वामीजीने किसेकी कोईभूल नहींलिखी और नाहीं विज्ञापनपत्रमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त लिखाहै तो अपनेस्वामीजीसें विरुद्धकहना समाजीभाईओंका समीचीननहीं किंतु असत्यहीहै ॥

हेभ्रातः—उससंवत् १९३५के विज्ञापनमें स्वामीजी आपलिखतेहैं कि **–,,मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कार विधि,,** अर्थात्—सो प्रथमावृत्तिछपा सत्यार्थप्रकाश स्वामीदयानन्दजीने बनायाहै स्वामीजीने छपवायाहै उसमें यदि भूलरहगईथी तो उससत्यार्थ-प्रकाशमें शुद्धिपत्रभी स्वामीजीने लगायाहै उसशुद्धिपत्रमें स्वामीजी भूलनि-कालदेते–फिरजबग्रन्थ छापकर तियारहोगए स्वामीजीने अधिकारीजनोंको दादेये बाहिर भेजदिये अर तीनवर्षतक अतिदीर्घकाल व्यतीतहोगया इतने दीर्घकालमें उससत्यार्थप्रकाशको स्वामीजी केईपुरुषोंको सुनातेरहे पढातेरहे उसका उपदेशकर्तेरहे तोफिर इतना तीनवर्षरूप दीर्घकालपर्य्यन्त स्वामी-जीको अपने ग्रन्थके लम्बे लम्बे प्रसंगोकी भूल प्रतीतही नहींहुई यिहभी

एक अतिआश्चर्यकीबातहै, हेपाठक-क्या ऐसेहोसक्ताहै किजोविद्वान् आप-ग्रन्थको बनावे, आप छपावे, फिर ग्रन्थको बांटकर तीनवर्षोंतक ग्रन्थका प्रचार करे तो ऐसेकरनेपरभी तीनवर्षोंतक अपने बनाए ग्रन्थमें लम्बे२ प्रसंगोंकी भूलग्रन्थकर्ताको बनीहीरहे, यिह क्या विचारमें आसक्ताहै ॥—

सत्यार्थप्रकाशके ४७ वें पृष्ठसें स्वामीजीने मृतपितरोंके तर्पण और श्राद्धकरणेसे सातगुण अर्थात् सातलाभ दिख लाएहैं सो स्वामीदयानन्द-जीका लिखा पाठ में यहां लिखताहुं देखिये—**मरेभये पित्रादिकोंका तर्पण और श्राद्धकरताहै उस्सें क्या आताहै किजीतेभयेकी अन्न और जलादिकोंसें सेवा अवश्यकरनीचाहिये यह जानागया, दूसरा गुण जिनके ऊपर प्रीतिहै उनकानामलेके तर्पण और श्राद्ध करेगा तब उसके चित्तमें ज्ञानका संभवहै कि—जैसे वे मरगये वैसे मुझको भी मरनाहै मरणके स्मरणसें अधर्मकरनेमें भयहोगा धर्मकरनेमें प्रीतिहोगी, तीसरा गुण यहहै कि—दायभाग बाटनेमें संदेह न होगा क्योंकि इसका यह पिताहै इसका यह पितामहहै इसका यह प्रपितामहहै ऐसेही छःपीडीतक सभोंका नाम कण्ठस्थ रहेगा वैसेही इसका यह पुत्रहै इसका यह पौत्रहै इसका यह प्रपौत्रहै इस्सें दायभा-**

गमें कभी भ्रम न होगा, चौथागुण यहहै कि-विद्वानोंको श्रेष्ठधर्मात्माओंहीको निमंत्रण भोजनदान देनाचाहिये मूर्खोंकोभी नहीं इस्सें क्या आताहै कि--विद्वान्लोग आजीविकाकेबिना कभी दुःखी नहोंगे।निश्चिन्तहोके सबशास्त्रोंको पढावेंगे और विचारेंगे सत्य२ उपदेशकरेंगे और मूर्खोंका अपमान होनेसें मूर्खोंकोभी विद्याके पढनेमें और गुणग्रहणमें प्रीतिहोगी पांचवांगुण यहहै कि--देवऋषिपितृसंज्ञा श्रेष्ठोंकीहै देवसंज्ञा दिव्यकर्म करनेवालोंकीहै पठनपाठनकरनेवालोंकी तो ऋषिसंज्ञाहै और यथार्थज्ञानियोंकी पितृसंज्ञाहै उनको निमन्त्रणदेगा तब उनसें बातभी सुनेगा प्रश्नभी करेगा उस्सें उनको ज्ञानकालाभहोगा, छठवांप्रयोजन यहहै कि--श्राद्धतर्पणसबकर्मोंमें वेदोंके मन्त्रोंको कर्मकरनेकेलिये कण्ठस्थ रक्खेंगे इस्सें उसपुस्तकका नाश कभी न होगा फिर कोई उसविद्याका प्रचार करेगातब पदार्थ विद्या प्रगटहोगी इस्सें मनुष्यों-

को बहुतलाभ होगा, सातवां प्रयोजन यहहै कि-

वसून्वदन्तिवैपितॄन् रुद्रांश्चैवपितामहान् ॥ प्रपितामहांश्चादित्यान् श्रुतिरेषासनातनी ॥—यह मनुस्मृतिका श्लोकहै इसका यहअभिप्रायहै कि—वसुजोहै सोई पिताहै जोरुद्रहै सोई पितामहहै जोआदित्यहै सोई प्रपितामहहै येतीनों नाम परमेश्वरहीकेहैं इस्से परमेश्वरहीकी उपासना तर्पणसे और श्राद्धसे आई—

हेभ्रातः - इत्यादिक औरभी सत्यार्थप्रकाशके कईजगोंमें स्वामीदयानंद जीने जो मृतपितरोंके तर्पण और श्राद्धके विधान विस्तृतयुक्तिओंसें लम्बे२ लेखोंमें लिखे हैं वोभी युक्तियुक्तलम्बे२ लेख किसेकीभूलमें नहींलिखेजासक्ते किंतु स्वामीजीके बुद्धिपूर्वक लिखेहुएहैं क्योंकि इसलेखमें देवपितृआदिकों का अर्थभी समाजकीही रीतिसें कराहुआहै इससे जानाजाताहै कि—पहिले ख्याल औरथा स्वामीजीका फिर ख्याल बदलगया ऐसे तर्पणश्राद्धमेंकी न्यांई यदि मांसविषयकभी स्वामीका ख्याल बदलजाता तो स्वामीजी संवत् १९३५ के विज्ञापनपत्रमें अवश्यं२ बोधनकर्ते परंतु सत्यार्थप्रकाशके बहुत जगोंमें जो मांसके विधानलिखेहैं उनमेंसे एककाभी स्वामीजीने विज्ञापनपत्र में अस्वीकृत नहींबोधनकराहै इस्सें जानाजाताहै कि—पशुबलिप्रदानेके व मांसभक्षणादिकोंके विधायक सर्ववाक्य स्वामीदयानन्दजीको स्वीकृतथे, मनजूरथे तो अपनेस्वामीदयानन्दजीसें विरुद्धकथन समाजीभाईओंका समीचीननहीं किंतु असत्यहीहै ॥

२ -हेभ्रातृजन इससमयमें तो छापा प्रचलितहै उसमें छपते ग्रन्थमें कोई पुरुष एकवाक्यको प्रक्षिप्तकरडाले तोभी हजार ग्रन्थमें वा जितनेछपवायें उतने ग्रन्थों में वो एकवाक्य प्रक्षिप्त जायसक्ताहै, भारतवर्षके सर्वग्रन्थनमें वो एकवाक्यभी नहींजायसक्ता, जबपहिले रेलगाड़ीभी नहींथी अतः समग्रभारतवर्षमें एकपुरुषका भ्रमणभी असंभवहीथा, छापाभी नहींथा, तब्र कौनपुरुष भारतखण्डके असंख्यग्रन्थन में हजारोंवाक्यनको प्रक्षिप्तकरसक्ताथा ॥

दृष्टान्त सुनिये—जैसे एक मनुस्मृतिग्रन्थ भारतखण्डमें लाखोंथे उनलाखों मनुस्मृतिग्रन्थनमें एकश्लोककोभी कोई पुरुष प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता था क्योंकि—एकनगरमेंभी जिन २ विद्वानोंके गृहमें मनुस्मृतिग्रन्थथे उनमें एकविद्वान्भी अपने अनुकूल विश्वस्तपुरुषसेंबिना अन्यकिसीको ग्रन्थ देता नहीं, ऐसे यदि किसीपुरुषको जो विद्वानपुरुष ग्रन्थ देवेभी तोफिर वोपुरुष उसग्रन्थमें कोईश्लोक प्रक्षिप्तकर देवे तो उसप्रक्षेपकपुरुषको सोविद्वानपुरु(क्या कुछ नहींकहता अर्थात् उसका तिरस्कार नहींकर्ता, फिर उसप्रक्षिप्त श्लोकको सोविद्वानपुरुष अपनेग्रन्थसें निकाल नहींडालता, तथा उसनगरके मनुस्मृतिग्रन्थोंवाले सर्वविद्वान् अपना२ग्रन्थदेकर प्रक्षिप्तश्लोकको लिखवाते ही जातेथे, ऐसे कबीनहींहोता, हेमित्र ऐसे कबीनहींहोसक्ता ॥

एवंयदि एकनगरके सर्वमनुस्मृति ग्रन्थनमें कोईपुरुष किसीश्लोकको प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता तो वो प्रक्षेपकपुरुष समग्रभारतवर्षके लाखोंमनुस्मृतिग्रन्थन में एकश्लोकको प्रक्षिप्त कैसेकरसक्ताहै, यदि भारतखण्डके लाखोंमनुस्मृति ग्रन्थनमें एकश्लोककोभी कोईपुरुष प्रक्षिप्त नहींकरसक्ता तो मनुस्मृतिके उन लाखोंग्रन्थनमें पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायक अनेकश्लोकों को प्रक्षिप्त कौन करसक्ताथा ॥

हेमित्र – इसप्रकार जैसेभारतखण्डके समग्र एक मनुस्मृतिग्रन्थनमें कोईपुरुष किसीश्लोकको प्रक्षिप्त नहीं करसक्ता तो भारतवर्षके वेदस्मृतिसूत्रा-

दिक असंख्य पुस्तकोंमें कौनपुरुष किसी वाक्यको प्रक्षिप्तकरसक्काथा, अतः उनवाक्यनका प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

३—यदि आप कहेंकि—इतिहास पुराणादिकोंमें प्रक्षिप्तश्लोकभी प्रक्षिप्तअध्यायभी देखने सुननेमें आतेहैं तो वोठीकहै परन्तु उक्तप्रकारसें दूसरोंके ग्रन्थमें तो कोइपुरुष प्रक्षिप्त नहींकरसक्का और जोकोई धर्मानभिज्ञ-पुरुष अपनेग्रन्थमें किसीश्लोकको अथवा अध्यायको लिखडाले तो टीकाकार सूचनकर देतेहैं कि—यिहश्लोक प्रक्षिप्तहै, यिहअध्याय प्रक्षिप्तहै, फिर उस प्रक्षिप्तश्लोकको अध्यायको संख्यामें नहींल्याते, अतःयदि इतिहासपुराणा-दिकोंमें मांसविधायकवाक्य प्रक्षिप्तहोते तो उनके टीकाकार अवश्यंबोधनकर्ते परन्तु उनके टीकाकारोंने तो पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक वाक्यनको प्रक्षिप्त तो नहींलिखाहै किंतु उन वाक्यनका पशुबलिप्रदान और मांसभक्षणही अर्थलिखाहै अतः इतिहासपुराणोंमेंभी पशुबलिदानके व मांस भक्षणके विधायकवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

४—हेभ्रातृजन पहिलेभी ऐसाकोईसमय नहींहुआ कि जिससमय शैव वैष्णव शाक्त जैनआदिकमतोंमें किसीएकही मतके विद्वान्थे समग्रभारतवर्ष में उसएकही मतका प्रचारथा, ऐसाकोईसमय न हुआहै, नाहींहोसक्काहै किंतु केई नगरोंमें शैवमतके वा शाक्तमतके विद्वान् बहुतहुए अन्य मतके विद्वान् थोड़ेहुए, औरकेईनगरोंमें जैनमतके विद्वान् बहुतहुए अन्यमतोंके थोड़ेहुए, ऐसीही व्यवस्था पहिलेहुईहै ऐसीही दशा अब है—ऐसीदशामे अन्यमतके विद्वान्पुरुषोंके विद्यमान होते वेदस्मृति आदिक धर्मपुस्तकोंमें कौनपुरुष किसी वाक्यको प्रक्षिप्त करसक्काहै ॥ यदि कोईपुरुष अपनेपुस्तकमें किसीवाक्यको अध्यायको प्रक्षिप्त करदेवे तोफिर जब उसको अन्य विद्वान् देखेहै तब सो विद्वान् पुरुष कदापि उसप्रक्षिप्तवाक्यको सहन नहीं करसक्का किंतु उसप्रक्षिप्तको अवश्यबोधन करदेताहै—

जैसे वाल्मीकीयरामायणकी रामायणतिलक टीकामें षष्ठेकाण्डके २३वें सर्गसें अनन्तर बोधनकराहै देखिये ॥

इतउत्तरंपञ्चसर्गाःप्रक्षिप्ताबोध्याः॥

अर्थ—इससें अनन्तर पांचसर्ग प्रक्षिप्तजानने ॥—ऐसे पांच सर्गोंको प्रक्षिप्तबोधनकर्के ग्रन्थके सर्गोंकी संख्यामें इनपांच सर्गोंको मिलाया नहीं अतः ग्रन्थसें पृथक् बोधनकरेहैं, इसीप्रकार इतिहासपुराणोंमें जहांजहां कोई श्लोक वा अध्याय प्रक्षिप्तहोवे तो वहां टीकाकार अवश्यसूचनकर देतेहैं परंतु इतिहासपुराणोंमेंभी जो पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायक अनेक २ श्लोकहें उनको प्राचीनटीकाकारोंनेभी प्रक्षिप्तबोधन नहींकराहे अतः इतिहास पुराणोंमेंभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त कहना नवीन समाजीभाइओंका असत्यहीहै ॥

५—यदि तुम कहो कि-किसीदेशमें किसीने कोईवक्य प्रक्षिप्तकर दिया, अन्यकिसीदेशमें होरकिसीने कोई वाक्य प्रक्षिप्त करडाला, इसप्रकार बहुतवाक्य प्रक्षिप्त होगए तो यिह आपका कथनभी संमीचीननहीं क्योंकि जिनोंने प्रक्षिप्तकरेहैं उनोंने केईवाक्य निकालभी डालेहोंगे यदि ऐसहोता तो एकएकग्रन्थके नानाप्रकारके विलक्षण २ पाठ होजाते और देशदेश में तो वहुत पाठोंका भेद होजाता जैसे मनुस्मृति का पंचनददेशमें विलक्षण, गौड़देशमें विलक्षण, द्रविडदेशमें विलक्षण, मरुस्थलदेश में, विलक्षण, वहुत क्या एकएकनगरमें विलक्षण २ पाठ होजाना चाहियेथा परंतु ऐसे तो हुआनहीं क्योंकि देखो—कलकत्ता मुंबई पूनाऽऽदिकों के छापाखानोंमें जोग्रन्थपहिले छापतेहैं उसग्रन्थकी केई प्रतिएं केईदेशोंसें मगाकर छापतेहैं, उनप्रतिओंमें जहां कुछ पाठभेद होवे तो सूचन करदेतेहैं, ऐसे प्रामाणिक कलकत्ता मुंबई प्रयाग पूना करांची लखनऊ देहली लाहौर आदिकोंके—छापाखानोंमें छपेहुए गृह्यसूत्र श्रौतसूत्र मनुस्मृतिआदिक

धर्मपुस्तकोंमें ऐसा विलक्षण२पाठ नहींहै कि कलकत्तामें छपेमनुस्मृतिग्रन्थ में पशुबलिप्रदानके विधायक श्लोकहैं और मुंबईमें छपेमनुस्मृतिग्रन्थमें सो श्लोक नहींहैं, लाहौरमें छपे मनुस्मृतिपुस्तकमें मांस भक्षणकेविधायक श्लोक हैं और लखनऊमें छपेमनुस्मृतिग्रन्थमें सोश्लोक नहींहैं, ऐसाविलक्षण २ पाठहैनहीं हुआनहीं–ऐसेही समग्रभारतखण्डमें तथा यूरप आदिकोंमेंभीसर्व वेदग्रन्थोंका श्रौतसूत्रगृह्यसूत्रग्रन्थोंका स्मृतिपुस्तकोंका 'सदृशही' एकजैसाही पाठहै इसहेतुसेंभी वेदसूत्रस्मृतिग्रन्थन में पशुवलिविधायक मांसभक्षण विधायक वाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहैं ॥

६—स्वामीदयानन्दजीके देहान्तसें पीछे छपाए संस्कार विधिग्रन्थमें भी संन्यासप्रकरणमें तैत्तिरीयआरण्यकके प्रबलप्रमाणसें संन्यासीका यज्ञरूप कर वर्णनकराहै वहांभी जो संन्यासीमेंक्रोधहै वह पशुकहाहै यहांनिर्णय करिये कि–वेदोंनें यज्ञमें पशुबलिप्रदानका विधान कराहुआहै तबी तो संन्यासीरूपयज्ञमें मारणेयोग्यक्रोधको पशुरूप वर्णनकराहै तो आप क्यों हठसें उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहतेहो वा अर्थ बदलतेहो । और ऊंहांसंस्कार विधिग्रन्थनमें जो "मलवत् छोड़ने योग्यहै" ऐसे अर्थ लिखाहै सोभीमूलसें विरुद्ध लिखने कर असत्यहीहै क्योंकि मूलतैत्तिरीय आरण्यकमें क्रोध पशुरूप कहाहै वहां क्रोध मलरूप नहींकहाहै ॥

७—यदि पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक वाक्य वेदसूत्र-स्मृतिओंमें प्रक्षिप्तहोते तो जैनमतवाले जैनी भाई वेदस्मृतिआदिकोंको त्याग-कर पृथक् क्यों होजाते, अर्थयिह–जैनमतभी अतिबहुतकालसें प्रचलितहै, ऐसे जैनमतके पुरातनविद्वानोंने भी अपनेग्रन्थनमें कहींयिह तो नहीं कहाहै कि–वेदस्मृतिआदिकोंमें मांसविधायक वाक्य प्रक्षिप्तहैं यद्यपि जैनमतवाले वेदन को पौरुषेय मानतेहैं तथापि वेदसूत्रस्मृतिओंमें उनवाक्यनको प्राक्षिप्त नहीं

कहते किंतु उनवाक्यनको वेदसूत्रस्मृतिओंकेही वाक्य मानतेहुए वेदमतको छोड़दिया, इसहेतुसेंभी पशुबलिप्रदानके मांसभक्षणके विधायक वाक्यनको प्रक्षिप्त कहना नवीनसमाजीभाईओंका असत्यहीहै ॥

८—यदि वेदनमें सूत्रग्रन्थोंमें पशुबलिप्रदानादिकोंके विधायकवाक्य प्रक्षिप्तहोते वा उनका कुछहोरहीअर्थ होता तो वैष्णवोंके आदिआचार्य्य श्रीरामानुजस्वामीजी शारीरकके अ०३॥पाद१॥सूत्र२५वेंके श्रीभाष्यमें अग्नीषोमीयआदिपशुके मारणको स्वर्गलोककी प्राप्तिका हेतु क्यों लिखते, अहिंसारूप कैसे मानसक्तेथे ॥

अर्थयिह—वोश्रीभाष्य तो प्रमाणांक ५६ में लिखूंगा वहां देख लीजियेगा, उसश्रीभाष्यमें श्रीरामानुज स्वामीजी स्पष्ट लिखतेहैं कि-अग्नीषोमीयआदिपशुका मारणा स्वर्गप्राप्तिका हेतुहै अतः वोहिंसा नहींहै किंतु वोरक्षाहै जैसे चिकित्साके गुणजाननेवालेपुरुष तब अल्पदुखकारीभी चिकित्सकको रक्षकही कहतेहैं अर पूजतेहैं ॥

अग्नि और सोमदेवतानिमित्त जो अजपशुका मारणा वेदमें कहाहै उस 'अजका' बकराका नाम अग्नीषोमीय पशुहै हेभ्रातृजन—यहां विचार कीजिये कि—वैष्णवग्रन्थनमें तो कोईभीपुरुष किसीवाक्यको प्रक्षिप्त न कर सक्ताथा अर नांही प्रक्षिप्त करसक्ताहै क्योंकि—जबसें श्रीमहानुभाव रामानुज स्वामीजीसें वैष्णवसंप्रदाय प्रचलितहुआहै तबसें वो वैष्णव मतवाले उत्तर२ अधिकबलको प्राप्तहैं अद्यावधि दृढबलवान्हैं अतः उससंप्रदायके आदि आचार्य्य श्रीरामानुज स्वामीकृतग्रन्थमें तो वाक्यके प्रक्षेपकी मूढजनोंकोभी संभावना नहींहोसक्ती, उसरामानुजस्वामीने वेदप्रमाणदेकर वेदविहितहिंसाको स्वर्गप्राप्तिका हेतु मानीहै अतः 'अहिंसा रूप' मानीहै इस्सें उनवाक्यनको

प्रक्षिप्त कहना नवीनसमाजीभाईओंका असत्यहीहै ॥

९—श्रीपण्डित चतुर्वेदी गिरिधरशर्माजीनेभीस्मृतिविरोधपरिहारग्रन्थमें स्पष्टलिखाहै देखिये प्र० २५—**यह कौन प्रतिज्ञा करसक्काहै कि—यज्ञोंमें (पशुहिंसा) व मांसभक्षण श्रुतिविहित नहींहै। यदि ऐसाहीहोता तो जैनबौद्धआदिसंप्रदाय सनातनआर्य्यधर्मसे पृथक्ही क्यों होते हां आज कहींके नव्यसमाजी व कोई २ वैष्णवभी किसीकी देखादेखी बिना अपनेधर्म समझे चाहे यह कहनेका साहसकरे कि वेद में पशुहिंसा नहींहै परन्तु वैष्णवोंके आदि आचार्य्य भगवान् श्रीरामानुजस्वामी अशुद्धमितिचेन्नशब्दात् ।३।१।२५।सूत्रके भाष्य में स्पष्ट वेदमें पशुहिंसा स्वीकारकर्तेहैं ॥** श्रीपण्डित चतुर्वेदी गिरिधरशर्माजीके ऐसेस्पष्टलेखसेभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना समाजीभाईयोंका असत्यहीहै ॥

१०—अपनेबनाए, आपछपवाए सत्यार्थप्रकाशके बहुतजगेंजो स्वामी दयानन्दजीनें वेदानुसारी मांसके विधान लिखेहै वो केवल सत्यार्थप्रकाश मेंही नहींलिखे किन्तु अपनेबनाए अपनेछपवाएहुए प्रथमावृत्ति संस्कार विधिग्रंथमेंभी ११वें पृष्ठपर गर्भाधानसंस्कारविधिमें बृहदारण्यकउपनिषद मन्त्रके व्याख्यानमें स्वामीदयानन्दजीनें सबवेदोंके पढानेवाले अर्थात् अति

श्रेष्ठपुत्रकी उत्पत्तिलिये मांसखानेका विधानालिखाहै वो स्वामीजीका लेख तो प्रमाणांक १८६में लिखुंगा वहांसें देखलेना–हेभ्रातृजन इस उपनिषदमन्त्रको स्वामीजीने प्रक्षिप्त नहींलिखाहै किन्तु इसमंत्रका मांसभक्षणहीअर्थ लिखा है अतः स्वामीदयानन्दजीसें विरुद्धकहना समाजीभाइओंका समीचीननहीं अर्थात् असत्यहीहै ॥

११—बृहदारण्यकउपनिषद्की टीकामें डी० ए० वी० कालिजके संस्कृतप्रोफेसर श्रीपं० राजारामजीनेंभी अथय इच्छेत् इत्यादिकइसमंत्रका अर्थ ऐसालिखाहै–पृ० २६—और जो चाहे कि–मेरे पुत्र पं०प्रख्यात सभामें जानेवाला,,सबकी भलाईके कामोंमें सम्मिलितहोनेवाला,, जिसको लोग सुननाचाहतेहैं ऐसीबाणीका बोलनेवाला प्रसिद्धवक्ता उत्पन्नहो सारेवेदोंको जाने और पूरी-आयु भोगे तो वे दोनों दम्पती, मांसौदन पकाकर घीडालकर खाएं तो वे ऐसीसन्तान उत्पन्नकरनेको समर्थहोंगे ॥

हेभ्रातः–यदि मांसभक्षणके विधायक वाक्य प्रक्षिप्तहोते तो पण्डितराजाराम-जी अवश्यंबोधनकर्ते परन्तु प० राजारामजीने इसमंत्रको प्रक्षिप्त तो नहींलिखा किंतु इस मंत्रके अर्थमें मांसभक्षणका विधानही लिखाहै इससेंभी मांसभक्ष-णके विधायकवाक्यनको प्रक्षिप्त कहना (समाजीओंका) असत्यहै ॥

१२—केवलबृहदारण्यकके मंत्रपरहीनहीं किंतु पास्करगृह्यसूत्रादिकोंके हिन्दी भाष्य में भी पं० राजारामजीने सूत्रोंकेअनुसारी मांसभक्षणके बहुत विधान लिखेहं उस डी०ए०वी० कालिजके संस्कृत प्रोफेसर पं० राजाराम-जीसें विरुद्धकथन केईसमाजीभाइयोंका असत्यहीहै

१३ बहुतलिखनेसें क्याहै जब समाजीभाइयोंने अपने आचार्यस्वामी दयानन्दजीके रचितग्रंथके पाठको तोड़फोड़देनेमें पाठको बदलदेनेमें संकोच नहींकरा तो होरग्रंथनके वाक्यनकोप्राक्षिप्त कहदेना वा उनका पाठ तोड़ फोड़ देना, पाठबदलदेना, उनसमाजीभाइयोंके आगे क्या बड़ीबातहै, यदि आपपूछेंकि—ऐसेकिससमाजीनें कराहै, तोहेभ्रात: यद्यपि समाजीजनभी मेरे भ्रातृजनहींहैं वो प्राय: पढे लिखेहं अत: मेरेप्रियभ्राताहं तथापि सर्व धर्मोकामूल सत्यहै, सर्वसुखोंका मूल धर्महै अत: सत्यधर्माभिलाषसें सत्यअर्थका निर्णयकरके सत्यअर्थका प्रकटकरना श्रेष्ठविद्वानोंका मुख्यधर्महै इसलिये सुभ्रातृभावसें कुछक लिखताहूं देखिये

प्रथमावृत्तिसंस्कारविधिग्रन्थके ११वें पृष्ठपर जो स्वामीदयानन्दजीने बृहदारण्यकउपनिषदका अथयइच्छेत्,, इत्यादिक मन्त्रलिखाहै उसमें **"मांꣳसौदनम्"** ऐसापाठहै स्वामीदयानन्दजीनेंभी ऐसाहीपाठ लिखाहै फिर स्वामीजीने उसकाअर्थभी मांसही लिखाहै

उपनिषदपुस्तकोंमेंभी **"मांꣳसौदनम्"** ऐसाही पाठ है शांकर भाष्य में भी 'मांꣳसौदनम्' ऐसा पाठ लिखकर मांसयुक्तभात अर्थकराहै।

बृहदारण्यकउपनिषदके मिताक्षराटीकामेंभी '**मांꣳसौदनम्**" ऐसाहीपाठहै मांसयुक्तभातही अर्थ लिखा है ॥

डी० ए० वी० कालिजके संस्कृत प्रोफेसर पं० राजारामजीनेभी **"मांꣳसौदनम्"** ऐसाहीपाठलिखाहै मांसौदनही अर्थलिखाहै—

ऐसेही होरभाषाटीकाओंमें तथा संस्कृतटीकाओं में **मांसौदनम्** ऐसाहीपाठहै इनसबनोंसें विरुद्ध अर्थात् भाष्यकारों सें टीकाकारोंसें विरुद्ध तथा पं० राजारामजीमें और अपने आचार्य्यस्वामी दयानन्दजीसेंभी विरुद्ध शिवशंकरशर्मासमाजीभाईने अब पाठ बदलादिया अर्थयिह "**मांसौदनम्** इसकीजगेमें माषौदनं लिखडाला इस्सें सर्वधर्मोंके मूल सत्यधर्मकी अपेक्षा नहींरखी किन्तु अपनेरायकोही धर्म समझा ॥

खेदहै कि - उपनिषद्ग्रन्थमें अबतक किसीने ऐसे नहींकराथा बहुत क्या जैनीभाईओंको नास्तिककहतेहैं उनजैनीविद्वानोंनेभी वेदादिकों को छोडदिया परंतु पाठको नहींबदला अब समाजीभ्राताओंने ऐसाअसद व्यवहारभी करदिखलाया—

सत्य है कि—**पूर्णः पूर्णंजगत्पश्ये त्कामुकः कामुकंजगत्॥ आर्तोऽप्यार्तिमयंविश्वं लुब्धो लुब्धंस्वचित्तवत्॥** अर्थात् पूर्णपुरुष को जगत् पूर्ण भास्ता है, कामुक पुरुषको जगत् कामुक भासेहै, दुःखीपुरुषको समग्रजगत्, दुःखी प्रतीत होता है, लोभी को जगत् लोभीही दीखे है, भावार्थयिह जैसा अपनाचित्त होता है वैसाही सब जगत् भास्ता है, इसीसे समाजीभाई प्रक्षिप्त प्रक्षिप्त पुकारते रहते हैं, और आप उपनिषद्ग्रन्थोंके पुरातन पुस्तकोंके क्या अपने स्वामीजी के पाठों को भी बदल देनेमें तोड-फोड देने में कुछभी संकोच नहीं कर्ते ।

हे भ्रातृजन—शिवशंकरशर्माने जैसा अयोग्य कार्य्य किया वो किया परंतु यदि सत्य में श्रद्धा व रुचि होती तो समाजीभाई शिवशंकर-

शर्मासें पूछते कि-महाराजजी जब पुरातन भाष्यकारों ने तथा टीकाकारों नें अर भाषाटीकाकारोंने और डी॰ ए॰ वी॰ कालिजके संस्कृत अध्यापक पं॰ राजारामजी ने तथा हमारे परमआचार्य्य स्वामी दयानन्द जीनें भी "**माँसौदनम्**" ऐसापाठ लिखाहै तो इनसबके लेखों का निरादर करके तुमने उपनिषद् के पाठ को क्युं बदलादिया।

हे पाठकभ्रातः इससमय में तो, हम सत्यका ग्रहण और असत्य का" त्याग कर्ते हैं" यिह कथनमात्र किया जाता है क्योंकि उपनिषद्पाठ के बदलदेनेकर असत्यका ग्रहण और सत्यका त्याग कर दिखलाया है ॥

समाजी भाईओं ने महाभारतप्रभृति इतिहासादिकों के भी पाठ तोडफोड डाले हैं अर्थात् 'अपनीसम्मति को, अपने रायकोही धर्म समझा है, युक्तयोगी परमेश्वरके और युञ्जानयोगी महर्षिओं के वाक्यन में विश्वास नहीं रखा ॥

हेमित्र-शुभाशुभ कर्मो सें जन्य जो चित्त में पुण्यपापहैं वो अतीन्द्रियपदार्थ हैं, अपने रायसें अतीन्द्रियपदार्थों का विज्ञान नहीं हो सक्ता किंतु उनके विज्ञान में योगयुक्त पुरुषोंकृत वेदशास्त्रही कारण हैं, यिह देखो प्रमाणांक ५७ में श्रीशंकराचार्य्यों ने भी स्पष्ट कहाहै ॥

तात्पर्य्य यिह है कि-दृढसमाधि करही अतीन्द्रिय पदार्थों का प्रत्यक्ष होता है, युक्तयोगी ईश्वरने और युञ्जान योगीमहर्षिओं नें प्रत्यक्ष देखकर जिस जिस कर्म सें पुण्य वा पाप कहा है, उन वाक्यनसेंही अयोगीजनोंको पुण्य पाप का निश्चय होसक्ता है उन वाक्यन का अनादर करकें जो पुरुष अपने रायसेंही धर्माधर्म को कथन कर्ते हैं वो पुरुष योग्यबुद्धिमानोंमें धर्मवेत्ता नहीं कहलायसक्के, व उनका कथन भी माननीय नहीं होसक्ता ॥

द्वितीयावृत्तिछपे सत्यार्थप्रकाश के समुल्लास ८ पृष्ठ २२३ में [**मनुष्या ऋषयश्चये ततोमनुष्या अजायन्त,** यह यजुर्वेद में लिखा है] ऐसापाठ है ॥ पंचमावृत्ति के छपे सत्यार्थप्रकाश में भी द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश के सदृशही पाठ है, बारवींवार के सत्यार्थप्रकाश में (**मनुष्या ऋषयश्चये ततोमनुष्या अजायन्त ॥** यह यजुर्वेद और उसके ब्राह्मण में लिखा है] ऐसा पाठ करदिया ॥

और प्रथमावृत्ति के सत्यार्थप्रकाश में वहां यिह पाठ स्वामीदयानन्द जी ने लिखाही नहीं ॥

हे भ्रातः—अब कहो कि इन तीनों में स्वामीजी का लिखा हुआ कौनसा पाठ मानना चाहिये इनमें यदि सम्यक विचार करें तो प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश ही स्वामी दयानन्दजी का रचाहुआ है क्योंकि यिह मंत्र यजुर्वेद में हैही नहीं अतः वो स्वामीजी ने आप छपवाए प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाश में यिह मंत्र लिखाही नहीं फिर स्वामीजी के देहान्त से एक वर्ष पीछे समाजी भाइयों ने जो द्वितीयावृत्ति सत्यार्थप्रकाश छपवाया है उसमें किसी समाजी भाईने यह मनोघड़ित संस्कृतपाठ लिखकर 'यह यजुर्वेद में लिखा है, ऐसेलिखडाला फिर बहुत वर्ष ऐसाही पाठ छपाते रहे पुनः देखभाल पूछ होने पर जब यिहमंत्र यजुर्वेदमें नहींमिला तो वो संस्कृतपाठ लिखकर (यह यजुर्वेद और उसकेब्राह्मणमें लिखाहै) ऐसे पाठको अधिककरडाला परन्तु उससमाजी-भाईने यिह तो नहींलिखा कि—यिहमंत्र यजुर्वेदके कौनसे अध्यायमेंहै कितनी संख्याका मंत्रहै क्योंकि यजुर्वेदमें यिहमंत्र हैही नहीं तो वो कैसे

लिखसक्ताथा इस्सें उसनें (और उसके ब्राह्मणमें) इतना होरआधिकपाठ लिखकर रौलेमें रौला करडाला ॥

द्वितीयावृत्तिछपे सत्यार्थप्रकाशके समु०३। पृष्ठ४० वींमें—[प्राणायामादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः ॥ यह योगशास्त्रका सूत्रहै] ऐसापाठहै पंचमावृत्तिआदिक सत्यार्थप्रकाशोंमें । [योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः—योगसाधनपाद सू० २८] ऐसापाठ करडाला परन्तु---- अर्थ वो प्राणायामहीरखा॥—

और प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाशमें यिहसूत्र स्वामीजीने लिखाहीनहीं—

हे भ्रातृजन--अब कहियेकि-इनमें स्वामीजीकालिखा कौनसापाठहै; यदि वास्तवनिर्णयकरें तो प्रथमावृत्ति सत्यार्थप्रकाशही दयानन्दस्वामीका रचितहै क्योंकि —द्वितीयावृत्तिके सत्यार्थप्रकाशमें जो सूत्रलिखाहै सो मनो घड़ितहै और सूत्रका अर्थभी असंगतही लिखाहुआहै क्योंकि इससूत्रमें प्राणायाममात्रका फल नहींकहाहै और नांही प्राणायाममात्रके करणेसें आत्माका ज्ञान होसक्ताहै ॥ —

योगदर्शनके साधनपाद ४९वें सूत्रमें प्राणायामका साधारणलक्षण कहकर ५०वें और ५१वें इनदोसूत्रोंमें चारप्रकारके प्राणायामका निरूपण कराहै फिर —

ततःक्षीयतेप्रकाशावरणम् ॥ पाद२॥५२॥

धारणासुचयोग्यतामनसः ॥ २॥५३॥

अर्थ—उसप्राणायामके अभ्याससें प्रकाशरूपबुद्धिका पापरूपआवरण क्षीण होजाताहै ॥५२॥ और धारणाओंमें मनकी योग्यता होतीहै ॥ ५३ । इनदो सूत्रोंमें प्राणायामकाफल कहाहै और तुमारे लिखेसूत्रमें तो समाधिपर्य्यन्त अष्टअंगोंके अनुष्ठानकर क्रम२सें अविद्याऽऽदिपंचक्लेशरूप और कर्मोंरूप अशुद्धिके क्षयहुए विवेकख्यातिपर्य्यन्त ज्ञानका प्रकाश होताहै; यिहअर्थहै ॥

हेपाठक—आत्माके प्रत्यक्षज्ञानरूप जो विवेकख्यातिहै सो संप्रज्ञात योगावस्थामें योगरूपहीहोतीहै क्योंकि-आत्मा अतीन्द्रियपदार्थहै अतीन्द्रिय वस्तुका प्रत्यक्ष समाधिविना नहींहोसक्ता; यिह आत्मेक्षणप्रमाणाकग्रंथमें युक्तिप्रमाणोंसें निश्चयहोचुकाहै; वोऐसी योगरूपविवेकख्याति धारणाध्यान समाधिकी परिपक्वताबिना केवलप्राणायामकरही नहींहोसक्ती क्योंकि— संप्रज्ञातयोगके धारणाऽऽदिसाधनत्रय अन्तरंगहैं और यमआदिकपंचसाधन तो वहिरंगहै यिह पातंजलदर्शनके - त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः- ॥पाद३॥७॥ इससूत्रमेंभी प्रतिपादनकराहै ॥

सूत्रका अर्थ - यमनियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार, इन पहिलेपांच वहिरंगोंसें धारणाऽऽदित्रय संप्रज्ञातयोगके अन्तरंगहैं -

हेमित्र—जो परम्परासें साधन हो वो वहिरंग कहलाताहै —

विदितहो कि पापदुर्वासनाऽऽदिक जो चित्तका मलहै और स्थूलता स्पन्दादिक जो प्राणोंका मलहै अर विषयोंमें अभिमुखतादिक जो इन्द्रियों का मलहै; और स्थूलताऽऽदिक जो शरीरका मलहै; ऐसेयिह चित्तप्राणादि-कोंके मल समाधिके प्रतिबन्धकहैं ॥

चित्तप्राणादिकोंके मलरूप प्रतिबन्धकोंकी निवृत्तिद्वारा यमानियमासन प्राणायामादिक पांच संप्रज्ञातयोगके साधनहैं साक्षात्साधननहीं इससें प्राणायामादिक पांचअंगोंके अनुष्ठानकर उनमलोंकी निवृत्तिहुएतें अनन्तर

धारणाध्यानसमाधिद्वाराही संप्रज्ञातयोगावस्था उदयहोतीहै तब आत्माका विवेकख्यातिरूप प्रत्यक्षज्ञानका प्रकाशहोताहै वो प्राणायाममात्रकरही नहीं होसक्ता ॥

यदि प्राणायाममात्रकरही विवेकख्यातिपर्य्यंत ज्ञानकाप्रकाशमानोंगे तो योगशास्त्रमें कथनकरे धारणाध्यानसमाधिरूप अन्तरंगत्रय व्यर्थहोंगें इस्से प्राणायामकरही विवेकख्याति पर्य्यंत ज्ञानका प्रकाशलिखना असंगतहै ॥

हेभ्रातृजन—ऐसाअसंगत अर्थ व असंगतअर्थके अनुकूल मनोघट्टित सूत्र स्वामीदयानन्दजीका लिखामानना योग्यनहींहै ॥

स्वामीदयानन्दजीके बनाए स्वामिजिके छपवाए प्रथमावृत्तिसत्यार्थ-प्रकाशमें यिहसूत्र व असंगतअर्थ स्वामीजीनें लिखाभी नहींहै ॥

फिर—सन् १८८३ ईसवीमें स्वामीजीके देहान्तसें एकवर्षपीछे सन् १८८४ में समाजीभाईओंने छपवाए द्वितीयावृत्तिके सत्यार्थप्रकाशमें मनोघट्टितसूत्र व असंगतअर्थलिखडाला, फिर पंचमावृत्तिप्रभृतिसत्यार्थप्रकाशमें सूत्रतो ठीककरदिया परंतु अर्थ वोही असंगतहीरहा, ऐसेपाठको अधिकन्यूनसमाजी भाईकरदियाकर्तेहैं ॥

यदि आप कहोकि—द्वितीयावृत्तिसत्यार्थप्रकाशमेंभी स्वामीजीनेंही लिखाहै, तो ऐसाअसंगतअर्थस्वामीजीकालिखा नहींहोसक्ता ॥

और प्रथमावृत्तिसत्यार्थप्रकाशके तो बहुतप्रसंगही निकालडालेहैं ॥

समाजीभ्राता०—वो सत्यार्थप्रकाश प्रमाण नहींहै—

ग्रन्थकर्ता०—यिहनवीनही आश्चर्य्यकथनहैकि जो स्वामीजीके परलोक गमनसें पीछे छपवायाहै वो तो प्रमाणहै और जो सत्यार्थप्रकाश आप बनाकर स्वामीदयानन्दजीने आपही छपवायाहै वो प्रमाणनहींहै, ऐसाकथन क्या हासगोचर नहींहै ॥

समाजी०- स्वामीजीने पहिलेसत्यार्थप्रकाशके छपवानेसें तीनवर्षपीछे जो विज्ञापनपत्र निकालाथा उसमें लेखकशोधककी भूललिखदी तो फिर क्या–

ग्रन्थकर्ता०—स्वामीदयानन्दजीने विज्ञापनपत्रमें यिह तो नहीँलिखाकि प्रथमावृत्तिसत्यार्थप्रकाश प्रमाण नहींहै तो तुम कैसे कहसक्तेहोकि–वो प्रमाण नहींहै और उसविज्ञापनमें स्वामीजीलिखतेहैं कि- 'मेरेबनाए सत्यार्थप्रकाश व संस्कार विधि" इस्सें वो सत्यार्थप्रकाश स्वामी दयानन्दजीका बनायाहै यिह उनकेलेखसेंही सिद्धहै और लेखकशोधककी भूलतो अक्षरकी पदकी पंक्तिकीहोसक्तीहै लम्बे२ बुद्धिपूर्वकप्रसंगोंकी भूल नहीं होसक्ती

और लेखकशोधककी भूलभी स्वामीदयानन्दजीने तर्पणश्राद्धमेंही लिखीहै, उससत्यार्थप्रकाशके बहुतजगोंमें जो मांसके नानाविधान लिखेहैं उनमें तो स्वामीजीने लेखकशोधककी भूल नहींलिखी इस्सें वो मांसके सर्वविधानस्वामीजीको स्वीकृतहीरहे, मन्जूरहीरहे वो मांसके अनेकप्रसंगभी समाजीभाईओंनेही निकालडालेहैं

और प्रथमावृत्तिछपे संस्कारविधिग्रन्थमेंभी जो स्वामीजीने बृहदारण्यक उपनिषदका मंत्र और आश्वलायन गृह्यसूत्र मांसभक्षणके विधायक लिखे थे वो भी समाजीभाईओंने निकालडालेहैं

अब कहिये कि संस्कारविधिग्रन्थमें तो स्वामीजीने किसीकी कहीं भी भूल नहींलिखी तो संस्कारविधिग्रन्थसें वोमन्त्र और गृह्यसूत्र क्यों निकालडाले

समाजी०—वोमंत्र और गृह्यसूत्र अत्यन्तउपयोगीनहींथे

ग्रन्थकर्ता०-यिह आपका कथन समीचीननहीं क्योंकि वहां संस्कार

विधि ग्रंथके ११वें पृष्ठपर जो बृहदारण्यकउपनिषदका मन्त्र स्वामीजीने लिखाहै वोमन्त्रसबवेदोंकेजाननेवाले अतिश्रेष्ठगुणोंवाले पुत्रकी उत्पत्तिलिये मांसयुक्तभातखानेका विधानकर्ताहै, ऐसाहीउसमन्त्रका अर्थ स्वामीजीने भी लिखाहै तो वो मंत्र अत्यन्तउपयोगीक्यों नहींहै अर्थात् ऐसेअतिश्रेष्ठ पुत्रहोनेलिये यिहमन्त्र अत्यन्तउपयोगीहीहै।

और संस्कारविधिग्रंथके ४२वें पृष्ठपर अन्नप्राशनसंस्कारमें जो स्वामी दयानन्दजीने आश्वलायनगृह्यसूत्रलिखाहै वोसूत्रभी "ब्रह्मतेजालिये" वेदादि विद्यामें निपुणतालिये बालकको तित्तिरके मांसखुलानेका विधानकर्ताहै तो वोसूत्र अत्यन्तउपयोगी क्योंनहींहै अर्थात् पुत्रके विद्वान्होनेकेलिये भक्ष्य वस्तुका विधायकहोनेसें यिहसूत्रभी अत्यन्तउपयोगीहीहै ॥

समाजी०—पहिले सत्यार्थप्रकाशके और संस्कारविधिके मांसविषयके प्रसंग स्वामीजीनें आपही निकालडालेहैं क्योंकि हमविचारकर्तेहैं कि—

पहिले श्रीस्वामीदयानन्दजी—परमात्मा निराकारको शिवनामसें बतलायाकर्तेथे, रुद्राक्ष और भस्मभी पहनते व लगाते और दूसरोंकोभी उपदेश कर्तेथे ,यिह लेखरामके बनाए स्वामीदयानन्दजीके जीवनचरित्रमें हिस्सादूसरेके सफा ३८में स्पष्टलिखाहीहै ॥

फिरजब सत्यार्थप्रकाश बनाकर संवत् १९३२ में छपवायाथा तब तो रुद्राक्षके भस्मके ख्याल तो स्वामीजी के नहींरहे किंतु मृतपितरोंके तर्पण व श्राद्धका उससत्यार्थप्रकाशमें केईजगे दृढयुक्तिओंसे विधान कराहै अतः-तब तर्पणमें श्राद्धमें स्वामीजीका विश्वास हैहीथा, फिर तीनवर्षपीछे संवत् १९३५ में तर्पण श्राद्धका ख्यालभी स्वामीजीका बदलगया अतएव संवत् १९३५ में विज्ञापनपत्र निकालाउसमें मृतपितरोंके तर्पणका श्राद्धका प्रतिषेध लिखदिया परन्तु मांसविषयक ख्याल तो संवत् १९३५ मेंभी बदला नहींथा क्योंकि—पहिले सत्यार्थप्रकाशमें अपनेलिखेहुए मांसके अनेकविधानोंमें

किसीएककाभी स्वामीजीने उसविज्ञापनपत्रमें प्रतिषेध नहींकराहै ॥

एवंहेमित्र— जैसे रुद्राक्षके भस्मके धारणका ख्याल स्वामीजीका बदलगया फिर तर्पणका श्राद्धका ख्यालभी बदलगया ऐसेही फिर मांसविषयक ख्यालभी स्वामीजीका बदलगयाहोगा।

ग्रन्थकर्ता०—यिहकथनभी समीचीननहीं क्योंकि जो सत्यार्थप्रकाशकी भूमिका संवत् १९३९ में स्वामीजीनें उदयपुरमें लिखीथी उस १९३९ संवत्की भूमिकामें भी पहिलेसत्यार्थप्रकाशमें लिखेहुए मांसके विधानों का स्वामीजीने प्रतिषेध तो नहींकराहै प्रत्युत उसभूमिकामें, स्वामीजीनें लिखाहै कि— [**अर्थकाभेद नहीं कियागयाहै प्रत्युत विशेष तो लिखागयाहै**] यहां विचारकरिये कि—जब पहिले सत्यार्थप्रकाशसें अर्थका भेद नहींकियागया प्रत्युत विशेष लिखागयाहै तो इसस्वामीजीके लेखसें जानाजाताहै कि—संवत् १९३९ पर्य्यन्त स्वामीजीका पहिलेलिखे मांसके विधानोंका ख्याल बदलानहींथा—फिर १९४० संवत्में स्वामीजी परलोकगमन करगए यदि १९४० संवत्मेंभी स्वामीजीका ख्याल वदलजाता तो स्वामीजी विज्ञापन पत्रद्वारा अवश्यबोधन करदेते ,,—

और जब वेदब्राह्मणसूत्रउपनिषद्पुस्तकोंके अनुसारी मांसके होमका, मांसके पिण्डदानका, मांसके भक्षणका विधान स्वामीदयानन्दजी लिखचुकेहैं तो एकस्वामीदयानन्दजीके ख्याल बदलनेसें वेदशास्त्रादिकोंके असंख्यवाक्य प्रक्षिप्त तो सिद्ध नहींहोसक्के ,,—

होर जब संवत् १९३९ की भूमिकामें स्वामीजीने लिखाहै कि—पहिलेसत्यार्थप्रकाशसें अर्थका भेद नहीं कियागया प्रत्युत विशेषलिखागयाहै, तो स्वामीदयानन्दजीके इसलेखसें जानाजाताहै कि—पहिलेसत्यार्थप्रकाशके

अनेकप्रसंग समाजीभाईओंनेही निकाल कर अर्थकेभेद कर डालेहैं"

स्वामीदयानन्दजीके देहान्तसेंपीछे समाजीभाईओंनेही सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि आदिक ग्रन्थोंके पाठ तोड़फोड़ अधिक न्यून कर दिये हैं—इसीपर स्वामी ज्ञानानन्दजी ने मांसमीमांसाग्रन्थमें विस्तार सें लिखा है जिसको देखने की इच्छा हो वो मांसमीमांसाग्रन्थ में देखसक्ता है ॥

१४—समाजीभ्राता०—संवत् १९३५ के विज्ञापनपत्रमें स्वामीजी लिखते हैं कि—**मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कारविधि आदि ग्रन्थों में गृह्यसूत्रों मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुतसे लिखे हैं वे उनउन ग्रन्थों के मतोंको जतानेके लिये लिखेहैं ॥**

ग्रन्थकर्त्ता० —हेभ्रातः—स्वामीदयानन्दजीके इसलेखसेंही तुम्हारा प्रक्षिप्तवाद खण्डित सिद्धहोताहै अर्थात् मांसभक्षणके विधायक वाक्यन को प्रक्षिप्त कहना असत्यही सिद्ध होताहै, क्योंकि—स्वामी दयानन्दजीने संस्कारविधिग्रन्थमें मांसभक्षणका विधायक बृहदारण्यकउपनिषद्का मंत्र और आश्वलायन गृह्यसूत्र लिखे हैं, और यहभी तुमारी बात मानली कि—वे उनउनग्रन्थोंके मतोंको जतानेके लिये लिखेहैं तथापि—स्वामीदयानन्दजीके इसलेखसें ही सिद्ध हुआ कि—संस्कारविधि ग्रन्थ के गर्भाधान संस्कार में जो मांस भक्षणका विधायक बृहदारण्यक उपनिषदका मंत्र लिखाहै श्रेष्ठ गर्भाधानलिये मांससहित भातका भक्षण उसका विषय है वो बृहदारण्यकउपनिषद्का मत है, और अन्नप्राशनसंस्कारमें जो मांस भक्षणके विधायक आश्वलायन गृह्यसूत्र लिखेहैं ब्रह्मतेजआदिकों लिये छीमहीनेके बालको मांससें भोजन खुलाना, उन गृह्यसूत्रोंका विषयहै

वो गृह्यसूत्रोंका मतहै, यिह स्वामीजीके लेखसेंही सिद्धहुआ हेभ्रातः वो वाक्य प्रक्षिप्त सिद्ध नहीं होसक्के अब विचारो कि- सनातनधर्म में तो वेदकाही भाग उपनिषद्ग्रन्थ हैं, और स्वामी दयानन्दजीके मत में ब्राह्मणभाग-उपनिषद् हैं, ईशावास्यउपनिषद् तो संहिताभागकी है दोनोंप्रकारसें इतिहासपुराणादिकोंतें उपनिषदवाक्यगृह्यसूत्र अतिबलवान् प्रमाणहैं ॥

हेभ्रातः—जब स्वामीदयानन्दजीके लेखसें मांसभक्षणके विधायक उपनिषदवाक्यहैं गृह्यसूत्रादिकोंकेवाक्यहैं तो उपनिषदकेगृह्यसूत्रोंके अनुसारी ही मांसभक्षणकेविधायक इतिहासपुराणादिकोंके वाक्यहैं अतःअपने आचार्य्य स्वामीदयानन्दजीसें विरुद्धकहना अर्थात् मांसभक्षणकेविधायक उपनिषद वाक्यकों वा गृह्यसूत्रादिकोंके वाक्यनको वा तदनुसारी मांसभक्षणके विधायक इतिहासपुराणादिकोंके वाक्यनको प्रक्षिप्तकहना, दुराग्रह नहींहै तो होर क्याहै अर्थात् अपनेस्वामीदयानन्दजीके लेखसें विरुद्धकहना समाजी भाईओंका असत्यहीहै ॥

१५—हेभ्रातृजन सत्यधर्मसें आपही निर्णयकरलीजियेकि- वेदोंके भाष्यनमें सायणाचार्य्यआदिकोंनेभी पशुबलीप्रदानके व मांसभक्षणके विधायकवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै,और कात्यायन आश्वलायन पारस्कर गोभिल गौतमप्रभृतिमहर्षिओंनेभी श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रग्रन्थनमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै व उनके कर्कभाष्यादिकोंमेंभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै, और मनु वसिष्ट याज्ञवल्क्य पराशर व्यासप्रभृतिमहर्षिओंनेभी स्मृतिग्रन्थनमें उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै, तथा मनुस्मृतिआदिकोंके कुल्लूकभट्टआदिक टीकाकारोंनेभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै, और सांख्यन्यायमीमांसाप्रभृतिशास्त्रोंमेंभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै तथा उन शास्त्रोंके भाष्यकारभगवद्व्यास विज्ञानभिक्षु शबरस्वामी शंकराचार्य्य

रामानुजस्वामीआदिकोंनेभी उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखाहै ॥

प्रत्युत-सायणाचार्य्यआदिक भाष्यकारोंनेभी, सूत्रग्रन्थनके स्मृतिग्रन्थनके कर्तामहर्षिओंनेभी उनके टीकाकारोंनेभी,तथाशंकराचार्य्य रामानुजस्वामीजी नेंभी वेदसूत्रस्मृतिआदिकोंके उनवाक्यनका पशुबलिप्रदान व मांसभक्षणही अर्थलिखाहै उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींकहाहै ॥

तो मनुस्मृतिकीभाषाटीकाकरणेवाले तुलसीरामस्वामीके कानोंमें क्या कोईफरिश्ता प्रक्षिप्त२ सुनागयाहै ॥

शंका—.

नियुक्तस्तुयथान्यायं योमांसंनात्तिमानवः ।
सप्रेत्यपशुतांयाति संभवानेकविंशतिम् ॥

मनुस्मृतिअ०५-श्लोक३५कीटीकामें तुलसीरामजी लिखतेहैं कि-"नखावे तो२१ जन्मतक पशुबने" क्या इसमेंभी मांसभक्षीवाममार्गिओंका प्रक्षेप नहींजानपड़ता—

समाधान-केवलमनुस्मृतिमेंही नहीं किंतु देखो प्रमाणांक ८२ आदिकों में व्यास वसिष्ट प्रभृतिमहर्षिओंनेंभी विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष लिखेहैं तो तुलसीरामजीको इसमें क्यों असंभव प्रतीतहुआ ॥

हेभ्रातः-जब हाकमोंकी हुकमअदूलीसें और वैद्यजनोंकी आज्ञाके नहीं पालनेसें अतिदोष अतिकष्ट प्राप्तहोताहै तो युक्तयोगीपरमेश्वर युंजानयोगी महर्षिओंके रचितश्रुतिस्मृतिओंके विधिवाक्यनका उल्लंघनकरणेकर अतिदोषका अतिकष्टका होना संभवेहीहै, इसअर्थमें इसमनुअ०५के३५वें श्लोक पर देखो कुल्लूकभट्टकी टीका प्र०२७—**श्राद्धे मधुपर्केच यथा शास्त्रंनियुक्तःसन्योमनुष्योमांसंनखादति समृतः सन्नेकविंशतिजन्मानिपशुर्भवति । यथाविधिनियुक्तस्त्वित्येतन्नियमातिक्रमफलविधानामिदम् ॥**

अर्थ-श्राद्धमें और मधुपर्कमें यथाशास्त्र प्रेराहुआ जो मनुष्य मांसकोनहींखाता वो मनुष्य मरकर २१जन्म पशुहोताहै—इसमें कुल्लूकभट्ट टीकाकार कहते हैं कि—जैसेशास्त्रविधिसें प्रेराहुआहै ऐसे इसनियमके उल्लङ्घनके फलका विधान यिहहै ॥

इसीअर्थमें इसमनु अ०५के ३५वें श्लोकपर देखो गोबिन्दराजकी टीका प्र०२८— **श्राद्धमधुपर्कयोः शास्त्रमर्यादानतिक्रमेण नियुक्तःसन्योमनुष्योमांसंनाश्नाति समृतः सन्नेकविंशतिजन्मानि पशुत्वंप्राप्नोतिइति ॥ यथाविधिनियुक्त स्त्विति एतान्नियमव्यतिक्रमफलकथनम् ॥**

अर्थ-शास्त्रकी मर्यादाको नहींउल्लंघनकर्के नियमविधिसें प्रेराहुआ जो मनुष्य श्राद्धमें और मधुपर्कमें मांसको नहींखाता वो मनुष्य मरकर २१जन्म पशु बनेहैं। इसमें गोविन्दराजटीकाकार कहतेहैं कि-जैसेशास्त्रविधिसें प्रेराहुआहै ऐसे इसशास्त्रीयनियमके उल्लंघनके फलका कथनकराहै ॥

हेपाठक—देखो इन टीकाओंमेंभी संस्कृतटीकाकारोंने नियम विधिके उल्लंघनकाही यिह अशुभ फल स्पष्टकहाहै तो तुलसीरामजी क्यों दुराग्रहकररहेहैं ॥

विचारदेखिये कि-बहुतकालसें जैनीसाधुओंके व्याख्यानोंद्वारा जैनमतका हिन्दुओंमें वेसमझीसें असर पड़नेकर जबसें बलिप्रदानका व विहितमांसके खानेका संकोच हुआहै तबसें वैदिकमतवाले हिन्दू नीचेसें नीचे गिरते गए यहांतककि—इनको मरी हुई कोम कहने लगे अर्थात् मरी हुई कोम बनगए ॥

तुलसीरामजीसें पूछाचाहिए कि—डी॰ ए॰ वी॰ कालिजके संस्कृत प्रोफैसर पं॰ राजारामजीने जोमांसभक्षणविषयका बृहदारण्यक उपनिषद्कामंत्र और पारस्कर गृह्यसूत्रादि लिखे हें, उनका अर्थभी मांसभक्षणही लिखा है तो क्या राजारामजीके ग्रन्थोंमेंभी वाममार्गिओंका प्रक्षेपहै, यिह इसवर्तमान समयमें कोई कहसक्ता है स्वामीदयानन्दजीने प्रथमावृत्ति छपवाए संस्कारविधिग्रन्थमें जो उपनिषद् मंत्र और आश्वलायनगृह्यसूत्र लिखे हैं उनका अर्थभी मांस भक्षणही स्वामीजीने लिखाहै तो क्या संस्कारविधिग्रन्थमेंभी वाममार्गिओंका प्रक्षेप है, यिहतो कोई भूलकरभी नहीं कहसक्ता फिर देखो संवत् १९३५ का स्वामीदयानन्दजीका लिखा विज्ञापन पत्र पृ॰ २९—**मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कारविधिआदिग्रन्थोंमें गृह्यसूत्रों मनुस्मृतिआदिपुस्तकोंके वचनबहुतसे लिखेहैं वे उन२ग्रन्थोंके मतोंको जनानेकेलिये लिखेहैं ॥**

हेपाठक—यहां विचारकरोकि-प्रथम तो स्वामीदयानन्दजीनें संस्कारविधिग्रन्थमें मांसभक्षणका विधायक बृहदारण्यकउपनिषदका मंत्र और गृह्यसूत्र लिखेहैं उनकेनीचे अर्थभी मांसभक्षणही लिखाहै तो स्वामीजीके इसलेखसेंही यिह सिद्धहोताहै कि—उपनिषद् काभी मंत्र मांसभक्षणका विधायकहै और गृह्यसूत्रभी मांसभक्षणके विधायकहैं, स्वामीजीके इसलेखसेंभी यदि तुलसीरामजीका भ्रमदूर नहींहुआ तो फिर तीन वर्षपीछे स्वामीदयानन्दजीनेंजो एकविज्ञापनपत्र निकाला उस संवत्१९३५के विज्ञापनपत्रमें स्वामीजीने तुलसीरामजीका तथा होरसमाजी मेरेसब भ्राताओंका भ्रम दूर-

करणेवाला यिहलेख लिखाहै कि—मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश व संस्कार-विधिआदिग्रन्थोंमें गृह्यसूत्रआदिकोंके वचन उनउनग्रन्थोंके मतोंको जतानेकेलिये लिखेहैं

हेभ्रातृजन – जबस्वामीदयानन्दजी गृह्यसूत्रादि ग्रन्थोंका मत लिखतेहैं तो तुलसीरामजीका वारंवार प्रक्षिप्तलिखना अपनेआचार्य्यस्वामीदयानन्दजी सें विरुद्ध तथा मनुस्मृतिके संस्कृतटीकाकारोंसें विरुद्ध दुराग्रहहीहै ॥

हेपाठक–उनवाक्यनको प्रक्षिप्त कहसक्तेहैं जिनको पुरातन भाष्यकार टीकाकारोंने प्रक्षिप्तकहाहो उक्तमहर्षिओंने उनवाक्यनको प्रक्षिप्तनहींकहाहै किन्तु उनवाक्यनके अनुसार विहितमांसके भक्षणका विधानकराहै तो उनसर्वपुरातन भाष्यकार सूत्रकार स्मृतिकार शास्त्रकार टीकाकारप्रभृतिमहर्षिओंसें विरुद्ध नवीनसमाजीजनोंका प्रक्षिप्तवाद असत्यहीहै ॥

१६—जब जब किसीनें अत्याचार कराहै व करियेहै तबतब उस २ अत्याचारके बोधकग्रन्थ रचकर विद्वज्जनोंने प्रचलित करेहैं अर करियेहैं, जैसे रावणआदिराक्षसोंके और कंसदुर्योधनआदिकोंके अत्याचारोंके बोधक संस्कृतइतिहासग्रन्थ विद्वज्जनोंके रचित प्रचलितहैं, और राजोंके पातशाहोंके अत्याचारोंविषयकभी अंगरेजीमें फारसीमें, हिन्दीभाषाऽऽदिकोंमें असंख्य ,तारीखें, इतिहासग्रन्थ रचेगएहैं ॥

यदि—वेदोंके संहिताभागोंमें, ब्राह्मणभागोंमें, उपनिषद्भागोंमें उनके भाष्यपुस्तकोंमें, श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रग्रन्थोंमें, स्मृतिओंमें, उनकी टीकाओंमें, इत्यादिक असंख्यग्रन्थनमें असंख्यवाक्य प्रक्षिप्त करेजातेतो ऐसेमहाऽत्याचारोंके बोधकभी अनेकग्रन्थ रचकर विद्वज्जन अवश्यंप्रचलित करते क्योंकि—असंख्यपुस्तकोंमें असंख्यबाक्यनको दश वीस मनुष्य तो प्रक्षिप्त करहीनहींसक्ते अतः यिह कोई थोडीबात नहींहै परंतु पहिले

किसीभीविद्वान्ने इसविषयका कोईभीग्रन्थ नहींबनाया, और पुरातनकोई भीआचार्य्य उनवाक्यनको प्रक्षिप्त नहींलिखगया तो अब तुलसीरामादि नवीनसमाजीभ्राताओंका प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

१७—यदि आप पूछेंकि—पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायकवाक्य यदि प्रक्षिप्त नहींहैं तो बहुतवैदिकमतवालोंकी पशुबलि-प्रदानमें व विहितमांसके भक्षणमें प्रवृत्ति दूर क्योंहोगई तो

उत्तर—जैनीसाधुओंके व्याख्यानोंकर जैनमतका असर हिन्दुओंमें बेसमझीसें होनेकर उसमेंप्रवृत्ति दूरहोगई ।

जैनीभाई आपभी स्पष्टकहतेहैं देखो भीमज्ञानत्रिंशिकाग्रन्थकी भूमिकाके ७ वें पृष्ठकी ७वींपंक्तिसें प्र० ३०—

ब्राह्मणोंके धर्मको वेदमार्गको तथा यज्ञमें होतीहिंसाको खण्डधक्का इसीधर्मने लगायाहै ॥ कुलाहिंदुस्तानमेंसें पशुयज्ञ निकलगयाहै फ़क्क-छेक दक्षिणमें जहां बौध या जैनोंकी छाया पड़नहींसकीहै वहांही कायमहै ॥

जैनीभाईओंके इत्यादिकलेखोंसें निश्चितहोताहै कि—पशुबलिप्रदानके और मांसभक्षणके विधायक वाक्य प्रक्षिप्तनहींहैं किंतु हिंदुओंमें बेसमझीसें जैनमतका असर होनेकर उनकाप्रचार नहींरहा अतः उनवाक्यनको प्रक्षिप्तकहना असत्यहीहै ॥

हेप्रियपाठक—यिह प्रक्षिप्तहै यिह अप्रमाणहै, हारेहुएपुरुषोंकी यिह दोडंगोरीहैं—क्योंकि विचारिये कि—अतीन्द्रियपदार्थविषयक पूर्ण-

योगजज्ञानवाले जो सूत्रस्मृतिग्रन्थोंके कर्तामहर्षिहैं उनके वाक्यनको योगजज्ञानसें शून्यपुरुष अप्रमाण कैसे कहसक्तेहैं और जिनवाक्यनको पुरातनकिसीभाष्यकार टीकाकारने प्रक्षिप्त नहींलिखाहै, फिर स्वामीदयानन्दजीभी जिनवाक्यनको संस्कारविधिग्रन्थमें लिखचुकेहैं उनवाक्यनको अब प्रक्षिप्त कौनकहसक्ताहै ॥

भावार्थयिह—इससमय अपनीसम्मात्तिको अपने रायको धर्म समझतेहैं उक्तमहर्षिओंके वाक्यनकी अपेक्षा नहींरखते अतः जब अर्थके निर्णयमें प्रमाणदिखाएजातेहैं तब उनसें निरुद्धहुए थकितहुए मेरेभ्राता समाजीओं को या अप्रमाणरूप या प्रक्षिप्तरूप डंगोरीका आश्रय लेनापड़ताहै वास्तवसें पशुबालिदानके व मांसभक्षणके विधायक आर्षवाक्य न अप्रमाणहैं, नांहीं प्रक्षिप्तहैं किंतु आस्तिकपुरुषोंसें माननीय प्रबलप्रमाणहैं ॥

अतः श्रुतिस्मृतिओंसें विहितहोनेकर विहितमांसके भक्षणसें कुछदोष नहींहोसक्ता ।

पूर्वपक्षी०—कहीं धर्मशास्त्रनमें मांसभक्षणको निर्दोषभीकहाहै ॥

आस्तिक०—धर्मशास्त्रनमें बहुतजगें कहाहैकि देवतापितरआदिकोंको पूजकर समर्पणकर्के मांसभक्षणसें कोईदोषनहींहोसक्ता ।

एसमांसभक्षणमें निर्दोषताके प्रतिपादकप्रमाणोंको मैं अब दिखलाताहूं

मनुस्मृति अ०३१—**क्रीत्वास्वयंवाऽप्युत्पाद्य परोपकृतमेववा ॥ देवान्पितॄंश्चार्चयित्वाखादन्मांसंनदुष्यति ॥** अ० ५ ॥ ३२ ॥

इसश्लोकपर मेधातिथिका मनुभाष्य अ० ३२ — **मृगपक्षि**

मांसविषयमिदंशास्त्रम् । रुरुपृषतादीनां शशकपिञ्जलादीनांमांसंदेवानांपितॄणांचार्चनंकृत्वा खादतोनदोषः ॥ अर्थ—मृगपक्षीआदिकोंके मांसको मोललेकर वा आप मारकर वा किसीभ्राताामित्रआदिकने दियाहो, ऐसेतीनप्रकारके मांसको देवतापितरोंको पूजकर खानेवालेपुरुषको दोष नहींहोता ॥

मनुस्मृति प्र० ३३—चराणामन्नमचरा दंष्ट्रिणामप्यदंष्ट्रिणः ॥ अहस्ताश्चसहस्तानां शूराणांचैवभीरवः ॥ अ० ५ ॥ २९ ॥

मनुस्मृति प्र० ३४—नात्तादुष्यत्यदन्नाद्यान् प्राणिनोऽहन्यहन्यपि ॥ धात्रैवसृष्टाह्याद्याश्च प्राणिनोऽत्तारएवच ॥ ५ ॥ ३० ॥

इसश्लोकपर सर्वज्ञनारायणकीटीका प्र० ३५—अहन्यहन्याहारबुद्ध्याऽदन्नपि न दुष्यति न पापं लभते ॥

इसीमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकीटीका प्र० ॥ ३६ ॥

भक्षयिता भक्षणार्हान्प्राणिनः प्रत्यहमपि भक्षयन्नदोषंप्राप्नोति, यस्माद्विधात्रैव भक्षणार्हा भक्षयितारश्च निर्मिताइति

हरिणगौआदि चरजीवोंका अचर तृणपत्रादिक अन्नहै और व्याघ्रादिक दंष्ट्रावालेजीवोंका दंष्ट्रारहित हरिणादिकजीवअन्नहै, हस्तवालेमनुष्यनका हस्तरहित मत्स्यआदिक अन्नहै, सिंहप्रभृति शूरोंका हस्तीआदिकभीरुजीव अन्नहै ॥२६॥

भक्षणयोग्यजीवोंको हररोज खाताहुआ मनुष्य दोषवाला नहींहोता क्योंकि—विधातानेंही भक्ष्यजीव और उनके भक्षकजीव रचेहैं ॥

याज्ञवल्क्यस्मृति प्र० ३७— **देवान्पितॄन्समभ्यर्च्य खादन्मांसंनदोषभाक्** ॥अ०१॥ १७८ अर्थ देवतोंको पितरोंको पूजकर मांससेंहोमकर मांसखानेवाला मनुष्य दोषभागी नहींहोता

भीष्मपितामहका वाक्य महाभारत प्र० ३८— **विधिनावेददृष्टेन तद्भुक्त्वेहनदुष्यति ॥ यज्ञार्थे पशवःसृष्टा इत्यपिश्रूयतेश्रुतिः** ॥ प०१३ ॥ अ० ११६ ॥ १४ ॥ अर्थ- वेदमें देखेविधिसें उसमांसको खाकर मनुष्य दोषवाला नहींहोता, क्योंकि यज्ञोंकेलिये पशुओंको रचाहै, यिहभी वेदवाक्य सुननेमें आताहै

महाभाररत प्र० ३९ **अत्रापिविधिरुक्तश्च मुनिभिर्मांसभक्षणे ॥ देवतानांपितॄणांच भुंक्तेदत्वापियः- सदा ॥ यथाविधियथाश्राद्धं नप्रदुष्यतिभक्षणात्** पर्व३ ॥ अ० २०८ ॥ १४ ॥ अर्थ—यहां मांसभक्षणमें मुनिओंने विधिकहाहै कि -विधिसें देवतोंको और श्राद्धमें पितरोंको जोपुरुष सदादेकर्के मांसको खाताहै वोपुरुष मांसभक्षणसें दोषवाला नहींहोता ॥-

मार्कण्डेयपुराण अ०४० पितृदेवादिशेषंच श्राद्धेब्राह्मणकाम्यया ॥ प्रोक्षितंचौषधार्थंच खादन्मांसंनदुष्यति ॥ अ० ३२ ॥ ४ ॥ अर्थ—पितृकर्मश्राद्धमें अवशिष्टमांसको, और देवता अतिथिआदिकोंको अर्पणकर्के अवशिष्टमांसको और ब्राह्मणोंकी कामनासें सिद्धकरे मांसको, अर प्रोक्षितमांसकोअर्थात् यज्ञलिये वेदमंत्रनसें संस्कृत मांसको, और औषधलिये मांसको खानेवाला पुरुष दोषवाला नहींहोता

भविष्यपुराणप्र०४१—प्राणात्ययेप्रोक्षितंचश्राद्धेचद्विजकाम्यया । पितृन्देवांश्चार्पयित्वा भुञ्जन्मांसंन दोषभाक् ॥ब्रह्मपर्व१ अ०१८६॥२६॥

अर्थ प्राणान्तसमय अर्थात् औषधलिये मांसको, और प्रोक्षितमांसको श्राद्धमेंमांसको अर ब्राह्मणोंकी कामनासें सिद्धकरे मांसको, और देवतोंको पितरोंको अर्पणकर्के मांसको खानेवालापुरुष दोषभागी नहींहोता ॥

विदितहो कि—वेदस्मृतिआदिकोंमें मांसविषयकेइत्यादिकनानावाक्यनको देखकर जैनीभाईजी अपनेग्रंथमें । ऐसेनिर्दयानिर्लज्जोंको ऋषिओंमेंबतलायाहै ॥ धिगहैऐसेसतयुगको और धिगहैजिनबतलायाहै ॥ इत्यादिक कुत्सितशब्द परमपूज्य महर्षिओंमें लिखेहैं सो ऐसेशब्दोंका लिखना उसलेखकजैनीभाईकी "अयोग्यताहै" नालायकीहै क्योंकि—निवृत्तिमार्गवाले और प्रवृत्तिमार्गवाले सर्वमनुष्यमात्रप्रति मांसके त्यागका उपदेश एकजैनमतमेंहीहै, होरकिसी

मतमें ऐसा उपदेश नहींहै तो हेभ्रातः—होरसर्वमतोंसें विरुद्धहोनेकर युक्तिहीन एकस्वमतमें दुराग्रहकर अन्यमतोंके आचार्य्योंको निकृष्टशब्दकहने क्या अयोग्यता नहींहै ॥

हेपाठक—आश्चर्य्यहै कि—सर्वमतोंके आचार्य्योंको और 'लायक' योग्य बुद्धिमानोंको जैनीभाई कुछ जानतेहीनहीं॥

हेभ्रातः—मनुष्यमात्रको मांसका त्याग उचितहै अथवा अधिकारभेदसें किसीको मांसका त्याग किसीको मांसका खाना उचितहै,इसअर्थका निर्णय तो अब अवश्यंकराहीचाहिये, जैनीभाईओंसें प्रमाणोंद्वारा वो निर्णय नहीं होसक्ता क्योंकि उनके और हमारे माननीयप्रमाण भिन्नरहैं अतः जैनी भ्राताओंसें विचार तो युक्तिओंद्वारा होसक्ताहै इस्सें वो निर्णय तृतीययुक्ति प्रकाशमें कराजावेगा ॥

पूर्वपक्षी०—यदि मांसखानेसें दोष न होतातो पहिलेदेवतापितर अतिथिआदिकोंको समर्पणकरनेकी क्या आवश्यकताथी अर्थात् देवताऽदि-कोंको समर्पणकरे विनाही मांसको खालेते ॥

आस्तिक०—देवताअतिथिआदिकोंको वोही पदार्थ समर्पणकराजाताहै जो निर्दोषहो शास्त्रविहितहो, नां कि निषिद्धभी । और धर्मशास्त्रोंमें मांस कीन्यांई देवताअतिथिआदिकोंके उद्देशसेंविना अन्नकेभी पकानेसें व खानेसें महापापकहाहै देखिये—

भगवद्गीता—भुञ्जतेतेत्वघंपापा येपचन्त्यात्मकार-णात् ॥अ०३॥१३॥—

मनुस्मृति—अघंसकेवलंभुंक्ते यःपचत्यात्मकार-णात् अ०३॥११८॥

इसमनुवाक्यपर कुल्लूकभट्टकी टीका-यस्त्वात्मार्थमेवान्नं पक्त्वाभुङ्क्ते देवादीभ्योनददाति स पापहेतुत्वा त्पापमेवकेवलंभुङ्क्ते नान्नम् । तथाचश्रुतिः— केवलाघोभवतिकेवलादी ॥

अर्थ-जोपुरुप अपनेवास्तेही अन्नपकाकर खाताहै देवताअतिथिआदि-कोंको नहींदेता वो पापका हेतुहोनेकर वोपापीपुरुष अन्न नहींखाता किंतु केवलपापकोहीखाताहै अर्थात् वो अन्नखाभा पापहीहै,

वैसेही श्रुति कहतीहै कि- केवलआपही खानेवाला केवलपापी होताहै ॥

इत्यादिक प्रबलप्रमाण जैसे देवताऽदिकोंके उद्देशसें बिना अन्नके पकानेसे खानेसे पाप कहतेहैं, वैसेही देवताऽऽदिकोंके उद्देशसे बिना मांसके पकाने खानेसे पाप कहते हैं अतः विहितअन्न व विहितमांस तुल्य ही है॥

विदित हो कि-वेदोंकी प्रत्यक्षनिन्दाका ही नाम नास्तिकता नहींहै किन्तु वेदपाठका, परिवर्तन, बदल देना वा दुराग्रहसें विपरीत अर्थ करना, वा वेदवाक्यनके सत्यअर्थका दुराग्रहकर नहीं मानना, इत्यादिकभी नास्तिकताके लक्षणहैं क्योंकि यह सबलक्षण वेदोंमें अश्रद्धाकर होते हैं, यदि वेदोंको ईश्वररचित मानें तो श्रद्धाहो फिर यह सबलक्षण नहीं हो सकते ॥

अतः वेदमतसें विपरीतनिश्चयवालेका नाम नास्तिक है, इससें हेभ्रातृजन नास्तिकनाम किसीनिन्दाका बोधक नहींहै अतः नास्तिक नामके श्रवणसें जैनीभाईआदिकोंको क्षोभ करना योग्य नहीं ।

पूर्वपक्षी० - यद्यपि उक्त बहुतप्रमाणोंमें मांसको घृततैलशाकआदिकों-

कीन्यांई शुद्धपवित्र कहाहै, और बिनामांगे कोईदे तो उसमांसके वापसहटानेका निषेधकराहै, उसके ग्रहणकरणेका विधानकराहै, और देवतापितरआदि-कोंको अर्पणकर्के मांसखानेसें कोईदोष नहींहोता,, यिहभी स्पष्टबोधनकराहै तथापि अहिंसाप्रदीपके द्वितीयभागमेंलिखाहै कि—वेद स्वतःप्रमाणहै इस-लिये हम मांसत्यागके विषयमें प्रमाणराज वेदकेही पहिले प्रमाण दिखा कर पीछे औरसब शास्त्रादिकोंकेभी प्रमाण देंगे ॥—

श्रीवेदभगवान्—इषेत्वा १॥ऊर्जेत्वा २॥वायवस्थ ३॥ देवोवःसविता प्रापयतु श्रेष्ठतमायकर्मण आ प्यायध्व मघ्न्या इन्द्राय भागम्प्रजावती रनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन्गोपतौ स्यातबह्वीः ४॥यजमानस्य पशून्पाहि ५॥यजुरकाण्डिका १ ॥ अर्थ --पूर्वप्रकरणमें अर्थयिह है कि–हेगौओ सबका प्रेरक ज्योतिःस्वरूप परमेश्वर तुमको यज्ञस्वरूप श्रेष्ठकर्मकेलिये बहुतघासवाले बनमें पहुंचावे जिससें तुम अपनी इच्छा के अनुसार घासोंको खाकर हेनमारणेयोग्य गौओ, इन्द्रके वास्तेहविबनानेके लिये उस हविके कारण, दुग्धको बढाओ, ॥ जीवितसन्तानवाली, कृमिपीडाआदि क्षुद्ररोगरहित, तुमको चोरपुरुष चुरानेको मत समर्थहो, चण्डाल वा व्याघ्रादिकजीव मारनेको मत समर्थ हो, इस गौओंकेस्वामी यजमानके पास निरन्तर रहने वाली बहुतसीं हो ॥

आस्तिक०१–हे मित्र, इषेत्वा, इत्यादिक पहिले तीनमंत्रनका अर्थ तुमने क्यों नहीं लिखा। यदि कहो कि–इनमंत्रनका अर्थ मांसके प्रसंग

में उपयोगी नहींथा इसलिये नहीं लिखा तो यहां इनमंत्रोंके लिखने का भी कुछ उपयोग नहीं था ॥

२–यिह चतुर्थमंत्रभी प्रकरणमें उपयोगी नहींहै क्योंकि–तुमारेलिखे अर्थानुसारभी इसचतुर्थमंत्रमें मांसका कोईप्रसंग नहींहै, मांसकाबोधककोई-पदभी नहींहै मांसका त्यागभी नहींकहाहै अतः यिहचतुर्थमंत्रभी प्रकरणमें उपयोगीनहींहै ॥ –

पूर्वपक्षी०–**यजमानस्य पशून्पाहि** ॥ यह यजुर्वेदके प्रथमाध्यायकी १ कण्डिकाका पंचममंत्रहै, भाव–हेदेवते यजमानके पशुओं-की व्याघ्रचोरादिदुष्टजीवोंसें रक्षाकर

आस्तिक०—हेमित्र इसपंचममंत्रका शाखादेवताहै अतः हेपलाशशा-खादेवते, ऐसेलिखना योग्यथा—

यहां प्रसंग यिहहै कि –इषेत्वा इसमंत्रसें जो पलाशशाखा गौओंसें वछड़ोंको अलगकरनेकेलिये काटीथी वो कार्य्यकर्के उंचैस्थानपर उसशाखा-को इसपंचममंत्रसें स्थापनकर्तेहैं —

इसपंचममंत्रमेंभी पलाशशाखादेवतासें यजमानके गौवत्सआदिपशुओं-की व्याघ्रचोरादिकोंतें रक्षाकी प्रार्थनाकीहै ॥

हेपाठक—इसपंचममंत्रमेंभी मांसका वाचककोईपद नहींहै, मांसका प्रसंगभी नहींहै, मांसभक्षणका त्यागभी नहींकहाहै, अतः यिह पंचममंत्रभी प्रकरणमें अनुपयोगीहीहै ॥

पूर्वपक्षी–मांसखानेके केवल त्यागसें गोरक्षा और गोवृद्धि होसक्ती है इसलिये मांसका त्याग करा चाहिये ॥

आस्तिक०–रामलक्ष्मणआदिक अवतार और वेदवेताब्राह्मण तथा नल

अम्बरीष युधिष्ठिरप्रभृति महाराजे मांसकोखाते खुलातेरहेहैं, वो गौओंकी रक्षावृद्धिभी कर्तेरहेहैं, अतः मांसके त्यागसें गौओंकी रक्षावृद्धि नहींहोसक्ती किंतु गौओंकी सेवाकर पालन पोषणकर गोरक्षावृद्धि होसक्तीहै ॥

पूर्वपक्षी० नीचेलिखे मंत्रमें परमेश्वरसें प्रार्थना की जातीहै कि–यह गौ यजमानको पूर्णआयु देनेवालीहो यथा–**माविश्वायुः** ॥यजु. क. ४॥१॥ यज्ञमें आचार्य्य गोदोहनेवालेसें कहताहै कि–हेगोदोहक जिसगौको तुमने दुहाहै वह गौ विश्वायुः इसनामसें कहनेयोग्यहै तात्पर्य्य कि–मैं ईश्वरसें प्रार्थना कर्ताहुं कि–वहगौ तुझे पूर्णआयु देनेवालीहो ॥

आस्तिक०–हेमित्र–यदि यज्ञमें ईश्वरसें आचार्य्यनें ऐसी प्रार्थनाकी तो हच्छाकरा परन्तु अजआदिकोंके मांसभक्षणके प्रसंगमें तो कुछभीसिद्ध नहींहोता, आश्चर्य्य है कि प्रसंगमें अनुपयोगी ऐसेऐसप्रमाण लिखतेहुए तुमको लज्जाभी नहींआती ॥

पूर्वपक्षी ० **माविश्वकर्मा** ॥ यजु.क.४॥२॥

हे गौदोहक जिस गौको तुमने दुहा है वहगौ संसारकी स्थितिका कारण है क्योंकि–यज्ञों में हविका साधन होकर सब की कामनाओंको सिद्ध करती है वह हमारे इस यजमानकी कामनाको सिद्ध करे ॥

आस्तिक० – इसमंत्रका तो–हेगौदोहक हविलिये घृतदुग्धका साधनहोनेकर वो गौ संपूर्ण कर्मकाण्डकी सम्पादन करने वाली है, यह अर्थहै होर अधिकअर्थ तो तुमारी कल्पना है वोभी स्वीकार कर्ता हूं तथापि मांसके प्रकरणमें यह वाक्यभी उपयोगी नहींहै क्योंकि–इस मंत्रमें मांसका कोई प्रसंगभी नहींहै मांसका बोधक कोई पदभी नहीं है, मांसभक्षणका त्यागभी नहीं कहाहै अतः मांसके प्रसंगमें यह

मंत्रभी अनुपयोगीहीहै, हे भ्रातः क्या विद्वान्पुरुष प्रकरणमें ऐसे अनुपयोगी वाक्यका प्रमाण देते हैं ॥

पूर्वपक्षी-गौ हविका कारण होकर जगतको स्थिर रखतीहै, इसमें और भी, श्रुतिप्रमाणहै जैसे-**अग्नेर्वै धूमोजायते धूमादभ्रमभ्राद्वृष्टिः** यज्ञकीअग्निसें धूम पैदाहोकर मेघबनताहै, फिर मेघसें वर्षा होती है, इसीपर श्रीकृष्णभगवान्की व मनुजी की सम्मतिएं हैं ॥

आस्तिक०हेमित्र, यज्ञलिये दुग्धका कारण गौहै परंतु श्रुति गीता मनुजीके इन वाक्यनमेंभी मांसका कोई प्रसंग नहींहै, मांस का वाचक कोई पद भी नहीं है, मांसभक्षणका त्याग भी नहीं लिखा है अतः मांस के भक्ष्याभक्ष्यके प्रकरणमें यह वाक्य भी अकिंचित्करहैं अर्थात् कुछ सिद्ध नहीं कर सकते इससें प्रकरणमें अनुपयोगी ही हैं ॥

पूर्वपक्षी०-यदि कृष्णजीके वचनपर विश्वास रखते हो, संसार को स्थिर रखना चाहते हो, तो मांस छोडकर श्रीकृष्णजीकीन्याई गौओंकी सेवा करो ॥

आस्तिक०-हे भ्रातः-यद्यपि श्रीकृष्णजी जबतक नन्दगोप के गृह में गोपालरूपधारेरहे, तबतक वच्छेओं को गौओं को चराते रहे हैं तथापि श्री कृष्णजीका ऐसा वाक्य तो कोईएकभी तुमने नहीं लिखा कि जिसमें श्री कृष्णजीने कहाहो कि, मांसको मत खावो प्रत्युत ब्रजमें नन्दगोपआदिकोंको स्वयं श्रीकृष्णजीने प्रेरणाकीथी कि तुम मेध्यपशुको मारकर गोवर्द्धनकी पूजा करो, ऐसी कृष्णजीकी प्रेरणासें ब्रजवासी नन्दआदि गोपालजनोनेभी वैसेही कराथा, तब क्या संसार स्थिर नहीं रहाथा, देखो-

विष्णुपुराणप्र०४२—तस्माद्गोवर्द्धनःशैलो भवद्भिर्विविधार्हणैः। अर्च्यतांपूज्यतांमेध्यंपशुंहत्वाविधानतः

अंश ५॥ अ० १० ॥ ३८ ॥

अर्थ—जिसहेतुसें वैश्यजनगोपालोंके गौ और पर्वतही पूज्यहैं उससें तुम नन्दप्रभृतिगोपालोंने विधिसें मेध्यपशुको मारकर नानापुष्पादिकोंसें गोवर्द्धनपर्वतकी सेवापूजाकरणीयोग्यहै ॥

विष्णुपुराणप्र०४३—तथाचक्रुतवन्तस्ते गिरियज्ञं-व्रजौकसः। दधिपायसमांसाद्यैर्ददुःशैलबलिंततः॥ द्विजांश्चभोजयामासुःशतशोऽथसहस्रशः ॥ अं०५॥अ०१०॥४४॥

अर्थ —फिर ऐसीश्रीकृष्णजीकी प्रेरणासें ब्रजवासी नन्दआदिक गोपभी वैसेही गिरियज्ञकोकर्तेभए, दधिदुग्धमांसादिकोंसें गोवर्द्धनपर्वतप्रति बलिकोंदेतेभए, और सैंकड़ेहजारोंब्राह्मणोंको भोजनकरवातेभए ॥

हेपाठक-देखो विष्णुपुराणमें साक्षात्कृष्णजीने श्रीमुखसें गौओंकी रक्षालिये वृद्धिलिये पशुबलिप्रदानमें नन्दआदिकगोपजनोंकोप्रेरणाकी, फिर नन्दप्रभृतिगोपजनोंनेभी वैसेहीकृष्णजीके कथनानुसार मांसादिकोंसें बलिप्रदानकिया और ब्राह्मणोंकोखुलाया ॥

हेमित्र-श्रीकृष्णजीके ऐसे पशुबलिप्रदानकेविधायक स्पष्टवाक्यनको छिपाकर विपरीतअर्थके लिखनेसें तुम क्या आस्तिक कहलाय सक्तेहो ॥

हेपाठक-गोपजनोंनेदी उसबलिको पर्वतके देवतारूपहुए कृष्णजी

खातेभीभए, यिहभी वहांही कहाहै देखो विष्णुपुराणअ० ४४—

गिरिमूर्द्धनिकृष्णोऽपि शैलोऽहमितिमूर्त्ति-
मान् । बुभुजेऽन्नंबहुविधं गोपपर्य्याहृतंद्विज ॥
अं० ५॥अ० १०॥४६॥ तेनैवकृष्णोरूपेण गोपैः-
सहगिरेः शिरः ।अधिरुह्यार्चयामास द्वितीया-
मात्मनस्तनुम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—गोवर्धनपर्वतके शिखरमें "मैंपर्वतहूं" ऐसेसत्यसंकल्पसें पर्वतके देवमूर्त्तिहुए कृष्णजी गोपजनोंने प्राप्तकरे बहुतप्रकारके उसअन्नको खाते-भए ॥४६॥

और पहिले उसीकृष्णरूपसें गोपोंकेसाथ गोवर्धनपर्वतके शिखरपर चढ़कर उक्तबलिप्रदानसें पूजा कर्तेभए और दूसरीपर्वतकी देवतामूर्त्तिसें उसको खाते भए ॥

हेमित्र—यदि कृष्णचन्द्रमें तुमारीश्रद्धाहै, व तुम आस्तिकहुएचाहतेहो तो इसकृष्णजीके उपदेशको देखकर श्रुतिस्मृतिओंके अनुसारीवर्तावकरो ॥

पूर्वपक्षी० नीचेलिखे मंत्रोंसेंबढ़कर पवित्र और सत्यभूतोंकी दयाका उपदेश औरक्याहोसक्ताहै देखो-

भेषजमसि भेषजङ्गवेऽश्वायपुरुषायभेषजम् ।
सुखम्मेषायमेष्यै ॥यजु० अ० ३॥५९॥

अर्थ—हेरुद्र आपऔषधकेसमान सबउपद्रवोंके दूरकरणेवालेहो इस कारण हमारे गौ घोड़े पुत्रपौत्रादिकपरिवारके रोगदूरकरनेलिये औषधिदो

'मेष' छतरा मेषीके शान्तिपूर्वकजीवनकेलिए अपनेसुखदायक स्वरूपका प्रकाशकर

यथासमसद्द्विपदेचतुष्पदे॥यजु०अ०१६॥४८॥

अर्थ हेरुद्र हमारे द्विपदजीवोंका कल्याणहो, हमारे चतुष्पद गौआदि पशुओंको कल्याणहो ॥

आस्तिक०–इनमंत्रोंमें रुद्रपरमात्मासें प्रार्थनाकीहै कि–हेरुद्रपरमात्मन् आप औषधकेसमान रोगोंकेनिवर्तक अपनेसुखस्वरूपका प्रकाशकरो जिससें हमारे द्विपदे पुत्रआदिकोंके चतुष्पद गौआदिपशुओंके सुखरहे ॥

हेमित्र–ऐसीप्रार्थनातो पुत्रआदिपरिवारवाले और पशुओंवाले सर्व मनुष्यनको करणीयोग्यहीहै क्योंकि–द्विपदेपरिवारके, चतुष्पद गौअश्व आदिकोंके और मेषआदिक क्रीड़ामृगोंके, नीरोगता सुख अपेक्षितहीहै परन्तु–इससेंभी अजशशहरिणादिकोंके मांसभक्षणकेप्रसंगमेंतो कुछसिद्ध नहींहोता क्योंकि–अजशशहरिणादिकजो भक्ष्यहैं सोभीबालवृद्धरोगी अज आदिकभक्ष्यनहींहैं किन्तु नीरोग युवा मारेहुएही भक्ष्यहैं, यिह चरकसंहितादिकग्रन्थोंमें प्रसिद्धहीहै ॥

देखो–शहरोंमें जो खानेलिये भेडबकराऽदिक मारेजातेहैं उनकी नीरोगताकी परीक्षा प्रथमडाकटरकर्ताहै उस्सेंपीछेवो मारेजातेहैं, परीक्षामें जो भेडबकरा बीमार मालूमहोवेतो उसको डाकटरसाहिब हुकमन मारनेसें रोकदेताहै, इस्सें अजआदिक भक्ष्यजीवोंकीभी नीरोगता रक्षा अवश्यंअपेक्षितहीहै उसीसें मुसलमानभाईभी कहाकर्तेहैं कि–

"मालजानकी खैर माल जानकी खैर" ॥

हेभ्रातः–तुमारेलिखे इनमंत्रोंमेंभी न तो कोई मांसका प्रसंगहै, और मांसकाबोधक कोईपदभी नहींहै, मांसकेभक्षणका त्यागभी नहींकहाहै,अतः

मांसकेप्रसंगमें यिह मंत्रभी अनुपयोगीहीहैं। हेमित्र ऐमेऐसे अनुपयोगी वाक्य लिखकर तुम वेदनके सिद्धान्तको वदलतेहो

पूर्वपत्ती ०-**माहिंस्यात्सर्वाभूतानि** ॥ श्रुतिः किसीभी-जीवकी हिंसा नहीं करणीचाहिये ॥

आस्तिक०-१-हे मित्र यिह सामान्यविधिवाक्यहै इसीको उत्सर्गविधि कहतेहैं, और **अग्नीषोमीयं पशुमालभेत,,** इत्यादिक विशेषविधिवाक्य हैं, इनहीको अपवादविधि कहतेहैं, यिहशारीरकके अ०३। पाद १॥ सूत्र २५ वेंके भाष्यमें श्रीशंकराचार्य्यस्वामीजीभी स्पष्टलिखेतेहैं देखो शाङ्करभाष्य प्र०४५—**ननु नाहिंस्यात्सर्वाभूतानि इतिशास्त्रमेव भूतविषयांहिंसा मधर्मइ त्यवगमयति वाढम् उत्सर्गस्तुस अयंचापवादः अग्नीषोमीयं पशुमालभेतइति ॥ उत्सर्गापवाद योश्च व्यवस्थितविषयत्वम्** ॥ अर्थ—शंका यिहहै कि-"सर्वजीवोंकी हिंसा नकरे" यिहशास्त्रही जीवोंकी हिंसाको अधर्मरूप बोधनकर्ताहै, इसका उत्तर भाष्यकार कहतेहैं कि-यद्यपि ऐसेहै तथापि सो उत्सर्गविधिहै और **अग्नीषोमीयं पशुमालभेत** ॥ अर्थ—अग्नि और सोमदेवतानिमित्तक अजपशुको मारे, यिह अपवादविधिहै इनदोनोप्रकारके विधिवाक्यनका भिन्नभिन्न सामान्य और विशेष विषयहोताहै अर्थात् उत्सर्गविधिका सामान्य और अपवादविधिका विशेषविषय-होताहै अतः इनविधिवाक्यनका परस्पर विरोध नहींहै इस्सें इनदोनों विधि-वाक्यनका परस्पर वाध्यवाधकभावभी नहींहै ॥

जैसे दृष्टान्त मनुस्मृति—**मत्स्यादः सर्वमांसाद स्तस्मान्मत्स्यान्विवर्जयेत् ॥ अ० ५ ॥१५॥**

अर्थ—मत्स्यके खानेवाला सर्वमांसखानेवाला कहियेहै अतः मत्स्यनको नखाए, यिह उत्सर्गविधिहै, और मनुस्मृति अ० ४६—**पाठीनरोहितावाद्यौ नियुक्तौहव्यकव्ययोः ॥ राजीवान्सिंहतुण्डांश्च सशल्कांश्चैवसर्वशः ॥ अ० ५ ॥१६॥**

अर्थ—पाठीन रोहित मत्स्य भक्ष्यहैं वो देवकर्म पितृकर्ममेंभी विहितहैं, राजीव सिंहतुण्ड और सर्वप्रकारके सशल्क मत्स्यभी भक्ष्यहैं ॥ यिह अपवादविधिहै ॥

हेपाठक—अपवादविधिके विशेषविषयसें भिन्न शेषसामान्यविषयमें उत्सर्गविधि वर्तेहै, यिह सार्वत्रिकनियमहै ॥

जैसे दृष्टान्तमें मनुस्मृतिका १६वांश्लोकरूप अपवादविधिका विषय जो पाठीन रोहित राजीव सिंहतुण्ड सशल्क,, यिहपांचप्रकारके मत्स्य भक्ष्यहैं उनसेंभिन्न शेषमत्स्यनके त्यागमेंमनुका १५वांअर्द्धश्लोकरूप सामान्यविधि वर्तेहैं ॥

दार्ष्टान्त—**अग्नीषोमीयं पशुमालभेत,**

इत्यादिकअपवादविधिवाक्यनके विशेषविषय अजशशहारिणादिकोंसें भिन्न सर्वसामान्यजीवोंकी हिंसाकेत्यागमें **नहिंस्यात्सर्वाभूतानि,—**

यिहउत्सर्गविधि वर्तेहै

ऐसा उत्सर्गविधिका सामान्यजीवरूप विषय भिन्नहै और—

'अग्निषोमीयं पशुमालभेत' इत्यादिक अपवादविधिओंका अजशशहरिणादिरूप विशेषविषय भिन्नहैं ॥

ऐसे अपवादविधिओंसें विहित अजशशहरिणादिक विशेषजीवोंके बलिप्रदान और मांसभक्षणके प्रसंगमें उत्सर्गविधिका प्रमाणदेना अनुपयोगीहीहै॥

२—हेभ्रातः-ऐसावाक्य सामवेदकी छान्दोग्यउपनिषदमेंहै वोदेखो प्र० ४७—**अहिंसन्सर्वाभूतान्य न्यत्रतीर्थेभ्यः ॥**

इसकी टीका—**तीर्थंनाम शास्त्रानुज्ञाविषय स्ततोऽन्यत्रेत्यर्थः सर्वाश्रमिणां चैतत्समानम् ॥**

अर्थ—तीर्थोंसें अन्यत्र सर्वजीवोंकी हिंसा न करे अर्थ यिह यहां शास्त्र की आज्ञाके विषयका नाम तीर्थहै ऐसे 'तीर्थोंसें' शास्त्रकीआज्ञाके विषयोंसें अन्यत्र सर्वजीवोंकी हिंसा न करे, यिहउपदेश सर्वआश्रमीओंको समानहै ॥

तात्पर्य यिहहै कि—संन्यासीओंके भिक्षाटनादिकोंसें जो क्षुद्रजीवोंकी हिंसाहोतीहै, और गृहस्थजनोंके जो देवयज्ञआदिकोंमें हिंसाहोतीहै वो शास्त्रोंसें विहितहै अर्थात् वेदशास्त्रोंकी आज्ञाकाविषयहै वो यहांउपनिषद्में तीर्थपदका अर्थहै उनसें अन्यत्र सर्वजीवोंकी हिंसानकरे, यिह उपनिषद् वाक्यका अर्थहै, यही—**माहिंस्यात्सर्वाभूतानि,** इसउत्सर्ग विधिवाक्यका अर्थहै ॥

पूर्वपक्षी०—औरदेखोवेदमें गौओंकी कितनी स्तुति और प्रार्थना

कीगईहै जिनकेलिए आपके हृदयमेंकुछभी प्रीतिनहींहै तद्यथा- **यूयंमे गावो मेदयथा कृशंचिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रती. कम्। भद्रंगृहंकृणुथा भद्रवाचोबृहद्वोवयउच्यते- सभासु** ऋ, ६ ॥ २८ ॥ ६ ॥

हेगौओ तुम दुबलेकोभी हृष्ट पुष्ट वना देती हो, हे भली वानी वालिओ मेरे घर को भद्र, कल्याणयुक्त, बना दो हमारी सभाओं में तुम्हारी बड़ीशक्ति कहीजातीहै ॥

आस्तिक०-गौओंकी स्तुति और प्रार्थनाकीहै तो हच्छाकियाहै परंतु इसमंत्रमेंभी यह तो नहींकहा है कि-अजशशहरिणआदिकोंका बलिप्रदान मतकरो,अजआदिकोंके मांसको मतखाओ अतः मांसभक्षणके प्रसंगमें यिहमंत्रभी अनुपयोगीहीहै बहुत क्या लिखुं हेअसत्यप्रतिज्ञ तुमने प्रतिज्ञा कीथी कि-हम मांसत्यागके विषयमें प्रमाणराज वेदकेही पहिले प्रमाण दिखाकरपीछे और सबशास्त्रादिकोंकेभी प्रमाणदेंगे, सो वेदका तुम एकभी प्रमाण नहींलिखसके ॥

और जो लिखेहैं वो प्रकरणमें अनुपयोगीहीहैं क्योंकि उनवाक्यनमें मांसका वाचकपदभीनहींहै, मांसकाप्रसंगभी नहींहै, मांसकेभक्षणका निषेधभी नहींकराहै ॥

प्रश्न-यदि पूर्वपक्षीने वेदोंमें ऐसाकोईवाक्य नहींदेखा अतःनहींलिख सका तो प्रमाणराजवेदके प्रमाणदेनेकी प्रतिज्ञा क्योंकरदी ॥

उत्तर-नास्तिकतासें प्रतिज्ञाकरदी अर्थयिह जिनकेचित्तमें यिहविश्वास है कि, वेद ईश्वरसें प्रकटहुएहैं अतःपरमप्रमाणहैं, वेदनसें विहितअर्थ हमारे

लिये परमपथ्यहै, उनकीआस्तिकसंज्ञाहै, वो आस्तिकजन वेदोंके वास्तव अर्थको छिपाकर अन्यथाअर्थ लिखनहींसक्के, और जो विश्वासके अभावसें वेदनकेअर्थको वदलतेहैं वो आस्तिक नहींकहलायसक्के क्योंकि-वो वेदोंसें विरुद्धनिश्चयवालेहैं ॥

पूर्वपक्षी०-आपनेयदि पशुवलिप्रदानमें और मांसभक्षणमें कोईवेद वाक्य देखाहै तो दिखाना चाहिये ॥

आस्तिक०-हेमित्र-एसे वेदसूत्रस्मृतिओंके वाक्य बहुतहीहैं उनमें केईकवाक्य दिखलावुंगा परंतु अबी धैर्य्यकरो पहिले तुमारे वाक्यनका निर्णय तो करलवुं ॥

पूर्वपक्षी०--अहिंसापर भगवान्पतञ्जलिजीकी सम्मति अहिंसा सत्यास्तेयब्रह्मचर्य्यापरिग्रहायमाः यो.पा, २॥ ३०॥अर्थ मनसें व वाणीसे व शरीरसे किसीभीजीवको पीडादेनी हिंसा कहातीहै और सबप्रकारसें सबसमयमे किसीभीजीवकेसाथ द्रोहनकरणा अहिंसाहोतीहै ॥

आस्तिक०-इत्यादिक तुमारेलिखे पातंञ्जलसूत्रभी इसप्रकरणमें अनुपयोगीहीहैं क्यों अनुपयोगीहै सुनिये ॥

१, सम्पूर्णपातञ्जलशास्त्र योगाभ्यासरूप निवृत्तिमार्गसें संबन्ध रखता है निवृत्तिमार्गवाले योगाभ्यासीको मांस खाना उचित नहीं है" यिहपूर्व लिखचुकाहुं अतःप्रवृत्तिमार्गके मांसभक्षणप्रसंगमें निवृतिमार्गके सूत्र लिखने अनुपयोगी स्पष्टहीहैं ॥

२-यदि प्रवृत्तिमार्गके प्रकरणमें निवृत्तिमार्गके सूत्रकथनकरोगे तो इसीपातञ्जलसूत्रमें कथनकरा मैथुनका त्यागरूपब्रह्मचर्य्य,और धनादिकों का असंग्रहरूप अपरिग्रहभी प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोके लिये कहनाहोगा

वो गृहस्थजनोंलिये अपरिग्रहआदिकोंकाकथन तो अयुक्तहीहै अतःप्रवृत्ति मार्गके प्रसंगमें निवृत्तिमार्गके पातंजलसूत्रलिखने अनुपयोगीहीहैं ॥

३-देखो प्रमाणांक ४६ आदिकोंमें महर्षिओंने वेदविहितहिंसा अहिंसा रूपही मानीहै ॥

पूर्वपक्षी०-श्रीभगवान्कृष्णजीकी सम्मत्ति **ब्रह्मचर्य्यमहिंसाच शारीरंतपउच्यते** ॥ गी०अ० १७॥१४॥ आठप्रकारका ब्रह्मचर्य्य और योगशास्त्रमें कहीहुई ८१ प्रकारकी हिंसाकाअभाव अहिंसा, यहसब शरीरका तप कहाताहै ॥

अहिंसासत्यमक्रोध स्त्यागःशान्तिरपैशुनम् ॥
दयाभूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवंह्रीरचापलम् ॥

अ, १६ ॥२॥ हे अर्जुन अहिंसा, सत्यबोलना, क्रोध न करना, कोमलता, लज्जा अचपलता, इत्यादिकसब दैवीसम्पत्के गुणहैं, किसीभी जीवको दुखदेना राक्षस कहलानाहै ॥

आस्तिक०-अज्ञानका महिमा अतिप्रबलहै देखिये तुम आपही गीता श्लोकके अर्थमें आठप्रकारका ब्रह्मचर्य्य, और त्यागआदि लिखतेहो तो तुमारीबुद्धिमें यह विचार उदय नहींहुआ कि, आठ प्रकारके मैथुनका त्यागरूप आठप्रकारका ब्रह्मचर्य्य और त्यागआदि, यिह साधन क्या प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंकेलिये श्रीकृष्णजी कथनकररहेहैं अथवा निवृत्ति मार्गवाले योगाभ्यासीओंकेलिये कहरहेहैं ॥

होर जो दैवीसम्पत्में अहिंसा कहीहै वोभी वृथाहिंसाका त्यागरूप अहिंसाजाननी क्योंकि, धर्मपुस्तकोंमें वेदविहितहिंसा अहिंसारूपही मानीहै।

वो शारीरकके अ० ३ ॥ पा, १ ॥ २५ वें सूत्रके श्रीभाष्यमें श्रीरामानुजस्वामीजीनेंभी वेदविहितपशुहिंसाको रक्षारूपहीमानाहै देखो श्रीभाष्य प्र० ४८—अतिशायिताभ्युदयसाधनभूतोव्यापारोऽल्पदुःखदोपि नाहिंसा प्रत्युत रक्षणमेव। चिकित्सकंच तादात्त्विकाल्प दुःखकारिणमपि रक्षकमेव वदन्ति पूजयन्ति चतज्ज्ञाः। अर्थ अधिकइष्टसाधनरूप जो व्यापारहै वो अल्पदुःखदायीभी हिंसारूप नहींहोता प्रत्युत रक्षाहीहै जैसे चिकित्साके गुणजाननेवाले पुरुष चिकित्साकालमें अल्पदुःखकारीभी चिकित्सकको रक्षकही कहतेहैं और पूजतेहैं ॥

हेमित्र-धर्मग्रन्थोंमें वेदविहितहिंसा अहिंसारूपही मानीहै अब इसअर्थमें औरभी प्रमाणोंको दिखलाताहुं मनुस्मृति प्र० ४९—यावेदविहिताहिंसा नियताऽस्मिंश्चराचरे। अहिंसामेवतांविद्याद्वेदाद्धर्मोहिनिर्बभौ ॥ अ.५ ॥ ४४ ॥

इसपर मेधातिथिका मनुभाष्य प्र० ५० वेदविहितो यःप्राणिवधः सोऽस्मिञ्जगतिचरचरे स्थावरजङ्गमे नियतोनित्योऽनादिः। अहिंसामेवविद्यात्

इसमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ५१—

अहिंसामेवतांजानीयात् हिंसाजन्यधर्माविरहात् धर्मोवेद एव निःशेषेणप्रकाशतांगतः

इसीपर राघवानन्दकी टीका प्र० ५२

वेदविहिताहिंसा न हिंसेत्याह । हिंसातोऽधर्मोयथा वेदप्रमाणकस्तथायज्ञेहिंसातोधर्मस्तत्प्रमाणक इति ॥

इसपर नन्दनाचार्य का मानवव्याख्यान प्र० ५३

वेदविहितहिंसाहिंसात्वेनवक्तुंनयुक्तेत्यभिप्रायः ॥

इसपर रामचन्द्रकी टीका प्र० ५४ अस्मिञ्चराचरेया वेदविहिता हिंसा विध्युक्ताहिंसा तां हिंसा महिंसामेव विद्याज्जानीयात् ॥

मनुभाष्य और टीकासहित मनुश्लोकका अर्थ—इसचरअचरजगत्‌में जो वेदविहितहिंसाहै वो नित्यहै अनादिहै उसको अहिंसाहीजानो, धर्म वेदसेंही प्रकट हुआहै इस्सें वेदविहितहिंसाको हिंसाकहना युक्त नहींहै

यथा हिंसासें पाप वेदप्रमाणसें सिद्धहै तथा यज्ञमें हिंसासें पुण्य वेदप्रमाणसें सिद्धहै ॥

वेदान्तशास्त्रशारीरक प्र० ५५ अशुद्धमितिचेन्नशब्दात् ॥ अ. ३ ॥ पा. १ ॥ २५ ॥

इससूत्रपर रामानुजस्वामीका श्रीभाष्य प्र० ५६—इति चेन्न कुतः शब्दात् अग्नीषोमीयादे स्संज्ञपनस्य स्वर्गलोकप्राप्तिहेतुतया हिंसात्वाभावशब्दात् पशोर्हिसंज्ञपननिमित्तां स्वर्गलोकप्राप्तिं वदन्तं

शब्दमामनन्ति । हिरण्यशरीर ऊर्ध्वः स्वर्गं लोकमेति इत्यादिकम् । अतिशयिताभ्युदय साधनभूतोव्यापारोऽल्पदुःखदोपि न हिंसा प्रत्युत रक्षणमेव तथाच मन्त्रवर्णः—नवाएत न्म्रियते न रिष्यासि देवान् इदेषि पथिभिः सुगोभिः यत्रयन्ति सुकृतोनापि दुष्कृत स्तत्र त्वा देवस्सविता दधातु इति॥ चिकित्सकंच तादृत्विकाल्पदुःख कारिणमपि रक्षकमेववदन्ति पूजयन्तिच तज्ज्ञाः ॥

सूत्र व श्रीभाष्यका अर्थ-हिंसायुक्तयज्ञादिककर्म अशुद्धम्, पापमिश्रितहैं ऐसे यदिकहो तो वो समीचीन नहींहै क्योंकि–अग्नीषोमीयआदिपशुका मारणा स्वर्गलोककी प्राप्तिका हेतुहोनेकर वेदमें अग्नीषोमीयआदिपशुके मारणमें हिंसात्वका अभावकहनेसें तुमारा कथन समीचीननहींहै ॥

"प्रकाशमय शरीरवालाहुआ ऊर्ध्वस्वर्गलोक को प्राप्तहोताहै" इत्यादिक पशुमारणनिमित्तसें स्वर्गलोककी प्राप्तिके बोधक वैदिकशब्दोंको वैदिकपुरुष कथनकर्तेहैं ॥—

अधिक इष्टसाधनरूप जो व्यापार वो अल्पदुःखदायीभी हिंसारूप नहीं होता प्रत्युत रक्षाहै, वैसे वेद मंत्र कहताहै "हेपशो यिह तूं मरता नहीं हैं तूं हिंसित नहींहोता किंतु प्रकाशवाले मार्गोंसें तूं देवतोंको प्राप्तहोताहैं पुण्यवान्‌पुरुष जहांजातेहैं पापीजन जहांनहींजासक्ते तहां तुझको सविता

परमात्मदेव स्थितकरे" इति ॥ चिकित्साकालमें अल्पदुःखकारीभी चिकित्सकको रक्षकही कहतेहैं अर पूजतेहैं ॥

हेपाठक देखो यहां वेदान्तसूत्रके अनुसारी श्रीभाष्यमें—रामानुजस्वामी वेदप्रमाण दिखाकर वेदविहितहिंसाको अहिंसाही मानतेहैं और उससें स्वर्गलोक की प्राप्ति कहतेहैं ॥

इसीवेदान्तसूत्रपर शाङ्करभाष्य प्र० ५७ – **शास्त्रहेतुत्वाद्धर्माधर्मविज्ञानस्य अयंधर्मोऽयमधर्म इतिशास्त्रमेव विज्ञानेकारणम् अतीन्द्रियत्वात्तयोः । तेन न शास्त्रादृते धर्माधर्मविषयं विज्ञानं कस्यचिदस्ति शास्त्राच्च हिंसानुग्रहाद्यात्मको ज्योतिष्टोमो धर्म इत्यवधारितम् स कथमशुद्धइतिशक्यतेवक्तुम् ॥**

अर्थ—धर्मअधर्मके निश्चयका हेतु शास्त्रहै क्योंकि—धर्माधर्म अतीन्द्रियपदार्थहैं अतः यिहधर्महै यिहअधर्महै, अर्थात् इसकर्मसें यिहधर्म इसकर्मसें यिहअधर्म पैदा होताहै, ऐसेविज्ञानमें शास्त्रहीकारणहै इस्सें किसी कोभी शास्त्रसेंबिना धर्माधर्मका विज्ञान नहींहोसक्ता, हिंसा व अनुग्रहआदि रूप ज्योतिष्टोमयज्ञ धर्महै" यिह शास्त्रसें निश्चितहै तो वो पापयुक्त कैसे कहसक्तेहैं अर्थात् वेदविहितहिंसा पाप नहींहै अतः अहिंसाहीहै ॥

भगवद्भागवत प्र० ५८—**तथापशोरालभनंनहिंसा ॥**

स्कन्ध ११।अ०५।१३॥

इसपर श्रीधरी टीका प्र० ५६—**देवतोद्देशेन यत्पशुहननं**

तदालभनम् ॥

अर्थ—देवताके उद्देशकर जो पशुका मारणा वो हिंसा नहींहै अर्थात् अहिंसाहीहै ॥१३॥ देवताके उद्देशकर जो पशुका मारणाहै वो आलभन-पदका अर्थहै ॥

हेपाठक—चिन्तन और अभिलाष उद्देशपदका अर्थहै ॥

मनुस्मृति प्र० ६०—यज्ञार्थंपशवःसृष्टाः स्वयमेव-स्वयंभुवा ॥ यज्ञस्यभूत्यैसर्वस्य तस्माद्यज्ञेव-धोऽवधः ॥ अ० ५॥३९॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ६१—यज्ञसिद्ध्यर्थं प्रजा-पतिनाऽऽत्मनैवादरेण पशवः सृष्टाः। यज्ञश्चाग्नौ प्रास्ताहुतिन्यायात्सर्वस्यास्यजगतो विवृद्ध्यर्थः। तस्माद्यज्ञेवधोऽवधएववधजन्यदोषाभावात् ॥

इसपर नन्दनाचार्यका मानवव्याख्यान प्र० ६२—

यज्ञेवधोवधकार्याभावादवधः ॥

इसपर रामचन्द्रकी टीका प्र० ६३—यज्ञः अस्याद्विजस्य सर्वस्यक्षत्रियादेः भूत्यैऐश्वर्यायभवति तस्माद्य ज्ञेवधोऽवधएव ॥

इनटीकाओंसहित मनुश्लोककाअर्थ–यज्ञकी सिद्धिलिये आपब्रह्माजीने पशु रचेहैं, सबजगत्‌की वृद्धिका और ब्राह्मणक्षत्रियआदिकोंके ऐश्वर्यका कारण यज्ञहै इस्सेंयज्ञमें जो बधहै वो अवधहीहै, अहिंसाहीहै क्योंकि–वो दोषका कारण नहींहै ॥

वासिष्ठस्मृति प्र० ६४—**नाकृत्वाप्राणिनांहिंसांमांसमुत्पद्यतेक्वचित्। नचप्राणिवधःस्वर्ग्यस्तस्माद्यागेवधोऽवधः ॥ अ० ४ ॥ ७॥**

अर्थ–प्राणिओंकी हिंसाकरे बिना मांसकहीं पैदानहींहोता, अर प्राणीओंका वध स्वर्गकाहेतुनहींहै, इस्सें यज्ञमें बधअबधहीहै, अर्थात् यज्ञमें पशुहिंसासें स्वर्गकीप्राप्ति श्रुतिस्मृतिओंमें कहीहै अतः वृथाहिंसा स्वर्गका हेतु नहींहै और यज्ञमेंहिंसा अहिंसाहीहै ॥

शंकरविजयाडिण्डिमटीकाप्र०६५– **यागीयस्याहिहिंसनस्यनिगमे धर्मत्वमुक्तंस्फुटम् ॥ सर्ग १५ ॥**

२८ वेंश्लोककी टीकामें श्रीशंकराचार्य्यजी जैनीको कहतेहैं कि–यज्ञसम्बन्धीहिंसाको वेदमें धर्मरूप स्पष्टकहाहुआहै ॥

होर जो तुमनेकहा कि–"किसीभीजिवकोदुःखदेना राक्षस कहलानाहै" वो यद्यपि वृथाहिंसाविषयकसत्यहै तथापि विहितहिंसाविषयक वो कथन नास्तिकतासेंहै अतः अयुक्तहीहै ॥

१ वैद्यडाकटरआदिकोंसें निश्चितहै कि–मलकेरुधिरके दद्रुप्लेगआदि सब रोगोंके कृमि भिन्नभिन्नजातिके होतेहैं गौअश्वगर्दभआदिकोंके व्रणपर मक्षिका मलकरदेतीहै तो अनेककृमि पैदाहोजातेहैं

विरेचनसें मलकृमिओंकी, औषधसेवनसें दद्रुआदिरोगकृमिओंकी, व्रण

शोधकऔषधसें ब्रणकृमिओंकी कुलोंका विनाशहोताहै ॥

हेमित्र—औषधोंका सेवन तुमभीकर्तेहीहो करातेहीहो तो तुमभी राक्षस ही कहलातेहो क्योंकि—औषधोंकर ब्रणकृमिआदिअसंख्यजीवोंको प्राणान्त दुःखदेतेहो ॥

और वर्षाकालमें गेहुं चना चावलआदिकोंमें असंख्यजीवपैदाहोजातेहैं तब गेहुंचनाऽऽदिकोंको धूपमेंफैलायके उनअसंख्यजीवोंको क्या तुम प्राणान्तदुःखनहींदेतेहो, देतेहीहो तो क्या तुमभी राक्षसही कहलातेहोगे ॥

२—हेमित्र—वेदवेताब्राह्मण और रामआदिकअवतार युधिष्ठिरप्रभृति महाराजे विहितमांसको खाते खुलातेंहीरहेहैं तो उनमहानुभावोंको कौन आस्तिकपुरुष राक्षस कहसक्ताहै ॥

हेभ्रातः—यदि श्रीकृष्णजी वेदविहितहिंसाको अहिंसारूप न मानते तो नन्दप्रभृतिगोपोंको पशुबलिप्रदानालिए प्रेरणा कवीनकर्ते, और ३०१ पशुओंके बलिप्रदान जिसमें हुएथे ऐसे युधिष्ठिरके अश्वमेधयज्ञमें कृष्णचन्द्र कवीस्थित नहोते, परन्तु कृष्णचन्द्रने नन्दप्रभृतिगोपोंको प्रेरणाकर्के गिरि यज्ञालिये पशुको मरवायके मांसका बलिप्रदान करवाया वो देखोप्रमाणांक ४२ आदिकोंमें कहाहीहै, प्रमाणांक ११६ युधिष्ठिरके यज्ञमें ३०१ पशुओं का बलिदान कियागया वहां श्रीकृष्णचन्द्रजी विद्यमानहीथे, उसयज्ञालिये युधिष्ठिरको प्रेरणाभी करीथी अतः पशुबलिप्रदानमें व विहितमांसके भक्षण में कृष्णचन्द्रकी सम्मति स्पष्टहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—सम्मति मनुजीकी—योऽहिंसकानिभूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया । सजीवंश्चमृतश्चैव न- क्वचित्सुखमेधते ॥ अ० ५ ॥ ४५ ॥

जो अपने सुखकेवास्ते खानेकेलिये दुर्बलजीवोंको मारताहै वह इस लोक परलोकमें कहींभी सुख नहींपाता ॥

मनुस्मृति-योबन्धनबधक्लेशान् प्राणिनांनचिकीर्षति । ससर्वस्यहितप्रेप्सुः सुखमत्यन्तमश्नुते ॥ ५ ॥४६॥ यद्ध्यायतियत्कुरुतेधृतिंबध्नातियत्रच । तदवाप्नोत्ययत्नेन योहिनस्तिनकिञ्चन ॥ ४७॥ नाकृत्वाप्राणिनांहिंसां मांसमुत्पद्यतेक्वचित् नचप्राणिबधःस्वर्ग्य स्तस्मान्मांसंविवर्जयेत् ॥ ४८॥ समुत्पत्तिंचमांसस्य बधबन्धौचदेहिनाम् । प्रसमीक्ष्यनिवर्तेत सर्वमांसस्यभक्षणात् ॥४९॥ फलमूलाशनैर्मेध्यै र्मुन्यन्नानांचभोजनैः । नतत्फलमवाप्नोति यन्मांसपरिवर्जनात् ॥५४॥

अर्थ—प्राणिओंके बन्धनके और बधके क्लेशोंको जो नहीं कियाचाहता सो सर्वके हितचाहनेवालापुरुष अत्यन्तसुखको पाताहै ॥ ४६ ॥ जो किसी की हिंसा नहीं कर्ता सोमनुष्य जिसपदार्थका चिन्तनकर्ताहै, जिससाधन को कर्ताहै, जिसमे धारणाकर्ताहै, उसको बिनाक्लेशसें प्राप्तहोताहै ॥ ४७ ॥ प्राणीओंकी हिंसाकरेबिना मांस कहींपैदा नहींहोता अर प्राणीओंका बध स्वर्गका हेतु नहींहै उस्सें मांसको त्यागदेना चाहिये ॥ ४८ ॥ शुक्रशोणित सें मांसकी उत्पत्तिको और जीवोंके बधबन्धनोंको देखकर सर्वमांसकेभक्षणसें

निवृत्तहोवे ॥ ४६ ॥ पवित्रफलमूल और नीवारआदिक मुनिओंके अन्नके भोजनसें सोफल नहींमिलता जो मांसके त्यागसें मिलताहै ॥ ५४ ॥

आस्तिक० – यिह सबश्लोक अविहितहिंसाके अविहितमांसभक्षणके त्यागको कहतेहैं अर्थयिह श्रुतिस्मृतिआदिकोंकी 'आज्ञाका' प्रेरणाका नाम विधिहै विधिसें कहेहुएअर्थका नाम विहितहै, जो विहित न हो वो अविहित कहाजाताहै, ऐसीजो विहितहिंसा नहीं, विहितमांसभक्षण नहीं उसअविहितहिंसाके अविहितमांसभक्षणके त्यागका उपदेश यिहश्लोककर्तेहैं वोदेखो इनश्लोकोंकी टीकामें स्पष्टकहाहै —

४८ वेंश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ६६–**तस्मादविधिना मांसंनभक्षयेत्।** अर्थ–जिस्सें अविहितमांस स्वर्गका हेतु नहीं इस्सें विधिबिना मांसको नहीं खाए।

इसपर राघवानन्दकी टीका प्र० ६७–**मांसमविधिसंपादितं वर्जयेतनभक्षयेत्।** अर्थ विधिसेंबिना मांसको न खाए ॥

हेपाठक—श्रुतिस्मृतिआदिकोमें देवतापितरअति थिआदिकोंके निमित्तकर भेडबकराऽऽदिकोंकी हिंसाका विधानहै, विधिहै वोदेखो प्रमाणांक १०१ व, १२१ व, ६८ व, १७५ आदिकोंमें स्पष्टहै ॥–

इसीसें देखो प्रमाणांक ६६ आदिकोंमें विहितहिंसाका उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही वर्णनकराहै और जो देवतापितरअतिथिआदिकोंके निमित्तको नहींरखकर हिंसाकीजावे वो अविहि तहिंसाहै उसीका अनिष्टफल स्मृतिओंके उक्त इत्यादिक श्लोकोंमें कहाहै।

हेभ्रातृजन–श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें देवतापितर अतिथिआदिको पूजकर

देकर शेषमांसके भक्षणका विधानहै,, विधिहै हुकमहै वोदेखो प्रमाणांक १६५ व २०६ व २१४ इत्यादिकोंमें प्रकटहीहै ऐसेविहितमांसके खानेसें कोईदोष नहीं होता यिहअर्थदेखो प्रमाणांक ३१ आदिकोंमें स्फुटवर्णन कराहुआहै, और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेकर नरकआदिकोंकी प्राप्तिरूप अनिष्टफलही वर्णन कराहै, इस्सें यिह सिद्धहुआ कि—अविहितहिंसाका अविहितमांसका त्यागही कराचाहिये । और विहितपशुबलिप्रदान व विहितमांसभक्षण अवश्यं कराचाहिये —

इसीसें अविहितहिंसाके अविहितमांसके त्यागलिये स्मृतिआदिकोंमें रोचकवाक्यनसें त्यागका माहात्म्यभी कहाहै जैसे यहां ४६ वें ४७ वें और ५४ वें श्लोकमें कहाहै औरकेईजगें स्मृतिआदिकोंमें अविहितहिंसाके अविहितमांसभक्षणके त्यागलिये भयानकवाक्यनसें दोषभी सुनायाहै जैसे यहां ४५ वें ४८ वें और ४६ वें श्लोकमें कहाहै ॥

हेमित्र—विहितपशुबलिप्रदानके व विहितमांसभक्षणके त्यागलिये यिहश्लोक प्रवृत्तनहींहैं क्युंकि—स्मृतिआदिकोंमें विहितहिंसाका श्रेष्ठफलही कहाहै, अब इसअर्थमें प्रमाणोंको दिखाता हूं ।

मनुस्मृति प्र० ६८—मधुपर्केचयज्ञेच पितृदैवतकर्मणि॥ अत्रैवपशवोहिंस्या नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः । अ. ५ ॥ ४१ ॥

मनुस्मृति प्र० ६९—एष्वर्थेषुपशून्हिंसन् वेदतत्त्वार्थविद्द्विजः । आत्मानंचपशुंचैव गमयत्युत्तमांगतिम् ॥ ५ ॥ ४२ ॥

अर्थ—मधुपर्कमें यज्ञमें पितृकर्ममें देवकर्ममें इनहीमें अजआदिपशु मारणे इनसेंअन्यत्रनहीं, एवं मनुजी कहतेभए ॥४१॥ इनमधुपर्कआदिकोंनिमित्त पशुओंको मारताहुआ वेदतत्त्वका वेताद्विजपुरुष अपनेको और पशुको उत्तमगतिमें पहुंचावेहै अर्थात् विधिविहितहिंसाका उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफल होताहै ॥४२॥

मनुस्मृति प्र० ७०—ओषध्यःपशवोवृक्षा स्तिर्यञ्चः-पक्षिणस्तथा । यज्ञार्थंनिधनंप्राप्ताःप्राप्नुवन्त्यु-च्छ्रितीःपुनः ॥५॥ ॥४०॥

इसपर नन्दनाचार्यकी टीका प्र० ७१—यज्ञार्थेवधे न केवलं यजमानस्यैवाभ्युदयः किंतु पश्वादीना-मपीत्याह ओषध्यइति ॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र०७२—ओषध्योव्रीहियवाद्याः पशवश्छागाद्याःवृक्षायूपाद्यर्थाः तिर्यञ्चः कूर्मा-दयः । पक्षिणः कपिञ्जलाद्याः यज्ञार्थं विनाशं गताः पुनर्जात्युत्कर्षंप्राप्नुवन्ति ॥

इसपर गोविन्दराजकी टीका प्र०७३—तेततःतमधर्मार्जितं निकर्षंहित्वा पुनरात्मज्ञानाधिकृतशरीरलाभे-नोत्कर्षान्प्राप्नुवन्ति ॥

इनटीकांसाहित मनुश्लोककाअर्थ—यज्ञलिये वधकरणेसें केवलयजमानको

ही शुभलाभ नहींहोता किन्तु पशुआदिकोंकोभी शुभलाभहोताहै यिहअर्थ इसश्लोकमें कहतेहैं ॥

श्रीहियवआदिओषधि, अजआदिपशु, यूपआदिकोंके लिये वृक्ष, तिर्यक् कूर्मआदि, कपिञ्जलआदिपक्षी यिहसबयज्ञकेलिये नाशकोप्राप्तहुए उत्तम जातिकोप्राप्तहोतेहैं। इसमें गोविन्दराज कहतेहैं कि—अधर्मसेंप्राप्तहुई निकृष्टताको त्यागकर वो पशुआदिक आत्मज्ञानके अधिकारीशरीरके लाभसें उत्कृष्टताकों प्राप्तहोतेहैं ॥

हेपाठको—देखो मनुस्मृतिकेपुरातनसंस्कृतटीकाकार कैसा स्पष्टअर्थ लिखतेहैं परन्तु भाषाटीकाकार तुलसीरामजी अपना भिन्नही गीतगातेहैं ॥

श्रीभाष्यमें श्रीरामानुजस्वामीजीनेभी विहितहिंसाका स्वर्गप्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही वर्णनकराहै औरउसमें वेदमन्त्रप्रमाणभी लिखाहै देखो—

श्रीभाष्य—**अग्निषोमीयादेस्संज्ञपनस्यस्वर्गलोकप्राप्तिहेतुतया** ॥ इत्यादिकपाठ और अर्थ प्रमाणांक५६ में लिख चुकाहुं ॥

शंकरविजयडिण्डिम टीका प्र० ७४ ॥

अग्निष्टोममुखेक्रतौखलुपशोःस्वर्गप्रदंहिंसनं।
अत्याचाररतैरुपेयमपरे पाखण्डिनोविस्फुटम्॥

सर्ग १५॥२८ वें श्लोककी टीकामें श्रीशंकराचार्यजी जैनीको कहतेहैं कि—अग्निष्टोमआदियज्ञमें पशुका हिंसन स्वर्गका देनेवालाहै इससें वेदविहित आचारमें प्रीतिवालेपुरुषोंनें वो यज्ञनिमित्त पशुका हिंसनरूपआचार ग्रहणकरणायोग्यहै, होरजो अर्थात् वेदविहितआचारके नहींकरणेवालेहैं वो पाखंडी स्पष्टहैं ॥

बृहत्पाराशरीयधर्मशास्त्र प्र० ७५ ॥

एवंपञ्चमखान्कुर्वन् मधुमांसाज्यपायसैः ।
ससंतर्प्यपितॄन्देवा न्मनुष्यान्स्वर्गमाप्नुयात् ॥

अ० ४॥८०॥

अर्थ—ऐसे पंचयज्ञनको कर्ताहुआ गृहस्थजन पितरोंको देवतोंको अतिथिमनुष्यनको शहतमांसघृतदुग्धसें सम्यक् तृप्तकर्के स्वर्गको प्राप्तहोवे अर्थात् घृतमांसाऽऽदिकोंके होमसें देवतोंकी तृप्ति, ऐसेही श्राद्धसें पितरोंकी तृप्ति, समांसभोजनादिकोंसें अतिथिमनुष्यनकी तृप्तिकरणेसें स्वर्गकी प्राप्ति रूप श्रेष्ठफलको पावे—

हेपाठक—देखो इसवाक्यमें विधिहै ॥

विदितहोकि—कांस्यके पात्रसें ढकाहुआ कांस्यके पात्रमें मधुसेंमिले हुए दधिको मधुपर्क कहतेहैं ऐसामधुपर्क श्रोत्रियके राजाके अतिथिआदिकोंके आगमनपर उनको मांससहित भोजनसें अनंतर देना धर्मपुस्तकोंमें कहाहै इसअर्थमें—

आश्वलायन गृह्यसूत्र प्र० ७६—नामांसोमधुपर्कोभवति-भवति ॥ अ० १॥ कण्डिका २४॥सूत्र २६॥

इससूत्रपर गार्ग्यनारायणीया वृत्ति प्र० ७७—मधुपर्काङ्गं भोजनममांसं न भवतीत्यर्थः ॥ अध्यायान्तलक्षणार्थं द्विर्वचनं मङ्गलार्थंच ॥

अर्थ--मधुपर्कमें प्रथमजो मधुपर्कका अंग भोजनहै वो मांसरहित नहींहोता अर्थात् समांसभोजनसे अनन्तर श्रेत्रिय अतिथिराजाऽऽदिक पूजनीयजनोंको मधुपर्क दियाजाताहै ॥ अंगोंसहित वेदवेताका नाम श्रोत्रियहै

पूर्वपक्षी० प्र० ७८ --

यावन्ति पशुरोमाणि तावत्कृत्वोहमारणम् ।
वृथापशुघ्नःप्राप्नोति प्रेत्यजन्मनिजन्मनि ॥
मनु० ५॥३८॥

जो केवल अपने पेट भरनेकेलिये पशुओंको मारताहै वहपुरुष जितने पशुके शरीरमें रोमहोतेहैं उतनेवार जन्मधारकर दूसरोंसे माराजाताहै ॥

आस्तिक०--हेमित्र इसका उत्तर तो तुमने आपही लिखदियाहै परंतु श्लोकलिखतेहुए तुमको लज्जाभी नहींआई ॥ अर्थयिह अविहितहिंसाकोही बृथाहिंसा कहतेहैं, विहितहिंसाका तो श्रेष्ठफलही श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें दिखाचुकाहूं । और "अविहितहिंसाका" बृथाहिंसाका स्मृतिआदिकोंमेंभी निषेधकराहीहै इसश्लोकमेंभी बृथापशुहिंसाकाही भयानकवाक्यसे निषेधकराहै तो विहितहिंसाके प्रकरण में यिहश्लोकलिखना धोखादेना नहीं तो हौर क्याहै हेपाठक देखो--

इसीमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० ७९

देवताद्युद्देशमन्तरेणात्मार्थंयः पशून्हान्ति सवृ-थापशुघ्नोमृतः सन्यावत्संख्यानि पशुरोमाणि तावत्संख्याभूतं जन्मनिजन्मनि मारणंप्रा-प्नोति तस्माद् वृथापशुंनहन्यात् ॥

अर्थ—देवताऽऽदिकोंके उद्देशसेंविना जो अपनेलियेही पशुओंको मारताहै वो वृथापशुघ्नपुरुष मरके जन्मजन्ममें पशुके रोमजितनेवार मारा जाताहै, इस्सें वृथापशुहिंसा नहींकरे अर्थात् देवताऽऽदिकोंके उद्देशकर अजादि पशुका बधकरे ॥

पूर्वपक्षी०—**वर्षेवर्षेऽश्वमेधेन योयजेतशतंसमाः मांसानिचनखादेद्य स्तयोःपुण्यफलंस्मृतम् ॥**

म. अ. ५॥ श्लो. ५३—जोपुरुष सौवर्षतक अश्वमेधयज्ञ कर्ताहै और मांसखाताहै, और जोपुरुष मांसनहींखाता चाहे वह एकभीयज्ञ नहींकर्ता, यहदोनों समानहैं, मतलब यहहैकि—मांसाहारीपुरुषका सबकर्मधर्म नष्टहोजाताहै ॥

आस्तिक०—मनुका यिहश्लोक अहिंसादिग्दर्शनग्रन्थमें विजयधर्मसूरीजी जैनीनेभी लिखाहै परंतु उसजैनीमहात्माने ऐसाछल नहींकरा जैसाकि—इसबालनेकराहै ॥

पूर्वपक्षी०—मैंने क्या छलकराहै

आस्तिक०—सुनिये एकतो तुमने मूलश्लोकमें 'समम्' की जगेमें स्मृतम् लिखदिया अर्थात् पाठको बदलादिया दूसरा तुमने 'तयोःपुण्यफलंसमम्" इसवाक्यका अर्थ कुछभी नहींलिखा अर्थात् धोखादेनेलिये अर्थको छोड़दिया—

तीसरा—'यहदोनो समानहैं' यिहतुमने अपनीतर्फसें लिखडाला, मूलश्लोकमें प्रथमाविभक्तिका द्विवचनान्तपद कोईभी नहींहै, बहुत क्या स्मृतिपाठको बदलकरभी श्लोकका अर्थ व व्यवस्था तूं नहींलिखसका ॥

हेपाठको—ऐसेछलकर लेखकपुरुष विद्वज्जनोंमें धर्मवेता नहींकहलाय

सक्ते किंतु ऐसेअसत्कर्मसें वो नास्तिकही कहनेयोग्यहैं ॥

इसश्लोकका भावार्थ यिहहैकि जोपुरुष सौवर्षतक वर्षवर्षमें अश्वमेधयज्ञकरे अर विहितमांसकोभी खाए, और दूसरा जोकोईपुरुष वृथामांसोंको नहींखाए, तो उनदोनोंपुरुषोंको पुण्यफल बराबर होताहै ॥

इसश्लोकमें रोचकवाक्यसें अविहितमांसकेही त्यागका फल कहाहै ॥

इसमनुश्लोकपर सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० ८०—**अधुना यस्य वर्णस्य यादृशंमांसभक्षणं निषिद्धं तदकरणे फलमाह वर्षेवर्षेइति ॥**

अर्थ—जिसवर्णकेलिये जैसे मांसभक्षणका निषेधहै उसानिषिद्धमांसके नहींखानेकाफल अबकहतेहैं वर्षेवर्षे इसश्लोकसें ॥

शंका-एकपुरुष हरसाल अश्वमेधयज्ञकरे वो मांसभी नहींखाता, और दूसरापुरुष मांसही नहींखाता, तो उनदोनोंको पुण्यफलबराबर, तुल्यहोता, है ऐसाअर्थ क्यों न कराजावे ॥

समाधान-ऐसे यदि दोनोंपुरुष मांसको नहींखाते तो एककेकरे अश्वमेधयज्ञनका फल कहाजावेगा इस्सें यिहअर्थ संभवेनहीं किंतु अविहितमांस भक्षणकेही त्यागकी स्तुति इसश्लोकमेंकीहै ॥

विहितमांसकात्याग नहींकहा किन्तु विहितमांसके त्यागसें तो अतिदोष कहेहैं, इसअर्थमें प्रमाणोंको अब दिखलाताहूं ॥

मनुस्मृति प्र०८१—**नियुक्तस्तुयथान्यायं योमांसंनात्तिमानवः । सप्रेत्यपशुतांयाति संभवानेकविंशतिम् ॥ अ० ५ ॥ ३५ ॥**

अर्थ —श्राद्धमें मधुपर्कआदिकोंमें शास्त्रविधिसें प्रेराहुआ जोपुरुष मांसको नहींखाता वो मरकर २१ जन्म पशुके पाताहै ॥

हेभ्रातः प्रमाणांक २७ और २८ में इसकी टीकाभी दिखाचुकाहूं ॥

व्यासस्मृति प्र० ८२—नाश्नीयाद्ब्राह्मणोमांस मनियुक्तःकथञ्चन। क्रतौश्राद्धेनियुक्तोवा अनश्नन् पततिद्विजः ॥ अ० ३ । ५६ ॥

अर्थ—जिसमें विधिवाक्य प्रेरणा नहींकर्ता वो विधिसें न प्रेराहुआ ब्राह्मण अर्थात् अविहितमांसको ब्राह्मण किसीप्रकारभी नहींखाए, और यज्ञमें व श्राद्धमें विधिसेंप्रेराहुआब्राह्मण मांसको नहींखाएतो पतितहोजाता है ॥

वासिष्ठस्मृति प्र० ८३—नियुक्तस्तुयदाश्राद्धे दैवेवामांसमुत्सृजेत्। यावन्तिपशुरोमाणि तावन्नरकमृच्छति ॥ अ० ११ ॥ ३१ ॥

अर्थ—विधिसेंप्रेराहुआपुरुष श्राद्धमें वा दैवकर्ममें मांसको त्यागदे, नहींखाएतो जितने पशुकेशरीरमेंरोमहों उतनेवर्ष नरककोप्राप्तरहताहै ॥

कूर्मपुराण प्र० ८४ योनाश्नातिद्विजोमांसंनियुक्तः पितृकर्माणि। सप्रेत्यपशुतांयाति संभवानेकविंशतिम्॥ अ० २२ ॥ ६८ ॥

अर्थ—पितृकर्मश्राद्धमें विधिसेंप्रेराहुआ जोद्विजपुरुष मांसको नहींखाता, वो मरकर २१ जन्म पशुकेपाताहै ॥

पद्मपुराण प्र० ८५—आमन्त्रितश्चयः श्राद्धे दैवेवा मांसमुत्सृजेत् । यावन्तिपशुरोमाणि तावन्नरकमृच्छति ॥ खण्ड ३ ॥ अ० ५६ ॥ ४२ ॥

अर्थ जोपुरुष श्राद्धमें वा देवकर्ममें आमन्त्रणकराहुआ मांसको नहीं खाता वोपुरुष जितनेपशुके शरीरमें रोमहों उतनेवर्षतक नरकको प्राप्तरहताहै ॥

होरजो तुमने लिखा कि—मतलब यहहै कि—मांसाहारीपुरुषका सब कर्मधर्म नष्टहोजाताहै,, सोयिहभीतुमने नास्तिकतासें मिथ्याहीलिखाहै, तथाहीसुनिये ॥

१—वेदसूत्रस्मृतिग्रन्थनमें बहुतहीवाक्य मांसभक्षणका विधानकर्तेहैं तो उन श्रुतिसूत्रस्मृतिओंसें विहितकर्मकरणेकर सबकर्मधर्मोंका नाश कहना क्या नास्तिकतासें बिना होसक्ताहै अर्थात् वेदसूत्रस्मृतिओंसें विरुद्ध कहने कर नास्तिकता प्रकटहीहै ॥

२—हेमित्र—मांसाहारीपुरुषका सबकर्मधर्म नष्टहोजाताहै,, यिह तुमारा करा आक्षेप रामलक्ष्मणआदिअवतारोंमें तथावेदवेताब्राह्मणोंमें महर्षिओंमें और नल अम्बरीष रन्तिदेव युधिष्ठरप्रभृतिधर्मात्मामहाराजोंमेंभी प्राप्तहोगा क्योंकि—यिहसब महानुभावपुरुष मांसको खाते खुलाते रहेहैं तो उनपूज्य जनोंमें आक्षेप नास्तिकताबिना नहींहोसक्ता ॥

३—हेभ्रातः—यद्यपि अविहितमांसखानेका स्मृतिआदिकोंमें निषेधहै उससें दोषभी लिखाहीहै तथापि विहितमांसखानेसें दोष नहींहोता, इस अर्थमें देखो प्रमाणांक ३१ आदिकबहुतप्रमाण दिखाचुकाहूं ॥

और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोष कहेहैं

अतः विहितमांसके खानेवालेका कर्मधर्म नष्टनहींहोता किंतु श्रुतिस्मृति आदिकोंसें विरुद्ध मिथ्याकथनवालेका धर्मरूप मूल सूकजाताहै,, नष्टहो जाताहै इसमेंदेखो —

अथर्ववेदकी प्रश्नोपनिषद् — **समूलोवाएषपरिशुष्यति योऽनृतमभिवदति** प्र० ६ ॥ १ ॥

अर्थ – यिहपुरुषरूपवृक्ष स्वभाग्यरूप मूलके सहितसूकजाताहै जोपुरुष असत्यभाषणकर्ताहै

पूर्वपक्षी० - **मांसभक्षयिताऽमुत्र यस्यमांसमिहाद्म्यहम् ॥ एतन्मांसस्यमांसत्वं प्रवदन्तिमनीषिणः** म. अ. ५॥५५॥ जिसके मांसको मैं खाताहुं परलोकमें वह मेरेको खावेगा इसलियेही पंडितलोक मांसको मांसनामसे कहते हैं ॥

आस्तिक०—इसमनुश्लोकपर कुल्लूकभट्टकीटीका प्र०८६ **इतिमांसशब्दस्य निर्वचनमवैधमांसभक्षणपापफलकथनार्थम् ॥** अर्थ-यिह मांसशब्दके अर्थकाकथन अविहितमांसभक्षणके पापफलकेकथनलियेहै ॥ हेमित्र, देखो, टीकामेंभी अविहितमांसका यिह अर्थ कहाहै फिर आप मनुजीनेभी कहाहै ॥

मनुस्मृति प्र०८७— **नाद्यादविधिनामांसं विधिज्ञोऽनापदिद्विजः ॥ जग्ध्वाह्यविधिनामांसंप्रेत्यतैरद्यतेऽवशः** अ, ५॥३३॥ अर्थ—विधिको जाननेवाला द्विजपुरुष अनापत्काल

म विधिसेंबिना मांसको नखाए क्योंकि-विधिसेंबिना मांसको खानेवाला पुरुष मरकर परलोकमें उनोंसें खायाजाताहै ॥

इसमनुश्लोकका तात्पर्य्य यिह प्रकटहीहै कि-आपत्कालमें तो अविधि सें मांसकोखाए परंतु अनापत्कालमें विधिसेंबिना मांसकोन खावे अर्थात् अनापत्कालमें विधिसें मांसकोखाए ॥

हेभ्रातः—विधिबिना मांसको खाए तो मरकर उनोंमे खायाजाताहै, यिह इसश्लोकमें मनुजीने आपभी कहाहै अतः विधिसें मांसखानेवाला मर कर उनोंसे नहीं खायाजाता, यिह तुमारेलिखेश्लोकका अर्थ प्रकटहीहै अतः तुमारेलिखे मनुश्लोकमें अविहितमांसका अर्थ दिखलायाहै ॥ अब देखिये परमप्रमाण यास्कमहर्षिकेवेदांगनिरुक्तमें मांसका क्या अर्थ कराहै ॥

निरुक्त प्र०८८—[मांसं] माननं वा मानसं वा मनोऽस्मिन् सीदतीति वा ॥अ,४॥२॥३॥

इसनिरुक्तपर दुर्गाचार्य्यकी निरुक्तवृत्ति प्र० ८६—[मांसं]माननंवा, यएवहिमान्योभवति तदर्थमेतत्संक्रियते मानसंवा, सुमनसाहि तदुपादीयते अथवा यएवहि मनस्विनोभवन्ति तैरुपादीयते मनोऽस्मिन्सीदतीतिवा सर्वस्यैवहि मांसे मनःसीदति

निरुक्तका और वृत्तिका अर्थ—मांसका मांस नाम क्यों है ॥

१—जोपुरुष मानके योग्यहो उसके मानालिये यिह बनायाजाताहै अतः मांसका मांसनामहै ॥

२—प्रसन्नमनमेंही वो ग्रहणकराजाताहै अथवा जो श्रेष्ठमनवाले पुरुषहैं उन्होंने ग्रहणकरिताहै अतः इसकोमांसनामसें कहतेहैं ॥

३—रमज्ञ सर्वमनुष्यनकामन इसमेंजाताहै इस्सेंभी इसका मांसनामहै ॥ यहां निरुक्तमें उद्देश्य मांसवस्तुहै अतःकिसीसमाजीका किया अन्यथा अर्थ माननीय नहींहोसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०—जो कहतेहैं कि—हमतो नहींमारते किंतु मोललेतेहैं अतः हमको पाप नहींलगसक्ता इसपरमनुजी उत्तरदेतेहैं—**अनुमन्ता विशसितानिहन्ताक्रयविक्रयी । संस्कर्ताचोपहर्ताच खादकश्चेतिघातकाः ॥** अ० ५ ॥ ५१ ॥

अर्थ—सम्मतिदेनेवाला १, अंगोंकोअलगरकाटनेवाला २, मारनेवाला ३, मांसके पकानेवाला ४, मोललेनेवाला ५, बेचनेवाला ६, परोसनेवाला ७, खानेवाला ८, यहआठोंही मारनेवालेहैं अर्थात् इनसबको एकसा पाप लगताहै इस्सें मारनेवालेकी तरह मोललेनेवालाभी महापापी और नरकगामी होताहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र इसश्लोकमें आठोंही मारनेवालेहैं, यिहतो कहाहै परंतु उनको कोईशुभअशुभफलतो नहींकहाहै अतः पशुमारनेवालेको क्या फलहोताहै, ऐसानिर्णयतो मनुस्मृति के किसीहोरश्लोकसेंही होसक्ता है वोदेखो—

मनुस्मृति—**एष्वर्थेषुपशून्हिंसन् वेदतत्त्वार्थविद्द्विजः । आत्मानंचपशुंचैव गमयत्युत्तमांगतिम् ॥ ५ ॥ ४२ ॥** अर्थ प्रमाणांक ६६ में लिखचुकाहुं ॥

इसश्लोकमें मनुजीआपकहतेहैं कि—देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर करी हिंसासें श्रेष्ठगतिरूप श्रेष्ठफलही दोनोंकोमिलेहै ॥

और देखो प्रमाणांक ३१ में मनुजीने आपकहाहै कि मोललेकर मांसखानेसें कोईदोपनहींहोता। और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांस के नहींखानेसें अतिदोष कहाहै तो इत्यादिक मनुस्मृतिके श्लोक हेमित्र क्या तुमने पढ़ेनहीं देखेनहीं, यदि पढ़ेहैं देखेहैं तो इनश्लोकोंको तुमने क्यों नहींलिखा ॥

भावयिह —यदितुम सत्यधर्मसें लेखलिखा चाहतेतो इत्यादिश्लोक भी अवश्यंलिखते फिर दोनोंप्रकारके श्लोकोंकी व्यवस्थाकर्तेतो जाना जाता कि – तुमारी श्रुतिस्मृतिओंमें श्रद्धाहै अतः तुमआस्तिकहो व सत्यमें तुमारी प्रीतिहै, परंतु तुमने एकतर्फे मनुके श्लोकलिखडाले इस्सें निश्चयहोताहै किश्रुतिस्मृतिओंके सिद्धान्तकी उपेक्षाकर्के तुमअपने चित्तचाहा प्रचारकर्तेहो तो श्रुतिस्मृतिओंके सिद्धान्तकी उपेक्षाकरणेसें तुम विद्वज्जनोंमें आस्तिक नहींकहलायसक्के ॥

मनुस्मृति प्र० ६०—**गृहेगुरावरण्येवा निवसन्नात्मवान्द्विजः। नावेदविहितांहिंसा मापद्यपिसमाचरेत् ॥** अ० ५।४३

अर्थ—अपने गृहमें वा गुरुके समीप वा बनमें वस्ताहुआ शुभमनवाला द्विजपुरुष वेदसें अविहितहिंसाको आपत्कालमेंभी नहींकरे ॥

हेपाठक—देखो प्रमाणांक ६८ को मनुजीने पंचमाध्यायके ४१ वें श्लोकमें यज्ञआदिकोंनिमित्त हिंसाका विधानकराहै, ४२ वें श्लोकमें उस विहितहिंसाका श्रेष्ठफल कहाहै, फिर इस ४३ वें श्लोकमें अविहितहिंसाका त्यागकहाहै, अतः मनुजीका तात्पर्य्य स्पष्टहीहै कि—शुभफलदायीविहित हिंसाको करे और अविहितहिंसाको नहींकरें ॥

मनुस्मृति प्र० ९१—प्रोक्षितंभक्षयेन्मांसं ब्राह्मणानांचकाम्यया ॥ यथाविधिर्नियुक्तस्तु प्राणानामेवचात्यये ॥ अ०५॥२७॥

इसपर राघवानन्दकी टीका प्र० ९२—इतिचतुष्टये नियमविधिः॥ अर्थ—वेदमंत्रसें प्रोक्षितमांसको और ब्राह्मणोंकी कामनासें मांसको खाए व देवकर्म पितृकर्मआदिकोंमें जैसाविधिसें प्रेराहुआ द्विजपुरुष मांसको खाए और प्राणांतसमयभी अर्थात् औषधालियेभी मांसको खाए, इनचारजगेमें मांसखानेका नियमविधिहै ॥

मनुस्मृतिप्र० ९३—नतादृशंभवत्येनो मृगहन्तुर्धनार्थिनः ॥ यादृशंभवतिप्रेत्य वृथामांसानिखादतः ॥ अ.५ ॥ ३४ ॥ अर्थ धनकेलिये मृगमारणवालेको वैसापाप नहींहोता जैसापाप वृथामांसखानेवालेको मरकरहोताहै ॥

हेपाठक—प्रमाणांक ९१ में मनुजीनें मांसखानेका विधानकराहै, और इसश्लोकमें वृथामांसके, अविहितमांसके खानेकर पाप कहाहै और प्रमाणांक ३१ में विहितमांसखानेसें निर्दोषता कही, और प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेसें अतिदोषकहाहै, इस्सें श्रुतिस्मृति आदिक आर्षग्रन्थ सत्यअर्थके प्रतिपादकहैं तो विहितमांसके खानेवाला पुरुष पापी नहींहोता अतः वा नरकगामी नहींहोसक्ता किंतु श्रुतिस्मृतिओंके वास्तवअर्थको छिपाकर असत्यकहनेवालापुरुष अवश्यं नरकगामी होताहै देखो—आत्मपुराण—समूलएवशुष्येत्स लोक

द्रुयफलंविना । अनृतंयोवदेत्कापि पुरुषःपरिमोहितः॥अ,१७।११७॥ अर्थ —सोपुरुषरूप वृक्ष अपनेभाग्यरूप मूलके सहित सूकजाताहै जो अतिभ्रान्तहुआपुरुष कहीं असत्यबोलताहै असत्य वक्तापुरुष मर्त्तलोक स्वर्गलोक इनदोनोंलोकोंके सुखरूप फलोंको नहीं प्राप्त होता अर्थात् नरकगामीहोताहै ॥

पूर्वपक्षी०—जबके मनुजीने मनुस्मृतिके अ,३ में घरमें नित्यहोनेवाले पांचमहापापों के दूरकरनेकेवास्ते ५ महायज्ञोंका नित्यकरनागृहस्थकेलिये विधानाकियाहै औरकहाहै कि इनके न करनेसे मनुष्य स्वर्ग में नहीं जासक्ता तोफिर मांसकेखानेमें अथवा पशुके मारनेमें कितना दोषहोगा थोडा इसबातका विचार मांसाहारीको आपहीकरलेनाचाहिये कण्डनी पेषणीचुल्ली उदकुम्भीचमार्जनी ॥ पञ्चसूना गृहस्थस्य ताभिःस्वर्गंनगच्छति ॥म०अ०।॥श्लोक६८ मनुजी कहतेहैं कि—गृहस्थके घरमें पांच 'सूना' बधके स्थानहैं जैसे उखली, चक्की, चुल्ह, जलका घट, झाडू, अर्थात् इनपांचस्थानोंमें प्रायः नित्यसूक्ष्म जीव मराकर्तेहैं और इसहिंसाका पाप गृहस्थके शिरपर नित्यचढताहै यदि गृहस्थ इनका पांचयज्ञोंद्वारा प्रमादसें प्रायश्चित न करे तो वह स्वर्गमें नहीं जासक्ता किंतु नरकमेंही पडताहै ॥

आस्तिक०—मनुस्मृतिके इसश्लोकका पाठभी तुमने बदलदिया, क्या ऐसेपापसें तुम भयनहींकर्ते, इसीसें तुमको बारंवार नरक स्मरणमें आताहै॥

हे पाठक—मनुस्मृतिमें ऐसापाठहै —पञ्चसूनागृहस्थस्य चुल्लीपेषण्युपस्करः ॥ कण्डनीचोदकुम्भश्च

वध्यतेयास्तुवाहयन् ॥ अ० ३ ॥६८॥

अर्थ—गृहस्थके घरमें चुल्ली, चक्की, झाड़, उखली जलका घट, यिह पांच हिंसाकेस्थानहैं जिनपांचोंको स्वकार्य्यमें लगाताहुआ। गृहस्थजन पापसेंयुक्तहोताहै ॥

अब यहां आपभी थोड़ासा विचार करलीजिये कि इन पांचजगेमें जो सूक्ष्मजीवोंकी हिंसाहोतीहैं वो क्या अजआदिकोंकीन्याई देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर कीजातीहैं अथवा देवताऽऽदिकोंके निमित्तसेंबिना वो अविहित-हिंसाहोतीहैं ॥

इनमें प्रथमपक्ष तो असंभवहीहै क्योंकि-उन सूक्ष्मजीवोंके बलिप्रदान में कोईविधिवाक्य नहींहैं, वो अतिसूक्ष्मजीव किसीके काममेंभी नहींआते, और नांहीं उनको देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर माराजाताहै इस्सें वो विहितहिंसा नहींहैं ॥

यदि द्वितीयपक्षकहोतो धर्मशास्त्रनमें अविहितहिंसाका पापकहाहीहै अविहिंताहिंसाके पापोंकी निवृत्तिलिये प्रायश्चित्तकरणायोग्यही है अतः अविहितहिंसाके पापोंकीनिवृत्तिलिये पंचमहायज्ञरूप प्रायश्चित्तोंका मनुजी ने विधानकराहै, तो समीचीनकराहै हच्छाकराहै ॥

हेभ्रातः—श्रुतिस्मृतिआदिकोंमें देवतापितरआतिथि आदिकोंकेलिये मांसदानकाविधानहै अतः पंजमहायज्ञनमें देवयज्ञमनुष्ययज्ञआदिकोंको यदि तुमकर्तेहोतो उनमें श्रुतिस्मृतिओंके विधिपालनलिये मांसकी अपेक्षाहै, यदि तुम श्रुतिस्मृतिअनुसारी देवयज्ञमनुष्ययज्ञआदिक नहीं कर्तेहो तो प्रमादकर प्रायश्चित्तकी न्यूनतासें तुम स्वर्गमें नहींजासक्के किंतु तुमने अपनीकलमसेंही नरकमें पड़नालिखाहै ॥

पूर्वपक्षी०—अब महाभारतमें युधिष्ठिर और ब्रह्मचारी भीष्मपितामह जीके मांसविषयमें प्रश्नोत्तरकोदेखिये

युधिष्ठिरउवाच–प्रायशःपुरुषालोके नृशंसाःप्राणि-हिंसकाः ॥ मांसेषुश्रद्धादृश्यन्ते रौद्रारक्षोगणाइव

महाभारतान्तर्गत इतिहाससमुच्चय अ० २८ ॥ ५ ॥

भीष्मउवाच – अहोनुखलुशोच्यास्ते नराविषय-लोलुपाः सर्वदोषकरेमांसे मूढापश्यन्तियेगुणान्

इति. अ. २८ ॥ ५ ॥ हेपितामहजी प्रायः इससंसारमें. क्रूरलोग जीवोंके मारनेवाले और मांसखानेकी प्रीतिवालेही भयंकर राक्षसोंकीतरह देखनेमेंआतेहैं ॥ १ ॥

भीष्मजीबोले—वहपुरुष सर्वथानिन्दाकेयोग्यहैं जो मूर्ख केवलदोषोंकीखान मांसमेंभी कोईगुणमानतेहैं क्योंकि–इसमें विनादोषोंके गुणकानामभी नहींहै ॥

आस्तिक०—महाभारतके १८ पर्वहैं उन १८ पर्वोंमें कहीं इतिहास समुच्चय नहींहै, यदि तुमकहो कि–महाभारतसें श्लोकनिकालकर इतिहास समुच्चय किसीने बनायाहैतो हेमित्र ऐसेबनानेवाला अपनानाम लिखतातो उसकी सरलता जानीजाती ॥

और महाभारत के श्लोकोंका पाठभी बराबर मिलना चाहियेथा वो सबनहींमिलता अतः जिनश्लोकोंका पाठ भारतश्लोकोंके बराबरहैं वोश्लोक माननीयहैं अन्यश्लोक माननीयनहीं होसक्ते क्योंकि भारतकेनामसें छलकर किसीने बनाडालेहैं ॥

हेमित्र—महाभारतको क्या तुमने पढ़ानहीं, विचारानहीं, यदि तुमने भारतको विचाराहोता और यिहश्लोकभी भारतमें ऐसेहीहोते तो तुम इतिहाससमुच्चयकानाम क्यों महाभारतकेही उसपर्वकानाम और अध्यायां-

कश्लोकांक लिखदेते वो न लिखनेसें तुमाराभी छलही प्रकटहोताहै महाभारतमें युधिष्ठिर और भीष्मजीकेमांसविषयक प्रश्नउत्तर पर्व १३ वेंकेअध्याय ११६वेंमेंहैं वहांपरश्लोकोंका ऐसापाठहै देखो-

महाभारत प्र० ६४—**युधिष्ठिर उवाच–इमेवैमान वालोके नृशंसामांसगृद्धिनः । विसृज्यविविधान् भक्ष्यान् महारक्षोगणाइव ॥प० १३॥अ० ११६॥१ अपूपान्विविधाकारान् शाकानिविविधानिच । खाण्डवान्रसयोगान्न तथेच्छन्तियथामिषम् २॥**

अर्थ—युधिष्ठिरजीने कहा–हेपितामहजी लोकमें यिहमनुष्य क्रूर महाराक्षसोंकीन्यांई नानाविधभक्ष्यपदार्थोंको त्यागकर मांसकी अभिलाषा वालेहैं ॥ १ ॥ नानाआकारवाले मालपूड़ोंको नानाप्रकारके शाकोंको रसदार पकवानोंको वोमनुष्य वैसे नहींचाहते जैसेमांसको चाहतेहैं ॥

भीष्मउवाच महाभारत प्र० ६५—**एवमेतन्महाबाहोयथावदसिभारत । नमांसात्परमंकिञ्चिद् रसतो विद्यतेभुवि ॥ १३ ॥ ११६ ॥ ७ ॥**

हेमहाबाहो युधिष्ठिर—जैसेतूंकहताहै यिहऐसेहीहै कि पृथ्वीमें कोई वस्तु मांससें श्रेष्ठरसवालानहींहै।

महाभारत प्र० ६६—**क्षतक्षीणाभितप्तानां ग्राम्यधर्मरतात्मनाम् । अध्वनाकर्षितानांच नमांसाद्विद्यतेपरम् ॥ ८ ॥**

अर्थ जखमवालेको, क्षयरोगसेंपीडितजनको, मैथुनमेंरागवालेगृहस्थों को, मार्गसेंकृशहुएजनोंको, मांससेंअन्यवस्तु श्रेष्ठहितकरनहींहै अर्थात् इन चारजनोंको मांस अतिहितकारीहै ॥

महाभारत अ०६७ सद्योवर्द्धयतिप्राणान् पुष्टिमग्र्यां दधातिच। नभक्ष्योऽभ्यधिकःकश्चिन्मांसादस्ति परंतप ॥ १२ ॥ ११६ ॥ ९ ॥

अर्थ प्राणोंको अर्थात् आयुको शीघ्र बढावेहै, अत्यन्तपुष्टिकोकरेहै हेपरंतपयुधिष्ठिर मांससेंश्रेष्ठ कोईखानेयोग्यवस्तु नहींहै ॥

हेमित्र-देखोयिह महाभारतके श्लोकहैं जिनका पर्वांकअध्यायांक श्लोकांकदिखादियाहै, इनमेंदेखियेभीष्मजीने मांसकेकैसेगुणकहेहैं ॥

हेभ्रातः—भीष्मजीनेहीनहीं किंतु आर्षग्रन्थचरकसंहितामें महर्षिचरक जीनेभी देखोमांसके कैसेश्रेष्ठगुण कहेहैं ॥

चरकसंहिता अ० ९८—अतोऽन्यथाहितंमांसं बृंहणं बलवर्द्धनम्। प्रीणनःसर्वभूतानां हृद्योमांसरसः परम् ॥ अ० २७ ॥ ३०५ ॥

चरकसंहिता अ० ९९—शुष्यतांव्याधियुक्तानांकृशानांक्षीणरेतसाम्। बलवर्णार्थिनांचैव रसंविद्याद्यथामृतम् ॥ ३०६ ॥

चरकसंहिता अ० १००—सर्वरोगप्रशमनं यथास्वंविहितंरसम्। विद्यात्स्वर्यंबलकरं वयोबुद्धीन्द्रियायुषाम् ॥ ३०७ ॥

अर्थ—वहांपूर्वश्लोकमें जोकहा कि—मृतहुएअजआदिकोंका मांस बाल वा वृद्ध वा विषसें वा सर्पादिकसें मरकामांस' ऐसेमांसोको नहीं खाए (अतोऽन्यथा) इनमांसोंसें अन्यप्रकारका जोमांसहै वो हितकारी है वीर्यकावर्धकहै बलका वर्धकहै ॥

अब मांसके रसकेगुण कहतेहैं—मांसका रस सबजीवों को तृप्तकरेहै, अतिरुचिरहै ॥२०५॥ क्षयरोगवालोंको, रोगीजनोंको, कृशजनोंको, क्षीण वीर्यपुरुषोंको, बलकेअभिलापीजनोंको, रूपकेअभिलापीजनोंको, मांसका रस अमृतकेतुल्यजानों ॥ २०६ ॥ यथायोग्यबनायाहुआ मांसका रस सर्वरोगोंकोनाशकरेहै, स्वरको सुन्दरकर्ताहै. अवस्थाको बुद्धिको इन्द्रियोंको आयुको बलदेनेवाला मांसकारसहै ॥ २०७ ॥

हेमित्र—महर्षिचरकजीने तथा भीष्मापितामहजीनेतो मांसके व मांसके रसके ऐसेश्रेष्ठ गुणवर्णनकरेहैं इनसेंविरुद्ध तुमारालेख वा इतिहाससमुच्चयके कर्ताकालेख असत्यहीहै अतः महर्षिचकरजीसें तथा भीष्मजीसें विरुद्ध लिखनेवालेही निन्दाकेयोग्यहैं ॥

पूर्वपक्षी॰—नमांसमायुषोहेतु नारोग्यस्यनचौजसः । दैवंकारणमेतेषां साक्षादेवेहदृश्यते ॥ इति॰ स॰ ॥ अ॰ २६ ॥ ६ ॥ मांसाशिनोपिदृश्यन्ते रोगार्त्ताभृशदुर्बलाः । अमांसभोजिनोऽरोगा बलवन्तःसुखान्विताः ॥ १० ॥

हेयुधिष्ठिर—मांसआयुके बढ़नेकाकारणनहींहै नीरोगताका और बल काभी कारणनहींहै किंतु यहसब प्रारब्धसें प्राप्तहोतेहैं यह साक्षात् देखनेमें आताहै ॥६॥ हम देखतेहैं कि—अनेकजीव मांसखातेहैं परन्तु बहुतसें रोगों

सें मिलेहुएहैं एवं बलसेंभी शून्यहैं, केईजीव सर्वथामांस नहींखाते किंतु नीरोग बलवान्हैं तथा सुखीप्रतीतहोतेहैं ॥१०॥ इससें सिद्धहोताहै कि— बल नीरोगताऽऽदिलियेभी मांसका खाना सर्वथामूर्खताहै ॥

आस्तिक—इनश्लोकोंमें यदि कोईहोर भक्ष्यवस्तु आयुनीरोगताबलका कारणकहतेतो तुमको यिहश्लोकालिखनेयोग्यथे परंतु इनमें आयुनीरोगता बलकाकारण प्रारब्धकहाहै अतः सम्यक् विचारें तो इनदोनोंश्लोकों में आयुका नीरोगताका बलका कारणमांसकहाहै ॥

जैसेकोईकहे कि—**म्रियमाणे नचौषधंफलति,,** मरण समीप अर्थात् प्रारब्धक्षयहुएपुरुषमें औषध फल नहींकर्ता, इसकथनका यिह तात्पर्य्य नहींहोसक्ता कि—औषधका कुछफल नहींहोता किंतु इसकथनका यिह तात्पर्य्यहै कि—औषधका फलतोहै परंतु प्रारब्धक्षीणहुए औषधका फल नहींहोता ॥

ऐसेही इनतुमारेलिखे श्लोकोंका तात्पर्य्य स्पष्टहीहै कि—आयुका नीरोगताका बलका कारणमांसहै परंतु प्रारब्धविना आयु नीरोगता बलका कारण मांसनहीं क्योंकि—प्रारब्ध साधारण कारणहै जो सर्व कार्यकाकारणहोवे वो साधारणकारणकहियेहै अतः प्रारब्धकीसहायतासें ही सर्वफलहोतेहैं प्रारब्धसेंविना तो औषधोंकाभी होरकिसीकाभी कोईफलनहीं होता, प्रारब्धक्षयहुए भ्रातामित्रआदिकभी मुख फेरलेतेहैं, औषधभी गुण नहींकर्ता, लाभकी जगहभी हानीहोजातीहै तो मांसकागुण नहुआतो कोई आश्चर्य्यनहींहै जैसेजगतमें प्रसिद्धहीहै कि—**भाग्यहीनखेतीकरे या बैलमरे या सोकापड़े ॥**

अतः योग्यहै कि—श्रुतिस्मृतिओंसें विहित आचारकर पुण्योंकासम्पादन करे और चरकसंहिताऽऽदिकोंमें जन्नमांसके आयुवर्द्धन सर्वरोगप्रशमन बल

आदिकगुणकहेहैं तो उनआर्षवाक्यनका, दुराग्रहकर न मानना मूर्खताहीहै

पूर्वपक्षी स्वच्छन्दवनजातेन शाकेनापिप्रपूर्य्यते ।
तस्यचैवोदरंस्यार्थे कःकुर्यात्पातकंनरः इ० अ०२८॥

१५ ॥ स्वच्छन्द बनमेंहोनेवाले शाकसेंभी पेटभरा जाताहै तो फिर उसके वास्तेकौनपुरुष पापकरे १५

आस्तिक०—केईवार प्रबलप्रमाणोंसे सिद्धकरचुकाहुं कि—अविहितमांस को नहींखानाचाहिये, और देखो प्रमाणांक ३१ आदिकोंको ।विहितमांसके खानेसे पाप नहींहोता प्रत्युत देखोप्रमाणांक ८१ आदिकोंको विहितमांस के नहींखानेसें अतिपाप होताहै अतः गृहस्थजनोंने वृथामांसको त्यागकर विहितमांसको अवश्यखानाचाहिये ॥

पूर्वपक्षी०—अब भीष्मजी युधिष्ठिरको बहुतसे ऋषिओंकी सभाहोकर आपसमें मांसकेभक्ष्याभक्ष्यके विषयमें जो निर्णय, फैसलाहूआथा उसको सुनातेहैं कि किस २ ऋषिने मांसके विषयमें क्या२ कहाथा महाभारतान्तर्गत इतिहाससमुच्चयमे लिखाहै कि —योऽहिंसकानिभूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया ॥ कृष्णद्वैपायनःप्राह स्थावरत्वंसगच्छति ॥ ३, अ, २८॥२७॥ सभामें पहिली व्यासजी की सम्मति—जो निरपराधजीवोंको अपनेसुखकी कामनासें मारताहै वह मर कर वृक्ष बनताहै ॥

आस्तिक०—यदि इत्यादिश्लोक महाभारतकेहोते तो तुम पर्वांक अध्यायांक श्लोकांक लिखते वोतो तुमने लिखेहीनहीं अतः यिह श्लोक प्रमाण रूप नहींहै तथापि स्मृतिओंमें व्यासप्रभृतिमहर्षिओंके सम्मुख अपने २ जो मांसभक्षणमें निर्णय प्रकट करेहैं उनस्मृतिरूप प्रबलप्रमाणोंको मैं दिखलाताहुं ॥

अनेकऋषिओंके समक्ष व्यासजीका निर्णय प्रथम देखो ॥

व्यासस्मृति– नाश्नीयाद्ब्राह्मणोमांस मनियुक्तः कथंचन ॥ ऋतौश्राद्धेनियुक्तोवा अनश्नन्पतति द्विजः अ,३॥५५॥ अर्थ प्रमाणांक ८२ में लिखचुकाहूं ॥ इस श्लोक में व्यासजी कहतेहैं कि, विधिसें विना ब्राह्मण मांसको नहींखाए ॥ यज्ञमें और श्राद्धमें द्विजपुरुष मांसको नहींखाए तो पतित होजाताहै अर्थात् वृथामांसके खानेका निषेधकर्के विहितमांसके खानेकी आवश्यकता व्यास जीकहतेहैं, यिह व्यासजीका निर्णयहै वो तुमारेलिखेश्लोकमेंभी कहाहैकि आत्मसुखेच्छया,, अपने सुखकी इच्छाकर अर्थात् देवताऽऽ-दिकोंके निमित्तसेंविना जो वृथाहिंसाका कर्ताहै वो मरकर वृक्ष बनताहै, विहितहिंसाके करणेवाला वृक्ष नहीं बनसक्ता क्योंकि देखो प्रमाणांक ६६ में विहितहिंसाका तो दोनोंको उत्तमगतिकी प्राप्तिरूप श्रेष्ठफलही कहाहै ॥

पूर्वपक्षी०—संतप्यतितपोऽजस्रं यजतेचददातिच ।
मधुमांसनिवृत्तोयः प्रोवाचेदंबृहस्पतिः ॥२८॥
यावज्जीवंतुयोमांसं विषवत्परिवर्जयेत् ॥
वसिष्ठोभगवानाह स्वर्गलोकंसगच्छति ॥२९॥
योभक्षयित्वामांसानि पश्चादपिनिवर्तते ॥
जमदग्निर्जगादैवं सोऽपिस्वर्गतिमाप्नुयात् ।३०।
सुवर्णदानंगोदानं भूमिदानंतथैवच ॥

नोत्तमंप्राणदानात्स्या दित्युवाचपराशरः ।३१।

बृहस्पतिजी-जो, मधु, शराब मांसका भक्षण नहीं कर्ता वह नित्यके तप और दान करनेवालाहै अर्थात् विनातप और दानके दोनोंका फल पाताहै ॥ २८ ॥

वसिष्टजी-जो आयुभर मांसका विषकीन्यांई त्यागकर्ताहै वह स्वर्गको जाताहै ॥ २६ ॥

महर्षिजमदग्निजी—जोमांसकोखाकरभी पीछे छोड देताहै वहभी स्वर्गको प्राप्त होताहै ॥ ३० ॥

श्रीवेदव्यासजीके पिता पराशरजी-सोनेका दान गौका दान, भूमिका दान, यहतीनों महादान मानेजातेहैं परन्तु एक प्राणोंके दानके बराबर यहतीनों नहींहोसक्ते क्योंकि-प्राणोंका दान सबसें उत्तमहै ॥३१॥

आस्तिक०—हेमित्र तुम इतिहाससमुच्चयमेंही रहे पंडितमानीहुएभी महाभारततक नहींपहुंचसके-महाभारतआदिआर्ष वाक्यनकी व्यवस्थाकरी जातीहै, इतिहाससमुच्चयकी व्यवस्थाकी आवश्यकता नहींहै तथापि प्रबल प्रमाणोंसें उत्तरदेताहूं व्यवस्थादिखलाताहुं ॥

बृहस्पतिके विषयमें तो साक्षात्वेद प्रमाणहै-

कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता अ० १०१-

बार्हस्पत्यँ शितिपृष्ठमालभेत ॥ काण्ड २॥ प्रपाठक १॥ अनुवाक ६॥ १॥ अर्थ- बृहस्पतिदेवतानिमित्तक श्वेतपृष्ठवाले अज आदि पशुको मारे ॥ देवताकेनिमित्त पशुके मारणका नाम आलभनहै ॥

भगवद् व्यासजीके प्रपितामह, महर्षिपराशरजीके पितामह, साक्षात् ब्रह्माके पुत्र महामुनिवसिष्टजीके निर्णयको अब देखो—

वसिष्टस्मृति प्र० १०२— **पितृदेवताऽतिथिपूजायां पशुंहिंस्यात् ॥** अ० ४॥१ ॥ अर्थ—पितरोंकी देवतोंकी अतिथि की सेवालिये पशुको मारे ॥

देखो देवताऽऽदिकोंके निमित्तकर पशुके मारणका वसिष्टजी विधान करतेहैं अतः तुमारेलिखेश्लोकोंमें वृथामांसके त्यागका फल कहाहै ॥ और देखो प्रमाणांक ८३ आदिकोंको विहितमांसके नहीं खानेसें नरकादिकी प्राप्ति वसिष्टआदिमहर्षियोंनें कहीहै अतः धर्मात्मागृहस्थजनों ने वृथामांसका त्यागकर्के विहितमांसको अवश्यखाना चाहिये ॥

व्यासजीकेपिता महर्षिपराशरजीकी सम्मति—

बृहत्पाराशरीय प्र० १०३—**भक्ष्यंप्राणात्ययेमांसं श्राद्धयज्ञोत्सवेष्वपि ॥** अ० ४ ॥ ३१६ ॥

अर्थ—प्राणान्तसमय अर्थात् औषधालिये मांसभक्ष्यहै और श्राद्धमें यज्ञमें उत्सवोंमेंभी मांसभक्ष्यहै ॥

और प्रमाणांक ७५ मेंभी पराशरजीनें नित्यपंचमहायज्ञनमें मांसादिकों सें पितरोंकी देवतोंकी अतिथिमनुष्योंकी तृप्तिकरणेकर स्वर्गप्राप्तिकाविधान कराहै ॥

इत्यादिक प्रबलप्रमाणोंसेंभी और पहिलेभीसिद्ध होचुकाहै कि–विहित पशुहिंसासें और विहितमांसभक्षणसें कोईदोष नहींहोता प्रत्युतश्रेष्ठफलही होताहै अतः तुमारेलिखे श्लोकोंमेंवृथामांसके त्यागकाहीफलकहाहै क्योंकि प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके नहींखानेकर अतिदोषकहाहै ॥

मनुस्मृति प्र० १०४ **यज्ञार्थंब्राह्मणैर्वध्याः प्रशस्ता मृगपक्षिणः । भृत्यानांचैववृत्त्यर्थ मगस्त्यो ह्याचरत्पुरा ॥** अ० ५ ॥ २२ ॥

इसपर मेधातिथिका मनुभाष्य प्र० १०५ यज्ञार्थमित्याद्य-र्धश्लोकोऽर्थवादएवतत्राहिवधः प्रत्यक्षश्रुतिविहितत्वादेवासिद्धः ॥

इसपर सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० १०६—यज्ञार्थं पाक यज्ञहविर्यज्ञ सोमयज्ञसिद्ध्यर्थं बध्याः स्वयं ॥

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका प्र० १०७ ब्राह्मणादिभिर्यागार्थं प्रशस्ताः शास्त्रविहिता मृगपक्षिणोबध्याः, भृत्यानांचावश्यभरणीयानां वृद्धमातापित्रादीनां संवर्धनार्थम् यस्मादगस्त्योमुनिःपूर्वंतथाकृतवान् परकृतिरूपोऽयमनुवादः ॥

इसपर राघवानन्दकी टीका प्र० १०८—भक्ष्यप्रसंगेनाहिंसां कुर्वित्यनुजानाति यागार्थमिति सदाचारं प्रमाणयति अगस्त्यइति ॥

इसपर नन्दनाचार्यका मानवव्याख्यान प्र० १०९—

भक्ष्यत्वेनानुज्ञातानां मृगपक्षिणांयज्ञार्थं भृत्यार्थंच वधोब्राह्मणानामपिनिर्दोषइत्याह यज्ञार्थम् इति ॥

इसपर रामचंद्रकी टीका प्र० ११०—अगस्त्यः भृत्यानांपित्रादीनांतृप्त्यर्थं पुराआचरत् ॥

इनटीकाओंसहित मनुश्लोककाअर्थ—भक्ष्यकेप्रसंगसें इसश्लोकमेंविहित हिंसाकी मनुजी सम्मतिदेतेहैं ॥

यज्ञानिमित्त और पालनपोषणयोग्य वृद्धमातापिताऽऽदिकोंकी जीविका निमित्तभी शास्त्रविहितमृगपक्षी ब्राह्मणोंनेआप मारणेचाहिये, इसमेंश्रेष्ठाचार काप्रमाणदेतेहैं कि—अगस्त्यमुनिजीभी पहिलेवैसेही करतेभये इसमेंब्राह्मण को कोईदोषनहींहोता ॥

मेधातिथिजी कहतेहैं कि—पूर्वअर्धश्लोक अर्थवादहै, श्रेष्ठगुणकाकथनहै क्योंकि तहांयज्ञमें मृगआदिकोंकी हिंसा साक्षात् श्रुतिविहितहोनेसें सिद्धहीहै हेमित्र—पालनपोषणयोग्य ६ कहेहैं देखो—

शब्दस्तोममहानिधि—मातापितागुरुःपत्नी त्वपत्यानिसमाश्रिताः। अभ्यागतोऽतिथिश्चाग्निः पोष्यवर्गउदाहृतः ॥

अर्थ—माता पिता गुरु स्त्री सन्तान स्वाश्रित अभ्यागत अतिथि अग्नि, यिह, पोष्यवर्गहै पोषणयोग्यका समुदायहै ॥

पूर्वपक्षी०—यद्यपि और ऋषिओंकीभी बहुतसी सम्मतियेमांसनिन्दा और हिंसाकी निन्दामेंहैं तथापिग्रन्थबढ़नेके भयसें सर्वनहीं लिखीगई ॥

आस्तिक०—हेमित्र दोनोंप्रकारकेवाक्य लिखकरव्यवस्था कीजावेतो सम्मति प्रकट होसक्तीहै, दुराग्रहसें एकतर्फेवाक्य लिखनेकर सम्मति प्रकट

नहींहोसक्ती हेवाल तुमनेतो केईछलकर लेखलिखाहै अतःऋषिओंकी सम्मति प्रकटकरनेमें तेरा अधिकारही कैसेहोसक्ताहै ॥

ऋषिओंकीसम्मतिएंतो तुमकैसेछोड़सक्तेहो मुसलमानोंके वाक्यतो तुमने लिखडाले, जिनमुसलमानोंकी शराहमें पीरपैगंबर सैयदफ़कीर अमीरगरीब औरतमरद बच्ची बच्चे बूढ़ेजवान वगैहरासबकोलिये मांसखानाजैजहै, यिह सबलोकजानतेहीहैंतो उनकेभीअनुपयोगीवाक्य लिखदेने, यिहक्या उपहास योग्यतानहींहै ॥

पूर्वपक्षी०—अब मांसकेखानेमें थोड़ादोषमाननेवाले इनऋषिओंकी बात पर ध्यानदेंगेतो समझेंगे कि—इसमें कितनादोषहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र जिनोंने श्रुतिस्मृतिओंका सम्यक् विचार नहींकरा वोतुमारेलिखे बृथामांसविषयके अविहितमांसविषयके श्लोकोंको देखकर समझेंगे कि—मांसखानेसें दोषहोताहै परंतु मांसभक्षणके विधायक वेदोंके संहिताभाग ब्राह्मणभाग उपनिषद्भाग सायणभाष्यआदिकोंके वाक्यनको और प्रमाणांक ३१ आदिकोंको देखेंगेतो अवश्यंकहेंगे कि विहितमांसखाने सें दोष नहींहोता ॥

मनुस्मृति आदिकोंके तुमारेलिखे बृथामांसविषयके श्लोकोंके उत्तररूप प्रमाणोंको और दोनोंप्रकारके वाक्यनकी व्यवस्थाको देखेंगेतो कहेंगे कि—यद्यपि अविहितमांसके बृथामांसकेखानेसें दोषकहाहै तथापि विधिसेंविहित मांसके खानेकरदोषनहींहोता प्रत्युतप्रमाणांक ८१ आदिकोंको देखकर कहेंगे कि—विहितमांसकेतो नहींखानेसेंअतिदोष शास्त्रोंमें कहाहुआहै, नास्तिकजीने बृथामांसविषयके श्लोकदिखलाकर धोखादियाथा परंतु परमेश्वरानुग्रह हुआ कि—उत्तरप्रमाणको देखकर नास्तिकजीके धोखेसें भलेबचे भले बचे ॥

पूर्वपक्षी०—और यदिकिसीइतिहासमें मांसकी चर्चा निकसभीआवेतो बहूनामनुग्रहोन्यायः जिसमेंबहुतयथार्थवक्ताओंकी सम्मतिहो वहीबातठीक होतीहै क्योंकि वहकर्म धर्मबुद्धिसेंनहींहुआ और नांही धर्मशास्त्रवत् इतिहास प्रभुशास्त्रहीहै इसयुक्तिसेंभी मांसखाना छोड़देनाचाहिये क्योंकि—मांसके निषेधमें बहुतसेंऋषि सहमतहैं ॥

आस्तिक०—हेमित्र—किसीइतिहासमें मतकहो किंतु व्यासबाल्मीकी प्रभृति महर्षिओंके रचितमहाभारतरामायणआदि सर्वइतिहासों में मांसका विधानहै ॥

और 'वहकर्म धर्मबुद्धिसें नहींहुआ'यिहतुमाराकथनभी असत्यहीहै क्यों असत्यहै तथाहि सुनिये—

१—जब चित्रकूटमें श्रीरामजीनें कुटी बनवाई तबशास्त्रविधिसें धर्म बुद्धिकर कृष्णमृगकेमांससें 'वास्तुकर्म' गृहप्रतिष्ठा करीथी देखो—

बाल्मीकीय रामायण प्र० १११—**ऐणेयंमांसमाहृत्यशालांयक्ष्यामहेवयम् । कर्तव्यंवास्तुशमनं सौमित्रे चिरजीविभिः ॥ काण्ड २ ॥ सर्ग ५६ ॥ २२॥**

अर्थ—हेलक्ष्मण कृष्णमृगके मांसकोलेकर हम कुटिका यजन करेंगे क्योंकि चिरंजीवीपुरुषोंने गृहके दोषकी शान्तिकरणी योग्यहै ॥

बा०रामायण प्र० ११२—**मृगंहत्वाऽऽनयक्षिप्रं लक्ष्मणेहशुभेक्षण । कर्तव्यःशास्त्रदृष्टोहि विधिर्धर्ममनुस्मर ॥ २३ ॥**

अर्थ— मृगकोमारकर यहांशीघ्रल्याओ जिससें शास्त्रमेंदेखा विधि करणे योग्यहै हेशुभदृष्टेलक्ष्मण धर्मको स्मरणकर ॥

बा० रामायण प्र० ११३—चकारचयथोक्तंहि तंरामः पुनरब्रवीत् । ऐणेयंश्रपयस्वैत च्छालांयक्ष्यामहेवयम् ॥२५॥

बा० रामायण प्र० ११४—त्वरसौम्यमुहूर्त्तोऽयंध्रुवश्च दिवसोह्ययम् ॥ सलक्ष्मणःकृष्णमृगं हत्वामेध्यं प्रतापवान् ॥२६॥

बा० रामायण प्र० ११५— अथाचिक्षेपसौमित्रिःसमिद्धेजातवेदसि ॥ तत्तुपक्वंसमाज्ञाय निष्टप्तंछिन्नशोणितम् ॥२७॥

बा० रामायण प्र० ११६—लक्ष्मणःपुरुषव्याघ्र मथराघवमब्रवीत् ॥ अयंसर्वःसमस्ताङ्गः श्रृतः कृष्णमृगोमया ॥२८॥

बा० रामायण प्र० ११७—देवतादेवसंकाश यजस्वकुशलोह्यसि ॥२९॥ वभूवचमनोह्लादो रामस्या-

मिततेजसः ॥ वैश्वदेवबलिंकृत्वा रौद्रंवैष्णव-
मेवच ॥३१॥

बा० रामायण अ० ११८—वास्तुसंशमनीयानि मङ्गला-
निप्रवर्तयन् ॥ जपंचन्यायतःकृत्वा स्नात्वानद्यां-
यथाविधि ॥ पापसंशमनंराम श्चकारबलिमुत्त-
मम् ॥३२॥

अर्थ—जैसे रामजीनें कहा वैसेही लक्ष्मणनें किया फिर रामजीनें कहा कि—इसकृष्णमृगके मांसको पकाओ हम गृहका यजन करेंगे ॥२५॥हेसौम्य लक्ष्मण शीघ्रकर यिह मुहूर्त व दिवस ध्रुवसंज्ञावालाहै फिर सो प्रतापी लक्ष्मण पवित्रकालेमृगको मारकर ॥२६॥ फिर रुधिरस्रवणसें रहितहुए उसमृगको लक्ष्मणजी प्रज्वलितअग्निमें फेंकतेभए पुनः अतिगर्म उसमांसको पकाहुआ जानकर ॥२७॥ लक्ष्मणजी पुरुषोंमें श्रेष्ठ रामजीको कहतेभए कि—यिह सब समस्तांग कृष्णमृग मैंने पकायाहै॥२८॥ हेदेवसदृशरामजी देवतों का यजनकरो, जिससें आप यजनमें कुशलहैं॥२९॥तब अपरिमित तेजवाले रामजीके मनमें हाद होताभया रामजी वैश्वदेवबलिको और रुद्रदेवके विष्णुदेवकेनिमित्त बलिकोकर्के ॥३१॥ गृहदोषकी शान्तिलिये मंगलपाठ आदि कर्तेभए विधिसें जपकर्के यथाविधि नदीमें स्नानकर्के रामजी पापोंके शमनका हेतु उत्तमबलिको कर्तेभए ॥३२॥

देखोहेमित्र—श्रीरामजीनें;शास्त्रविधिसें धर्मको स्मरणकर्के कृष्णमृगके मांससें गृहप्रतिष्ठा कीथी ॥

२—जब युधिष्ठिरको संबन्धीओंके विनाशजन्यपापोंसें भयहुआ तब उन पापोंके निवारणलिये व्यासजीके उपदेशसें युधिष्ठिरनें अश्वमेधयज्ञ कराथा उसयज्ञमेंदेखो ॥

महाभारत प्र० ११९—यूपेषुनियताचासीत्पशूनां-त्रिशतीतथा ॥ अश्वरत्नोत्तरायज्ञे कौन्तेयस्य-महात्मनः ॥ पर्व १४॥ अ० ८८॥३५॥

महाभारत प्र० १२०—श्रपयित्वापशूनन्यान् विधिवद्द्विजसत्तमाः॥ तंतुरङ्गंयथाशास्त्रमालभन्तद्वि-जातयः ॥ १४॥८९॥१॥

अर्थ—कुन्तीकेपुत्र महात्मायुधिष्ठिरके यज्ञमें ३००पशु और उत्तमअश्व यूपोंमें बांधेगए ॥३५॥ होरपशुओंकों पकाकर द्विजोंमेंश्रेष्ठब्राह्मण यथाशास्त्र विधिसें उस अश्वको मारतेभए ॥

हेमित्र–अब कहिये कि–व्यासजीके उपदेशसें, व्यासादि महर्षिओंके प्रत्यक्ष, श्रीकृष्णजीके विद्यमानहोते, हस्तिनापुर श्रीगंगाजीके तटपर, धर्मा-वतारयुधिष्ठिरके अश्वमेधयज्ञमें जो ३०१ पशुओंका बलिदान करागया तो यिहभी तेरीदृष्टिमें क्या धर्मबुद्धिसें कर्म नहींहुआ किंतु नास्तिकतासें छलकर तुमारा लेखही क्या धर्मबुद्धिसें हुआहै ॥

होर जो तुमने कहा कि-जिसमें बहुतयथार्थवक्ताओंकी सम्मतिहो वहीबात ठीकहोतीहै नांहि। धर्मशास्त्रवत् इतिहास प्रभुशास्त्रहीहै इसयुक्तिसे भी मांसका खाना छोड़देना चाहिए क्योंकि–मांसके निषेधमें बहुतसे ऋषि सहमतहैं ॥

सोयिह तुमारा कथनभी समीचीननहीं क्योंकि यद्यपि इतिहासोंमें कहीं कीटका, कहींपशुका, कहींपक्षीका, कहींअसुरका, कहींव्याधका, कहीं वैश्यका, कहीं राजाका, कहीं ऋषिका, कहींकिसीका, कथन चलपडताहै अतः स्मृतिओंकी न्याईं इतिहास समर्थ नहींहोसक्ता तथापि योगजधर्मयुक्त व्यास पराशर अत्रि याज्ञवल्क्य वसिष्टआदिक महर्षिओंके रचितस्मृतिग्रन्थों के तो तुम प्रमाणही नहीं लिखसके—

और जोतुमने एकमनुस्मृतिकेश्लोकलिखेहैंवो वृथामांसविषयकेहैं और मनुस्मृतिमेंभीजो मांसकीशुद्धिके मांसभक्षणके मांसभक्षणमें निर्दोषताके, और विहितमांसकेनहींखानेकर अतिदोषके प्रतिपादकश्लोकहैं उनमेंसेंएक श्लोकभीतुमनेनहींलिखा, और नांहीदोनोंप्रकारके श्लोकोंकी व्यवस्थाकी तो मनुजीकीसम्मतिकैसे प्रकटहोसक्तीहै अतः मनुजीकीसम्मतिभी तुमसेंप्रकट नहीं होसकी ॥

होर व्याससमृति वसिष्टस्मृतिआदिकोंका कोई वाक्य तुमने नहींलिखा और श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रग्रन्थनमेंसें कोईसूत्रभी तुमने नहींलिखा अतः मांसनिषेधमें बहुतसे ऋषि सहमतहैं,, यिह तुमारा कथन अत्यन्त असत्यहीहै ॥

हेमित्र—विहितमांसभक्षणके विधायक मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृति अत्रिस्मृति लिखितस्मृति वसिष्टस्मृति बृहत्पाराशरीय श्रौतसूत्र गृह्यसूत्रआदि कोंके अनेक अनेक वाक्यनसें महर्षिओंकी सम्मतिएं दिखाचुकाहूं और दिखावुंगा इस्सेंविहित मांसके खानेमें सर्वमहर्षि सहमतहैं इसीसें प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहित मांसके नहींखानेसें अतिदोष मनुव्यासवसिष्टादिक महर्षिओं ने कहेहैं अतः आस्तिकगृहस्थजनोंने विहितमांसको अवश्यंखानाचाहिये ॥

पूर्वपक्षी०—जबके इसतरह सबमहात्माओंने मांसखानेकी निन्दाकीहै तो फिरभीजो मांससें नहींहटते और उपकारकरनेवाली गौमाताके प्राण नहींबचाते उनसेंबढ़कर कृतघ्न दूसरा कौनहोसक्ताहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र—मनुव्यासवसिष्ठादिक महार्षिमहात्माओंने तो विहित मांस के नहींखानेंसे नरकादिकोंकी प्राप्तिकहीहै अतः उनमहार्षिमहात्माओंनेंतो विहितमांसके त्यागकी निन्दाकीहै और अविहितमांसके खानेकीनिन्दाकीहै व वेदानुसारी विहितमांसके भक्षणकाविधानकराहै ऐसेमहर्षिओंकेवाक्यनको देखकरभी जो विपरीतअर्थको कर्तेहैं लिखतेहैं उनसेंबढ़कर नास्तिक दूसरा कौन होसक्ताहै ॥

हेभ्रातः—मनुव्यासवसिष्ठ आश्वलायन कात्यायनप्रभृति योगारूढ़ महार्षिजन क्या तेरीदृष्टिमें महात्मानहींथे किंतु एकतुम और एकदो तुमारे श्रद्धेय बस इसजगत्में इतनेही चार महात्माहैं ॥

और गौओंकोयथाशक्ति रखनाचाहिये उनकी सेवा कीचाहिये क्योंकि जब गोपालोंके गृहमें कृष्णजीरहे तबकृष्णजीभी गौओंको चरातेरहेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—हां तुमनेआप तो शास्त्रकागन्धतक नहींलिया केवल सुनी सुनाईबातोंपरही विश्वास रखलियाकर्तेहो ॥

आस्तिक०—हां तुमने ठीकशास्त्रपढ़ेहैं जिससेंस्मृतिओंके पाठबदलदिये और केईजगें धर्माधर्मकेनिर्णयमें धोखेदिये ऐसेशास्त्रवेत्तासें अनपढ़ ही अच्छेहैं ॥

पूर्वपक्षी०—येदमेंआज्ञानहींहै बल्कि एकप्रकारसें निषेधकराहै ।

आस्तिक०-वेदोंके संहिताभागोंमें ब्राह्मणभागोंमें उपनिषद्भागोंमें मांसभक्षणकी अनेकजगें आज्ञा कीहुईहै परंतु तुम कहतेहो कि—"एकप्रकारसेंनिषेधकियाहै"

वोजो एकप्रकार तुमकहोगे तो उसकाविचार कराजावेगा परंतु तुमारीएक प्रकारकी कल्पनाहीअसत्यहै क्योंअसत्यहै तथाहीकहताहूं सुनिये !!

मैंआपसें पूछताहूं कि—ईश्वर तो सर्वदासत्यसंकल्पहीहोताहै उससत्य संकल्पईश्वरने वेदमें मांसकानिषेधएकप्रकारसें क्योंकरा अर्थात् "किसीभीमनुष्य ने किसीभीपशुका वा पक्षीआदिकामांस नहींखाना" ऐसामांसखानेका स्पष्ट निषेधही क्योंनहींकरदिया ॥

ऐसेमांसके स्पष्टनिषेधकरणेसें ईश्वरको किसीका भयथा, वा ईश्वर सत्यसंल्प नहींथा, वा आस्तिकजनभी ईश्वरकेवाक्यको नहींमानतेथे, अथवा मांसभक्षणकी प्रवृत्तिकोमनुष्य झटितिनहींरोकसक्तेथे इस्सेंपरमेश्वरने मांसका स्पष्टनिषेध नहींकरा किंतुएकप्रकारसें निषेधकराहै ॥

इनमें प्रथमपक्ष तो समीचीननहीं क्योंकि— सर्वाधिकश-क्तिमान्होनेसें ईश्वरको किसीका भय नहींहै और द्वितीयपक्षभी असंभवहीहै क्योंकि सर्वजीवोंको सर्वकर्मोंके फलप्रदाताको व सर्वजगत्केउत्पादकको ईश्वरकहतेहैं, सर्वजीवोंको सर्वकर्मोके विचि-त्रफलोंको असत्यसंकल्पजीव नहींदेसक्ता, तथाआकाशवायु अग्निजल भूमिनानाविधवन पर्वतसमुद्रसूर्यचन्द्रादिक विचित्रजगत्कोभी असत्यसंकल्प जीव नहींरचसक्ता इससेंजो सत्यसंकल्प नहींहै वोईश्वर नहींकहलायसक्ता ईश्वर तो सदासत्यसंकल्पहीहोताहै ॥

तृतीयपक्षभी असाधुहीहै क्योंकि—ईश्वरवाक्यको जोपुरुष नहींमानते वोपुरुष आस्तिक नहींकहलासक्ते किंतु जोईश्वरवाक्यनको सत्कारसेंमानतेहैं श्रद्धासे विचारतेहैं उनकेअनुकूलवर्ततेहैं वोही आस्तिक कहलायसक्तेहैं ॥

चतुर्थपक्ष कहोतो वोभी असत्यहीहै क्योंकि—यदि परमेश्वरको जगत्में विहितमांसखानेकी प्रवृत्ति वाञ्छित नहोती किंतु मांसकात्याग वाञ्छित होता तो जबपरमेश्वरने प्रथमब्रह्माको रचकर वेदप्रकटकरेथे तबआदिसेंही

मांसखानेका (कोई मनुष्य किसीपशुपक्षीआदिका मांसनहींखाए) ऐसा स्पष्ट निषेधही कराहोतातो तबआदिसेंही मांसखाने की प्रवृत्तिहोहीनसक्ती ॥

दृष्टान्त—जैसे जबसें जैनमतचलाहै तबसेंही जैनीओंकेआदिगुरु जिन देवजीनेमांसखानेका स्पष्ट निषेधहीकराहै तबसें पहिलेसेंही जैनमतमें जैनीओं में मांसखानेकी प्रवृत्ति होहीनहीं क्योंकि जिनदेवजीको मांसखानकीप्रवृत्ति वाञ्छित नहींथी अतः आदिसेंही स्पष्ट निषेधकर दियाथा ॥

ऐवं यदि परमेश्वरनेभी वेदोंमें मांसखानेका स्पष्टनिषेधही केवलकरा होतातो मांसखानेकी आदिसें प्रवृत्तिही नहोती परंतु जिनदेवजीकीन्यांई परमेश्वरनें वेदोंमें स्पष्टनिषेधतो कियानहीं प्रत्युतअनेकवाक्यनसें पशुबलि प्रदानकी और मांसभक्षणकी आज्ञाकीहै इस्सेंनिश्चयहोताहै कि—सर्वशक्तिमानूसर्वज्ञ परमेश्वरको आस्तिकोंमें मांसखानेकी प्रवृत्तिवाञ्छितहै इस्सें एक प्रकारसें निषेधकियाहै,, ऐसीयिह तुमारी कल्पना असत्यहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—हम तुमको दृष्टान्तवचनही दिखाकर समझातेहैं '**पञ्चपञ्चनखा भक्ष्याः**,, यहएकवचन शास्त्रमें लिखाहै इसका ऊपरसेंतो यहअर्थप्रतीत होताहै कि—पांच पांचनखोंवाले खाने चाहिये परंतु यहां पर परिसंख्याविधिहै जबअपनीइच्छासें प्रत्येकजीवके मांसकोखानेकेवास्ते मनुष्यप्रवृत्तहोताहै तबयहवचनप्रवृत्तहोताहै इसकाभावलक्षणाद्वारा यहहै कि अपंचनखवालोंको न खानाचाहिये इसकाकेवलइसीअंशमें तात्पर्य्यहै और में नहींहोसक्ता क्योंकि—मांसतो वहस्वयंहीखायाकरताहै तोफिर उसके वास्ते उसकोवेदने शिक्षाही क्यादेनीथी जैसेकोईअपनेआप मट्टीके खानेवाले अपनेपुत्रसेंकहे कि—पुत्रतूंगंगाजीकी मट्टीखायाकरतो इसवाक्यसें पिताका पुत्रको मट्टीखिलानेमें तात्पर्य्यसर्वथा नहींहै किंतु गंगाजीकीमट्टीसें दूसरी

मट्टीकेखानेसें रोकनेकाहीकेवल प्रयोजनहै ऐसेही "पञ्चपञ्चनखाभक्ष्या" इस वाक्यमेंभी जानो यहव्यवस्था पूर्वमीमांसामें कीगईहै ॥

आस्तिक०—तुमनेकहा कि—'यहएकवचन शास्त्रमेंलिखाहै' हेमित्र पशुबलिप्रदान और विहितमांसभक्षणविषयकेतो शास्त्रोंमें हजारोंवचनहैं उनमेंथोड़ेसें मैनेलिखेभीहैं होरकेईलिखूंभीगा उनसबवचनोंको छिपा कर तुमएकवचन क्यों कहतेहो ॥

और तुमनेकहा कि—जबअपनीइच्छासें प्रत्येकजीवके मांसखानेवास्ते मनुष्य प्रवृत्तहोताहै तबयिहवचनप्रवृत्तहोताहै" यिहतुम्हाराकथनभी असत्य हीहै क्योंकि—कोईभीआस्तिकमनुष्य प्रत्येकजीवके मांसखानेलिये प्रवृत्त नहींहोता किंतु जिनभेडबकरातित्तिरआदिकोंके मांसको परम्परासें मनुष्यखातेआएहैं उनहीकेमांसको खानेलिये मनुष्यप्रवृत्तहोतेहैं ॥

होरजो तुमनेकहा कि—"पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः" यहांपर परिसंख्या विधिहै वोयिहतुम्हाराकथनभी अयुक्तहीहै तथाहि सुनिये—

१—महाभाष्यके प्रथमाह्निकमें भगवत्पतञ्जलिजीनेभी यहां नियम विधि मानाहै देखो—

महाभाष्य प्र० १२१—भक्ष्यनियमेनाभक्ष्यप्रतिषेधोगम्यते पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याइत्युक्ते गम्यते एतदतोन्येऽभक्ष्याइति ॥

अर्थ—भक्ष्यके नियमविधिसें अभक्ष्यका प्रतिषेध जानाजाताहै जैसे पांचनखवाले पांचभक्ष्यहैं ऐसेकथनकिये यिह जानाजाताहै कि—पांचनख वाले इनपांचोंते अन्यपांचनखवाले अभक्ष्यहैं इति ॥

२—नियमविधि और परिसंख्याविधिके लक्षणोंके विचारसेंभी यहां नियमविधिही संभवेहै तथाहीं कहताहुं सुनिये—

नियमविधिका लक्षण—**पक्षप्राप्तांशपूरको विधिर्नियमविधिः ॥** अर्थ—एकपक्षमें प्राप्तअर्थके अप्राप्तअंशको पूरण करणेवाले विधिको नियमविधि कहतेहैं।

दृष्टान्त—**जिज्ञासुर्मोक्षशास्त्रश्रवणंकुर्यादिति नियमविधिः ॥** जिज्ञासुपुरुष मोक्षशास्त्रका श्रवणकरे ऐसा यहनियम विधिहै क्योंकि-जिज्ञासुको परमात्माके ज्ञानलिये शास्त्रका श्रवणअपेक्षितहै वो एक मोक्षशास्त्रहै और एक अन्यशास्त्रहै अतः एकपक्षमें मोक्षशास्त्रका श्रवण प्राप्तहै एकपक्षमें अन्यशास्त्रका श्रवण प्राप्तहै, जिसपक्षमें अन्यशास्त्र का श्रवणप्राप्तहै उसपक्षमें मोक्षशास्त्रका श्रवण अप्राप्तहै इससें एकपक्षमेंप्राप्त मोक्षशास्त्रके श्रवणके अप्राप्तअंशको पूरणकरणेवाला यिहविधिहै अतः यिह नियमविधिहै ॥

ऐसेही—"**पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः ॥**" यिहनियमविधिहै क्योंकि-एकपक्षमें 'सेह गोह गैंडा कूर्म शश, इनपांचपंचनखवालों का भक्षणप्राप्तहै, एकपक्षमें बिडाल वानरप्रभृति अन्यपंचनखवालोंका भक्षण प्राप्तहै, जिसपक्षमें अन्यपांचनखवालोंका भक्षणप्राप्तहै उसपक्षमें इनपांचपंच नखवालोंका भक्षण अप्राप्तहै, अतः एकपक्षमेंप्राप्त पांचपंचनखवालों के भक्षणके अप्राप्तअंशका पूरणकरणेवाला यिहविधिहै अतः यिह नियमविधिहै

परिसंख्याविधिका लक्षण—**उभयप्राप्तावितरव्यावृत्तिबोधकोविधिः परिसंख्याविधिः ॥** दोअर्थोंकी प्राप्ति

हुए उनमें एकइतरअर्थकी व्यावृत्तिका बोधक जो विधि वो परिसंख्याविधि कहाजाताहै ।

दृष्टान्त—जिज्ञासुर्मोक्षशास्त्रश्रवणाद्व्यतिरिक्त शास्त्रश्रवणं न कुर्य्यादिति परिसंख्या विधिः॥

अर्थ—जिज्ञासुजन मोक्षशास्त्रके श्रवणसें भिन्नशास्त्रका श्रवण न करे, यिह परिसंख्याविधिहै क्योंकि–यिहविधि जिज्ञासुको इतरशास्त्रके श्रवणकी व्यावृत्तिका बोधकहै अतः परिसंख्याविधिहै ।

तात्पर्य्य यिहहै कि–जोवाक्य एकअर्थका विधान करे और अर्थसें इतरअर्थका निवारण करे वो नियमविधि कहियेहै ।

और जो दोअर्थोंमें एकइतरअर्थका साक्षात् निवारण करे वो परिसंख्या विधि कहाजाताहै "पञ्च पञ्चनखाभक्ष्याः ॥"

यिह वाक्य किसीका साक्षात्‌निवारण नहींकर्ता इस्से यिह परिसंख्या-विधि नहींहै किंतु यिह वाक्य सेह गोह गैंडा कूर्मशश, इन पांच पंचनखवालोंके भक्षणका विधानकरे है अर्थसें इनपांचोंते इतर वानरआदि-पंचनखवालोंके भक्षणका निवारण करेहै अतः यिहनियमविधिहीहै ॥

इसप्रकार विधिओंके लक्षणके विचारसेंभी और महाभाष्यके परमप्रमाणसेंभी यिह नियमविधिहै अतः हेमित्र परिसंख्याविधिका कथन तुम्हारा अयुक्तहीहै ॥

हेपाठको — आश्चर्य्यहै कि — वेदसूत्रस्मृतिआदिक ग्रन्थनमें पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधिवाक्य हजारोंहीहैं उनसबको छोड़कर नवीनपंडितजन ,,पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः,, इस एकविधिवा-

क्यमेंही विवादलिए बद्धकटि होजातेहैं होर हजारोंविधिवाक्यनका निर्णय नहीं कर्ते कि —यिह कौनविधिहै यिह कौनविधिहै ॥

हेपाठक—अपूर्वविधि, नियमविधि, परिसंख्याविधि, ऐसे तीनप्रकारके विधिवाक्यहोतेहैं उनमें नियमविधिका परिसंख्याविधिका लक्षण दिखाचुकाहुं अब देखो—अपूर्वविधिका लक्षण—**प्रमाणान्तरेणाप्राप्तार्थविधायकोऽपूर्वविधिः ॥** प्रमाणांतरसे अप्राप्तअर्थका विधायक वाक्य अपूर्वविधिकहिएहै जैसे दृष्टान्त कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीयसंहिता प्र० १२२—**यः प्रजाकामः पशुकामःस्यात् सएतं प्राजापत्यमजं तूपरमालभेत ॥** का० २ ॥ प्र० १ ॥ अनु० १ । ५ ॥

अर्थ—जोपुरुष सन्तानकी कामनावालाहो वा गौअश्वप्रभृतिपशुओंकी कामनावालाहो वो पुरुष इस प्रजापतिदेवतानिमित्तक शृंगरहितअजको मारे, इत्यादिक अपूर्वविधिवाक्यहैं क्योंकि सन्तानकी और गौअश्वआदिपशुओंकी प्राप्तिलिए प्रजापतिब्रह्मादेवतानिमित्तक शृंगरहितअजका बलिप्रदान प्रमाणांतरसें अप्राप्तहै ॥

परिसंख्याविधिका दृष्टान्त बृहत्पाराशरीय धर्मशास्त्र प्र० १२३—**नाद्यादविधिनामांसं मृत्युकालेपिधर्मवित्** ॥ अ० ४ ॥ ३१८ ॥ अर्थ—धर्मवेतापुरुष मृत्युसमयमेंभी अविधिसें मांसको नखाए इत्यादिक परिसंख्याविधिहैं ॥ उक्तलक्षणोंद्वारा होर वाक्यनमेंभी यथासंभव विधि जानलेना ॥

और जो तुमने कहा कि—[इसका भाव लक्षणाद्वारा यहहै कि

अपंचनखवालोंको नखानाचाहिए इसका केवल इसीअंशमें तात्पर्य्यहै औरमें नहींहोसक्ता] सोयिह तुम्हारा कथनभी असंभवहीहै तथाही कहताहूं सुनिये १—वाक्यार्थानुपपत्ति र्लक्षणाबीजम् ॥ वाक्यार्थका नहींबनना लक्षणाका हेतुहै अर्थयिह जहां वाक्यार्थ नहीं बनसके वहां लक्षणाकी कल्पना की जातीहै यिह नियमहै जैसे—'गङ्गायां घोषः, गंगामेंघोषहै यहां जलोंके विस्तृतप्रवाहरूप गंगामें घोषसंभवेनहीं अतः वाक्यार्थके नहीं बननेसे गंगापदकी गंगातटमें लक्षणा की जाती है, आहीरों के क्षुद्रग्रामका नाम घोषहै ॥

जहां वाक्यार्थका असंभवरूपलक्षणाका बीजही न हो वहां लक्षणाकी कल्पना करणी अयुक्तहीहै हेमित्र—'पञ्चपञ्चनखा भक्ष्याः' यहांभी वाक्यार्थकी अनुपपत्तिरूप लक्षणाका बीज हैहीनहीं तो तुम निर्बीजलक्षणाकी कल्पना कैसे करसक्तेहो ॥

२—महाभाष्यप्रदीपोद्योतमें नागोजीभट्टनेभी इसवाक्यके पदोंमें लक्षणाका प्रबलहेतुओंसें खंडन कराहै वो विस्तारभयसें यहां नहीं लिखा जिसको जिज्ञासाहो वो वहांसे देखले ॥

३—यदि आपकहैंकि—तात्पर्य्यानुपपत्तिर्लक्षणा बीजम् तात्पर्य्यका नहींबननाभी लक्षणाका बीजहै वोतात्पर्य तो अपंचनखवालोंके न खानेमेंहै, सोयिह तुमारा कथनभी असत्यहीहै क्योंकि—मनुस्मृतिआदिक धर्मपुस्तकोंमें यिह नहीं लिखाकि—सर्वजीवोंमें पंचनखवाले पंचभक्ष्यहैं किंतु मनुस्मृति आदिकोंमें पंचनखवालोंमें पांच भक्ष्यकहकर अपंचनखवालेजीवभी भक्ष्यकहेहैं देखिए—मनुस्मृति अ० १२४—श्वाविधंशल्यकंगोधां खड्गकूर्मशशांस्तथा ॥ भक्ष्यान्पञ्चनखेष्वाहु रनुष्ट्रांश्चैकतोदतः अ० ५.॥ १८ ॥

इसपर मेधातिथिका मनुभाष्य प्र० १२५—**पञ्चनखानांमध्याञ्छ्वावित्कादयोभक्ष्याः ॥**

इसपर कुल्लूकभट्टकी टीका—प्र० १२६—**पञ्चनखेषुभक्ष्यान्मन्वादयः प्राहुः॥**

इसपर राघवानन्दकी टीका—प्र० १२७—**पञ्चनखानांमध्ये पञ्चानामेव हव्यकव्यार्थत्वम् ॥**

इसपर गोबिन्दराजकी टीका प्र० १२८ **पञ्चनखेषुमध्याद्भक्षणार्हान्मन्वादयआहुः ।**

इनटीकाओंसहित मनुश्लोकका अर्थ—लंबेकाटोंवाला सेह, गोह गेंडा कूर्म शश, पांचनखवालोंमें इन पांचको मनुआदिक भक्ष्यकहतेहैं और उष्ट्र सेंविना एकओरदन्तवाले भेडबकरा हरिणआदिकोंकोभी भक्ष्यकहतेहैं ॥

और देखो प्रमाणांक ४६ में मनुजीनें पांचप्रकारके मत्स्यभी भक्ष्यकहेहैं अतः (अपंचनखवालोंको न खानाचाहिये केवलइसीअंशमें तात्पर्य्यहै औरमें नहींहोसक्ता) ऐसीतुम्हारी कल्पनाअसत्यहीहै, इसका होरकुछभी फलनहीं किंतु तुम्हारी नास्तिकताकी व दुराग्रहकी अभिव्यक्ति और मिथ्याभाषणका दोष, ये तुम्हारीअसत्यकल्पनाके फलहैं क्योंकि वेदसूत्र स्मृतिग्रन्थनमें अपंचनखवाले अजशशहरिणतित्तिर बटेराऽऽदिकभी भक्ष्य कहेहैं

होरजो तुमनेकहा कि- (मांसतो स्वयंहीखायाकर्ताहै तो फिर उसके वास्ते उसकोवेदने शिक्षाही क्या देनीथी) सोयिह तुम्हाराकथनभी अयुक्त हीहै तथाहि कहताहुं सुनिये, फिर देखो प्रमाणांक ५७ में भाष्यकारोंके

प्रमाणसें लिखचुकाहुं कि--धर्मअधर्मके विज्ञानका कारण शास्त्रहीहै अतः आस्तिकधर्मात्मापुरुषतो श्रुतिस्मृतिओंसें विहितभोजनको व विहितआचार को कर्तेहं ॥

हेभ्रातः-भक्ष्यअभक्ष्यके अर्थात् अजशशहरिणादिकोंके भक्ष्यमांसके खानेलिये और ऊंठवानरश्वानआदिकोंके अभक्ष्यमांसके त्यागलिये यदि सृष्टिके आदिकालमें वेदस्मृतिआं शिक्षा नहींकरेंतो तब भक्ष्याभक्ष्यकी शिक्षाका होरकिसको अधिकार होसक्ताथा किंतु तब आदिकालमें युक्त योगीईश्वरको और युञ्जानयोगीमहर्षिओंकोही श्रुतिस्मृतिद्वारा कृपाकर भक्ष्याभक्ष्यकी शिक्षाका अधिकारथा, अतः उनोंने-शिक्षा करणी चाहिये हीथी ॥

होरजो तुमने कहा कि- (जैसे कोई अपनेआप मट्टी खानेवाले पुत्रसें कहे कि--पुत्रतूं गंगाजीकी मट्टीखायाकर तो इसवाक्यसें पिताका पुत्रको मट्टीखिलानेमें सर्वथा तात्पर्य्य नहींहै किंतु गंगाजीकीमट्टीसें दूसरी मट्टीके खानेसें रोकनेकाही केवलप्रयोजनहोताहै ऐसेही पञ्चपञ्चनखाभक्ष्याः, इस वचनमेंभीजानो यहव्यवस्था पूर्वमीमांसामें कीगईहै) सोयिह तुम्हाराकथन भी असत्यहीहै तथाहि कहताहुं सुनिये ॥

१-तुम्हारा यिहदृष्टान्त काल्पनिकहै वास्तवनहीं क्योंकि-प्रायः अतिमूढ़ बालकही मट्टीखायाकर्ताहै ऐसे बालकको कोईभी नहीं कहता कि-पुत्रतूं गंगाजीकी मट्टीखायाकर यदि कोई ऐसे कहेभीतो वो अतिमूढ़बालक क्या जानताहै कि-कहां गंगाहै कहांगंगाकीमट्टीहै और क्या इसवचनका तात्पर्य्यहै यिहभी वो अतिमूढ़बालक नहीं जानसक्ता ॥

व उक्तवचनमें वो मूढ़बालक मट्टीखानेसें रोकभी नहींसकीता इसीसें प्रसिद्धहीहै कि-मट्टीखानेवाले बालकोंको मातापिताआदि ऐसेभयंकरवचन

ही कहतेहैं कि–जे तूं मट्टीखाएगातो तेरा मुख तोड़ दूंगी तेरा हाथ तोड़ दूंगी तेरे मुखपर थपड़मारूंगा, और यदि कोई थोड़ा बड़ा बालक भी मट्टी खाय तो उसकोभी यिहनहीं कहाजाता कि–हेपुत्र तूं गंगाजीकी मट्टीखायाकर किंतु उसकोभी ऐसेहीकहाजाताहै कि–तूं मट्टी खानेसे बीमारहोजावेगा, यदि तूं मट्टीखाने से नहीं हटेगातो तेरेउस्तादको कहेंगे, तेरेको मारमारकर सूधाकरदेंगे ॥

२–देखो प्रमाणांक १०३ मनुस्मृतिमें पञ्चनखवालोंमें पांचभक्ष्य कहकर उनोंसेभिन्न एक और दन्तवाले भेडबकराऽऽदिकभी भक्ष्यकहेहैं तोफिर तुम्हारे काल्पनिकदृष्टान्तमात्रसे कुछ सिद्धनहीं होसक्ता ॥

और जो तुमनेकहा कि यह व्यवस्था पूर्वमीमांसामें कीगईहै, सोयिह तुम्हाराकथनभी समीचीननहीं क्योंकि—सूत्रोंमें ऐसीव्यवस्था नहींकीगई भाष्यमें कीगईहैतो वो वेदसूत्रस्मृतिआदिग्रन्थनसे विरुद्धहै अतः वो माननीयनहीं होसक्ती ।

हेमित्र वेदसूत्रस्मृतिआदिपुस्तकों में अपञ्चनखवाले भेडबकरादुम्बा हरिणमेढाऽऽदिकभी भक्ष्यकहेहुएहैंतो वेदादिकोंसे विरुद्ध कोईभी भाष्यकार वा टीकाकार लिखडालेतो वो माननीयनहीं होसक्ता ॥

पूर्वपक्षी० यज्ञकी हिंसाकाभी सिवाय इकेही सिर्फ मांसभक्षणके छुड़ानेमें ही भावहै क्योंकि जिसकोमांसखानेकी इच्छाहो वा स्वर्गकी इच्छाहो वह लक्षोंका खर्चकरेंगे इसलिये पशुमारनेमें प्रवृत्तहोसक्ताहै अन्यथानहीं ॥

आस्तिक० हेमित्र तुमतुमारेकथनसेभी पशुमारनायज्ञका स्वर्गप्राप्ति फल सिद्धहुआ और यज्ञमें पशुहिंसा विहितसिद्धहुई ॥

यज्ञमेंप्रायः वेदवेताब्राह्मण और महातपयोगयुक्त व धर्मात्माराजमहाराजे एकत्रहोतेहैं ऐसेश्रेष्ठकर्मयज्ञमें उक्तमहाश्रेष्ठपुरुषोंके विद्यमानहोते पशुहिंसा व मांसभक्षण सत्कारसे कराजाताहै तो पशुहिंसाको व विहितमांसभक्षणको

अशुभकर्म नास्तिकजन वा मूर्खजन कहसक्ते हैं अर्थात् आस्तिकबुद्धिमान् जनोंमें वो शुभकर्महीसिद्धहुए ॥

होरजो तुमनेकहा कि-"लक्षोंका खर्चकर्केही यज्ञकेलिये पशुमारनेमें प्रवृत्तहोसक्ताहै अन्यथानहीं" सोयिहतुम्हाराकथनभी असत्यहीहै क्योंकि आठआनेके वा दसआनेके खर्चकर नित्यपञ्चमहायज्ञ होसक्तेहैं उनसें क्या स्वर्गनहीं मिलसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०—उनसेंस्वर्ग वा चित्तशुद्धिआदिफल तो मिलसक्ताहै परंतु नित्यपञ्चमहायज्ञनमें मांसकाभी क्या विधानहै ॥

आस्तिक०—हेमित्र-यद्यपि वेदादिक सर्वधर्मपुस्तक तो तुमने नहींपढे तथापि केईकधर्मग्रन्थ तो तुमने देखेभीहैं परंतु बहुतकालके वेदविरुद्धजैनमतके संस्कारोंसें दुराग्रहके वशीभूतहुए तुम आर्षमतसें विरुद्ध कहरहेहो, देखो व्यासजीके पिता महर्षिपराशरजीने व्यासादिक महर्षिओंप्रति नित्यपंचमहायज्ञनमें पितरोंकी देवतोंकी अतिथिमनुष्योंकी मांसादिकोंसें तृप्तिकरणी प्रमाणांक ७५ में स्पष्टकहीहै ॥

और प्रमाणांक १०२ में नित्यकरणीय पितरोंकी देवतोंकी अतिथिकी सेवानिमित्त पशुहिंसा का वसिष्टजीने विधानकराहै ॥

हेपाठको—इनमहर्षिवाक्यनके मूलरूप संहिताभागके ब्राह्मणभागके वाक्यभी दिखलावुंगा ॥

—):०:(—

पूर्वपक्षी०—कलियुगमें कृपालुमहर्षिओंनें लोगोंको इन्द्रियोंका दास समझकर हिंसायुक्तअश्वमेधादि यज्ञनका करनारोकादियाहै ॥

आस्तिक०—इसतुम्हारेकथनसेंही यिहसिद्धहुआकि-सत्ययुग त्रेताप्रभृति उत्तमसमयोंमें जितेन्द्रियश्रेष्ठपुरुषोंको हिंसायुक्तअश्वमेधादिकयज्ञ करणे-

योग्यथे व उन श्रेष्ठसमयोंमें सो पशुहिंसायुक्तअश्वमेधादिकयज्ञ होतेरहेहैं, यिहतुमारेलेखसेंही सिद्धहुआ तो—

अबविचारियेकि—ऐसेउत्तमसमयोंमें वसिष्टादिकमहर्षि जिनयज्ञोंके कराणेवालेथे और सत्ययुगआदिकोंके धर्मात्मामहाराजे जिनयज्ञोंके यजमानथे,ऐसेहिंसायुक्त अश्वमेधादिक यज्ञ क्या श्रेष्ठकर्म नहींसमझेजासक्ते ।

अर्थात् तुम्हारेकथनसेंही वो अतिश्रेष्ठकर्मसिद्धहैं और जो कलियुगमें अश्वमेधयज्ञके करणेका केईऋषिओंनें निषेधकियाहै वो कलियुगके पुरुषोंकी असमर्थतासेंकियाहै क्योंकि—अश्वमेधयज्ञ कलियुगके पुरुषोंसें असाध्यहै ॥

होमित्र—अजमेधआदिकोंका तो कलियुगमेंभी किसीऋषिनेंभी निषेध नहींकरा किंतु कलियुगमें अश्वमेध गोमेध इनदोयज्ञोंकाही निषेध करा है तो कलियुगके गरीबोंको अजमेधआदिकोंसे भी क्यों रोकतेहो ।

—:(०):—

पूर्वपक्षी०—स्वर्गादिसाधनरूपयज्ञ तो काम्यकर्महैं इसलिये निरतिशय सुखस्वरूप मुक्तिकी इच्छावाला मुमुक्षु ऐसेकर्मकरणेकी इच्छातक नहीं कर्ता ॥

आस्तिक—हेमित्र तुम्हारेकथन हास्ययोग्यहीहैं तथाही कहताहूं सुनिये—

१—जिनअश्वमेधादिकयज्ञोंका प्रसंग चलाहुआहै वो क्या काम्यकर्महीहैं अर्थात् वोअश्वमेधादिकयज्ञ क्या स्वर्गादिकोंकी कामनासेंविना चित्तशुद्धिलिये करणेयोग्य नहींहैं क्या ऐसा किसी धर्मशास्त्रमें नियमकराहुआहै ऐसानियम किसी शास्त्रमें नहीं करा किन्तु तुम्हारे दुराग्रहका यिह नियमहै

हेभ्रातः—व्यासादिकमहर्षिओंने पापोंकी निवृत्तिरूप चित्तशुद्धिलिये भी अश्वमेधयज्ञका विधानकराहै ॥

महाभारत १२६—**अश्वमेधोहिराजेन्द्र पावनःसर्व**

पाप्मनाम् । तेनेष्टात्वंविपाप्मावै भवितानात्र-संशयः ॥ प० १४ ॥ अ० ७१ ॥ १६ ॥

अर्थ-हेराजेन्द्र युधिष्ठिर जिससें सर्वपापोंका निवर्त्तकअश्वमेधहै इस्सें उसअश्वमेधयज्ञकर्के तूं पापोंसेंरहितहोवेंगा इसमें संशय नहींहै ॥

२-जोतुमने कहा कि-"मुक्तिकी इच्छावाला मुमुक्षु ऐसेकर्मकरनेकी इच्छातक नहींकर्ता" सोयिह तुमाराकथनभी असत्यहीहै क्योंकि-अश्वमेध-आदियज्ञों के कर्ता धर्मावतारयुधिष्ठिरआदिक असंख्यमहाराजोंमें क्या कोईभी मुमुक्षु नहींहुआ, ऐसे कौनआस्तिकपुरुष कहसक्ताहै ॥

३-मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामजीनें अपनेराज्यसमयमें दशअश्वमेधयज्ञ करेथे देखो-

वा० रामायण प्र० १३०-**राज्यंदशसहस्राणिप्राप्य-वर्षाणिराघवः । दशाश्वमेधानाजह्रे सदश्वान् भूरिदक्षिणान्** ॥ का० ५ ॥ स० १३० ॥ ९५ ॥

अर्थ--दशहजारवर्षराज्यको प्राप्तहोकर श्रीरामजी बड़ीदक्षिणावाले उत्तमअश्वोंवाले दशअश्वमेधयज्ञोंको कर्तेभए ॥

हेमित्र-अबकहोतो-श्रीरामजीभी क्या स्वर्गकीही इच्छावालेथे वो मुक्तिकी इच्छावाले नहींथे ॥

पूर्वपक्षी०-जबकि-ज्ञानधर्मोपदेशद्वारा जीवोंकीमुक्तिकरणाही परमात्मा का सृष्टिमेंमुख्यउद्देश्य योगमें मानाहुआहै तोफिर अशुद्धि क्षय और अति-शययुक्तसाधनोंके उपदेशमें कृपालुपरमात्माका मुख्यतात्पर्य्य कहां होसक्ता है ॥

आस्तिक०–१–वो योगशास्त्रका सूत्र तुमने क्योंनहीं लिखदिया कि जिसमें ऐसे मानाहुआहै ॥

२–यदि जीवोंकी मुक्तिकरनाही परमेश्वरका मुख्यउद्देश्यहै तो सर्वजीव मुक्त क्यों नहींहोजाते क्योंकि- परमेश्वरतो सत्यसंकल्पहै अतः परमेश्वरका उद्देश तो तत्क्षणही सिद्ध होनाचाहिये ॥

३–वेदमें जो अश्वमेधप्रभृतियज्ञोंका उपदेशहै वो क्या धर्मोपदेश नहींहै यदि वो धर्मोपदेश न होता तो धर्मावतार युधिष्ठिरके पापोंके निवारणलिये अश्वमेधयज्ञके करणेका भगवद्व्यासजी उपदेशही कैसे कर सक्तेथे ॥

हेमित्र–वेदमें अश्वमेधयज्ञका विधान यदि धर्मोपदेश न होतातो मर्यादाऽवतार श्रीरामजी दशअश्वमेधयज्ञन को कैसे कर सक्ते ॥

४ अश्वमेधप्रभृतियज्ञनमें नास्तिकोंसेंविना अशुद्धिदोष कौन कह सक्ताहै क्योंकि—अशुद्धिके दूरकरणेवालेको पावन कहतेहैं, देखो प्रमाणांक १२६ में व्यासजीने अश्वमेधयज्ञको पावन कहाहै ॥

देखो प्रमाणांक ५५ आदिकोंको वेदान्तसूत्र और उसके श्रीभाष्य शंकरभाष्यआदिकोंमेंभी अशुद्धिदोषका सम्यक खंडनकराहै ॥

जपध्यान वा अश्वमेधादियज्ञ जोजो साधनहैं वोवो यदि स्वर्गादिकों की कामनासें करेजावेंतो क्षयादिफलवालेहैं, सो यदि स्वर्गादिकोंकी कामनासेंविना चित्तकीशुद्धिलिये करेजाएंतो उनसें पापोंकी निवृत्तिरूप चित्तशुद्धिहोकर विचारज्ञानादिकोंकी उत्पत्तिद्वारा निरतिशयसुखरूप मुक्ति के हेतुहैं वो देखो प्रमाणांक ७३ में स्पष्टकहाहै अतः उनके उपदेशमें परमात्माका मुख्यतात्पर्य्य संभवेहै ॥

--)०::०(—

पूर्वपत्ती०-मुक्तिकी इच्छावास्ते राजसयज्ञोंमें प्रवृत्तिछोड़कर सात्विक जपयज्ञ ईश्वरचिन्तनमें प्रवृत्तहोनाचाहिये क्योंकि जपयज्ञही परमात्माको सबसेंप्याराहै। प्रत्युत उसेवह अपनास्वरूपही मानताहै ॥

आस्तिक०—यदि परमात्माको जपयज्ञही सबसेंप्यारा होतातो परमात्माअश्वमेधादियज्ञोंका वेदमें विधानहीं क्यों कर्ता, जप व ईश्वरचिन्तनतो सबयज्ञोंमें कराहीजाताहै ॥

यदि अश्वमेधादिक छोड़देने चाहियेतो पापोंकी निवृत्तिलिये युधिष्ठिर को श्रीकृष्ण तथा व्यासजी अश्वमेधयज्ञकरणेका उपदेशही क्योंकर्ते श्रीकृष्णको व व्यासादिकोंको क्या तेरेजैसा धर्मज्ञान नहींथा ॥

हेमित्र—कोईभी यज्ञहोजो सांसारिकपदार्थोंकी कामनासें कराजावे वो राजसयज्ञहै औरजो निष्कामतासें कराजाए वो सात्विकयज्ञहै, यिहश्रीमुखसें आपभगवत्ने कहाहै ॥

गीता०-**अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टोयइज्यते। यष्टव्यमेवेतिमनः समाधायससात्त्विकः— ॥अ. १७॥ ११॥ अभिसन्धायतुफलं दम्भार्थमपिचैवयत्॥ इज्यतेभरतश्रेष्ठ तंयज्ञंविद्धिराजसम्॥**

॥१२॥ अर्थ—शास्त्रविधिकोदेखकर,, यज्ञकरणाहीयोग्यहै,, ऐसेनिश्चयसें मनको एकाग्रकर्के फलकी कामनासेंरहितपुरुषोंने जो यज्ञ करियेहैं वो सात्त्विकयज्ञहै ॥ ११ ॥ फलके अभिलाषकर वा दम्भलिये जो यज्ञ कराजाताहै हेअर्जुन उसको राजसयज्ञ जानो ॥ १२ ॥

भावार्थयह–कामनामेंविना तो कोईकर्म होताहीनहीं इस्से जो स्वर्गादिक सांसारिकपदार्थोंकी कामनासें अश्वमेधादिक यज्ञ वा जपयज्ञ करेंजावें वो राजसयज्ञहैं, औरजो सांसारिकपदार्थोंकी कामनामें विना चित्तशुद्धिलियेज्ञान द्वारा मोक्षवास्ते यज्ञकरेजावें वो सात्विकयज्ञहैं, सांसारिकपदार्थोंकी कामना विनाकियेहैं इस्सें इनको निष्कामयज्ञ व निष्कामकर्मकहतेहैं ॥

—:*०*:—

हेमित्र—यद्यपि निर्धनकंगालपुरुषोंका तो खानेकाही अधिकारहै अतःवो खातेपीते जपयज्ञ कर्तेरहें तथापि राजेमहाराजे तथा धनाढ्यभाग्यवानोंका ऐसाअधिकार नहींहै ऐसेयोग्य नहींहै किंतु भाग्यवानोका राजेमहाराजोंका तो परमात्मस्मरण ध्यान कर्तेकर्ते खानेखुलानेवाले यज्ञनके करणेकाभी अधिकारहै उनोंने वोयज्ञ करनेही योग्यहै ।

पूर्वपक्षी०—यह जपयज्ञकी महिमा सांख्यशास्त्रका कथन है ।

आस्तिक०–तो वो सांख्यशास्त्रकासूत्र तुमने क्यों नहींलिखदिया, हे मित्र केवलबातोंसेंही गुजारा कराचाहतेहो ।

शास्त्रोंमें–कहीं अश्वमेधादिकयज्ञोंका महिमा, कहीं जपयज्ञका महिमा कहीं एकादशीआदिक व्रतोंका महिमा, कहीं दानका महिमा, कहीं तीर्थोंका महिमा, कहीं ध्यानका महिमा, कहीं आपवित्रोंका महिमा, कहीं तपका महिमा. कहीं वैराग्यका महिमा, कहीं उत्तमसन्तानका महिमा, कहीं किसीका कहीं किसीका महिमा कहाहै वो राजे महाराजे ब्राह्मणआदिकोंके अधिकारभेदसें सबही श्रेष्ठहै ॥

पूर्वपक्षी०–सांख्यमें अहिंसा और हिंसाबोधकवाक्यों (माहिंस्यात्सर्वाभूतानि और अग्नीषोमीयं पशुमालभेत)

का भिन्नविषयहोनेसें परस्परविरोध नहींहै अतः आपसमें [illegible]ध्यबाधक भाव

नहीं मानागिया इसलिए सांख्यशास्त्रानुसार प्रत्येकहिंसा पापजनक मानी गई है और जपयज्ञही श्रेष्ठ समझागयाहै परन्तु पूर्वोत्तर मीमांसा एवं न्याय शास्त्र सर्वांशमें इसकेसाथ सहमत नहींहैं वह शब्दप्रमाणको मुख्यमानकर वाचानिक यज्ञीयवधको हिंसामें परिगणित नहींकरते—जैसेहिंसाको प्रसिद्ध होनेपरभी राजा खूनीका वधकराताहुआ धर्मसे पतित नहींहोता क्योंकि वहउसका शास्त्रकेसमधिगत भुक्तिमुक्तिप्रद निजकर्तव्यहै इसविषयपर उन का विचार ग्रन्थकेबढ़नेके भयसे यहांविशेष न लिखकर हम विशेषरूपसें फिर स्वतंत्रालिखेंगे ॥

आस्तिक० हेमित्र—चिरंजीव यहां कुछक तो तुमनेभी सत्यकहाहै परंतु यहां (शब्दप्रमाणको, वाचनिकयज्ञीयवधको) इत्यादिक पद अस्पष्टअर्थवाले लिखकर साधारणपुरुषोंको धोखाहीदियाहै उनपदोंके अर्थोंको मैं अबीदिखलाताहुं ॥

"अग्नीषोमीयं पशुमालभेत" इसवेदवाक्यका अर्थभी तुमने नहींलिखा—

और जोतुमनेलिखाकि—„अहिंसा और हिंसाविधायक वाक्योंका भिन्नविषयहोनेसें परस्परविरोध नहींहै„ वो उन वाक्यनका जोजो भिन्न विषयहै जिसजिसविषयके भेदमें उनवाक्यनका विरोधनहींहै उसउसभिन्न २ विषयको अवश्यंदिखलानाचाहियेथा क्योंकि उस २ भिन्न २ विषयके दिखलायेबिना उनवाक्यनकी अविरोधिता भासेनहीं अतःउसउस भिन्न२विषयको अवश्यंदिखलाना चाहियेथा, वोभीतुमनेनहींदिखलाया अतःअव्यवस्थितकथन मात्रसें तुम साधारणपुरुषोंको धोखादेतेहो ॥

यदि मेरेसें पूछोतो देखोप्रमाणांक ४५ को वहां शांकरभाष्यसें

उनवाक्यनका भिन्न२ विषय दिखलायचुकाहुं और वहां "अग्नीषोमीयं पशुमालभेत" इसवाक्यकाअर्थभी लिखचुकाहुं ॥

होरजोतुमनेकहाकि—" अहिंसा और हिंसाबोधकवाक्योंका भिन्नविषयहोनेसें परस्परविरोध नहींहै अतः आपसमें बाध्यबाधकभाव नहींमानागिया" तो इसतुम्हारेलेखसेंभी जब सांख्यशास्त्रमें हिंसा-विधायक वाक्यनका बाधक नहींमानागया तो उनअबाध्यवाक्यनसें विहितहिंसाको पापजनक कहनाअयुक्तहीहै, होरजो तुमने कहाकि— 'जपयज्ञही श्रेष्ठसमझा गयाहै' इसका उत्तर विस्तारसें लिख चुकाहुं ॥

औरजो पूर्वपक्षीनेलिखाकि—(पूर्वोत्तरमीमांसा अर्थात् पूर्वमीमांसा कर्मशास्त्र औरउत्तरमीमांसा वेदान्तशास्त्र एवंन्यायशास्त्र सर्वांशसें 'इसके, सांख्यशास्त्रके साथ, 'सहमत, सदृशमतवालेनहींहै 'वह' मीमांसादिकशास्त्र शब्दप्रमाणको अर्थात् वेदप्रमाणको मुख्यमानकर 'वाचनिक 'वेदवचनोंसें विहित 'यज्ञीयबधको' यज्ञमेंकरेपशुकेबधको 'हिंसामें परिगणित नहींकरते' हिंसामें नहींगिणते) ॥

हेपाठक—पूर्वपक्षीने साधारणपुरुषोंको धोखादेनेकेलिये जो अस्पष्ट अर्थवाले पद लिखडालेहैं उनपदोंको और उनके स्पष्टअर्थ, यिहमैंने दिखायदियेहैं ।

हेपाठको—देखो इसपूर्वपक्षीकेलेखको कि-पूर्वमीमांसा वेदान्तशास्त्र न्यायशास्त्र इनशास्त्रोंमें वेदप्रमाणको मुख्यमानकर वेदविहित हिंसाको अहिंसारूपहीमानाहै, यिह पूर्वपक्षीके लेखकाही अर्थहै और प्रमाणांक ४९ प्रभृतिमनुस्मृतिआदिकोंमेंभी वेदविहितहिंसा अहिंसाही मानीहै तो पूर्वपक्षी सें पूछाचाहिये कि-तुम ऐसे जानतेहो तथा लिखतेहो तोफिर श्रुतिस्मृतिओं

से विरुद्धलेखलिखनेपर तुम वेदविरोधी क्योंनहींहो' और सांख्यशास्त्रमें भी हिंसाविधायक वेदवाक्यनका कोईबाधक नहींमानागया तोतुम क्यों दुराग्रहकर वेदमतसें विरुद्धचलतेहो ॥

यदि भगवत्कपिलरचित सांख्यशास्त्रके सूत्ररखकर जोतुमलिखोगे तो उसपर विशेषनिर्णय कराजावेगा ।

पूर्वपक्षी०—प्रश्न कोईतुर पूछे कि—जोलोग आपके शास्त्रों वा वेदोंपर श्रद्धा नहीरखते वहआपके प्रमाणोंको कैसेमानेंगे, उत्तर—हमारे शास्त्रवेदहीकेवल निषेध नहींकरते किन्तु श्रीगुरुनानकजीआदिभी सबमहात्मा इसदुष्टकर्मकी निन्दा करतेहै श्रीगुरुनानकजी

भांगमछली सुरापान जोजो प्राणीखांहि,
तीर्थ ब्रतनियम किये सभीरसातल जांहि ॥
जेरतलगे कापड़ जामाहोय पलीत, जेरत
पीवेंमानसां तिन क्यों निर्मल चीत ॥

आस्तिक०—प्रश्नमें तुमने लिखा कि—"जोलोग आप के शास्त्रों वा वेदोंपर श्रद्धा नहीरखते वह आपके प्रमाणोंको कैसेमानेंगे" इसप्रश्नके उत्तरमें हेबालबुद्धे श्रीगुरुनानकदेवजीके वाक्यप्रमाण क्या लिखने योग्यथे क्योंकि क्या शास्त्रवेद तेरेहें श्रीगुरुनानकदेवजीके नहींहें, और क्या श्रीगुरुनानकदेवजी शास्त्रवेदोंको नहींमानते थे, नहींनहीं उनोंने तो वेदीवंशमें अवतार लियाहै और उनोंने कहा कि—वेद कतेब कहो मत झूठे झूठा जोन विचारे ॥

हठ्ठा अब उनवाक्यनमेंभी दृष्टिदीजिये तोप्रथम यिहशब्द गुरुनानकजी का हैभीनहीं तोभी भांगका अशुभफल कहाहै वोभांगके रगडे तो हांमित्र— तुम्हारे श्रद्धेय महात्माजी लगातेहैं अतः यिहवाक्य उनकोंहि भेटकराचाहिये॥

और प्रमाणांक४६ मनुस्मृतिमें पांचप्रकारके मत्स्य भच्यकहेहैं उनसें अन्यमत्स्य अभक्ष्यहैं उन अन्यमत्स्यनके तात्पर्य्यमें मत्स्यनके खानेका दोष कहाहै॥

और सुरापानका दोषकहाहै तो हठ्ठाकियाहै 'जरतलगेकापड़, इत्यादिकजो वाक्य तुमनेलिखे इनवाक्यनमें तो मांसका नामभी नहींहै, मांसके खानेका निषधभी नहींकराहै तो प्रसंगमें ऐसे२अनुपयोगीवचनलिख कर तुम क्यों धोखादेते हो

इनवाक्यनका अर्थ तो यिहहै---झूठ दगाऽऽदिकोंसें मनुष्यनका धन-आदिरूप रुधिरकों जोपीतेहैं उनझूठे धोखेबाज मनुष्योंका चित्त क्योंनिर्मल होसक्ताहै॥

औरजो तुमने कहाकि-सब महात्मा इसदुष्टकर्मकी निन्दा करतेहैं;, सोयिह तुम्हाराकथनभी नास्तिकतामेंहै क्योंकि वेदसूत्रस्मृति आदिकोंमें पशुबलिप्रदानके व मांसभक्षणके विधायक हजारोंवाक्यहैं तो उनकेकर्ता परमपूज्य महात्मापुरुष क्या तेरीदृष्टिमें दुष्टकर्मोंके विधायकहुएहैं और देखो प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें विहितमांसके त्यागकी महर्षिओंने अतिनिन्दा-की है उनसें तुम्हारा कथन विरुद्धहै अतः उनमें विश्वासके अभाव होनेकर तुम नास्तिकतासें कथनकररहेहो॥

अब श्रीगुरुनानक देवजीके मासपदवाले स्पष्टवाक्यनको मैं दिखलाताहूं

ग्रन्थसाहब प्र० १३१—पहिलां मासहु निंमिआं मासै अंदरवास। जीऊ पाइ मास मुह मिलिआ हड चमतनमास। मासहु बाहर कढिआ मंमा मासगिरास। मुह मासैका जीभ मासैकी मासै अंदर सास। वडा होआ वीआहिआ घरलै आइआ मास। मासहुही मास ऊपजे मासहु सभोसाक। सतगुर मिलिए हुकम बुजीए ताको आवे रास। आप छुटे नहि छुटीए नानक बचन बिलास ॥ १ ॥ मासमासकर मूरख झगड़े गिआन धिआन नहीजाने। कौन मास कौन साग कहावै किसमहि पाप समाणे। गैंडा मार होम जगकीए देवतआंकी बाणे। मास छोड बैस नक पकडहि राती मानस खाणे। फडकर लोकांनो दिखलावह गिआन धिआन नहीसूजे नानक अंधेसिउ किआ कहीए कहै न कहिआ बूजै॥ अंधा सोइ जि अंध कमावै तिस रिदेसि लोचन नांही मात पिता की रकत निपंने मछी मास न खांही॥ इसत्री

पुरुषै जानसी मेला उथै मंदर मांही । मासहु निंमे मासहु जंमे हम मासैके भांडे । गिआन धिआन कुछ सूजै नाही चतर कहावै पांडे । बाहर का मास मंदा सुआमी घर का मास चंगेरा। जिअ जंत सभ मासहु होए जीअ लइआ वसेरा । अभख भखहि भख तज छोडहि अंधगुरु जिनकेरा । मासहु निंमे मासहु जंमे हम मासैके भांडे । गिआन धिआन कुछ सूजै नाही चतर कहावै पांडे ॥ मास पुराणी मास कतेबी चहुजुग मास कमांणा जजि काज वीआहि सुहावै उथै मास समांणा । इसत्री पुरुष निपजै मासहु पातशाह सुलताना । जेउइ दिसहि नरकि जांदे तां उनका दान न लैणा । देंदा नरकि सुरग लैंदे देखहु एहु धिङाणा । आपन बूझै लोक बुझाए पांडे खरा सिआणा । पांडे तूं जानसि नाही किथहु मास उपंना तोइअहु अंन कमाद कपाहां तोइअहु त्रिभवन गंना । तोआ आखै हौं बहुबिध हछा तोए बहुत बिकारा. एते रस छोड होवे संनिआसी नानक कहै बिचारा।

हे पाठको—संस्कृतमें मांस नामहै, भाषामें मांसका मास नामहै ॥ श्रीगुरुनानक देवजीके इनवाक्यनको देखो विचारो तो-सबके शरीर मांसमय कहनेसें मांसमें अशुद्धिभ्रमको दूरकराहै और 'कौनमास कौन साग कहावै किसमहि पाप समाणे' इसकथनसें जो शास्त्रविहितहै वो सागहै उसमें पाप नहीं, यिह सूचन करा है ॥

गैंडा मार होम जगकीए देवतआंकी बाणे इत्यादिवचनोंसें देवादियज्ञमें मांसके बलिदानमें शास्त्रविधिको जतलायाहै फिर 'मास पुराणी मास कतेबी चहुजुग मास कमाणा जजि काज विआहि सुहावै उथै मास समाणा।' इत्यादिक बचनोंसें सत्ययुग आदिकोंमें और यज्ञ विवाहआदिकोंमें मांसका प्रचारथा, यिह जतलायाहै ॥

एतेरस छोड होवे संनिआसी, इसवचनसें गृहस्थजनोंके लिए मांस के स्वाद अवश्यलेने चाहिए, यिह जतलायाहै क्योंकि श्रीगुरुनानकदेवजी कहतेहैं कि—एतेरस छोडे तो होवे संन्यासी अर्थात् फिर गृहस्थमें नहींरहै ॥

पूर्वपक्षी०—भक्तकबीरजी कहाहै—**सांई मारे राह सुधारे उसको कहैं हराम मुआ। जीतेको मुर्दाकर डाले उसको कहैं हलाल हुआ॥ पढे निमाज रखे फिर रोजा पराए पुत्रका काढ हिया। गर बहिश्त मिले यौंहीं तो क्यों न कुटुम्ब हलाल किया॥**

आस्तिक०—१—हेमित्र इत्यादिक शब्दोंका प्रमाणदेना योग्य नहीं हो सक्ता क्योंकि ऐसेऐसेशब्द निवृत्तिमार्गको लेकर बनाएजातेहैं ॥

२—यद्यपि कबीरजी भक्तहुएहैं तथापि प्रमाणकोटिमें तो वेदसूत्रस्मृतिओं के ही वाक्य प्रमाण कहेसुने जातेहैं वो वेदसूत्रस्मृतिओंके वाक्य दिखलाएभीहैं बहुतसें दिखायेभी जावेंगे ॥ —

हुआ अब कबीरजीके वचनोंकाभी विचारकरिये जिस भेडबकराऽऽदि भक्ष्यजीवको सांईमारे अर्थात् जो बीमारीआदिसें मरे उसका मांस धर्म शास्त्रोंमेंभी अभक्ष्यही कहाहै और वैद्यकग्रन्थनमेंभी अभक्ष्यही कहाहै और मुसलमानोंकी शराहमेंभी हरामही कहाहै, देवतापितरआदिकोंके निमित्तकर जो भेडबकराऽऽदिक माराजावे वो धर्मग्रन्थोंमेंभी भक्ष्यहीकहाहै और वैद्यकशास्त्रमेंभी भक्ष्यहीहै, ऐसेही मुसलमानोंकी शराहमेंभी हलालही कहाहै तो वेदादि धर्मग्रन्थोंसें विरुद्धकथन हिंन्दुओंमें तथा कुराणादिकोंसें विरुद्धकथन मुसलमानोंमें माननीय नहींहोसक्ता ॥

पूर्वपक्षी०—यदि पशुके मारणेसें पशुको स्वर्गमिले तो अपने कुटुम्ब को क्यों नहींमारते ॥

आस्तिक०—हेमित्र अवश्यं देखो प्रमाणांक ५८ को धर्माधर्मके विज्ञानका कारणशास्त्रहै और देखो प्रमाणांक ६६ आदिकोंमें धर्मशास्त्र स्पष्टकहतेहैं कि–विहितहिंसासें दोनों को उत्तमगतिकीप्राप्ति, स्वर्गप्राप्तिरूप श्रेष्ठफल मिलताहै तो फिर कुटुम्बको क्यों माराजावे अर्थात् विहितपशुहिंसा-करभी विहितमांसके खानेसेभी कुटुम्बको स्वर्ग प्राप्तहोसक्ताहै तोफिर कुटुम्ब का मारणा अयोग्यहीहै मूर्खताहीहै ॥

पूर्वपक्षी०—आलमगीर बादशाहने कहाहै—तूं धीरे धीरे चल बल्कि मत चल क्योंकि तेरे पाऊंके नीचे हजारों जीवहैं ॥

शेखसादीनें कहाहै—तूं किसी चींटीकोभी मतसता

क्योंकि वहभी जानसें प्यार रखतीहै और दोने को खींचतीहै ॥—

आस्तिक० आलमगीरने और शेखसादीने बहुतठीक कहाहै क्योंकि—पाऊंके नीचे जो हजारोंजीव मरतेहैं वो उनकी अविहितहिंसाहै और प्रमाद सें जो चींटीआदिकोंका सतानाहै वोभी अविहितहिंसाहै, अविहितहिंसा पापका हेतुहै अतः ऐसीअविहितहिंसाके पापसें बचनाही योग्यहै ॥ यिह कोईभी धर्मवेत्ता नहींकहता कि चींटीआदिक्षुद्रजीवोंको पादतलसें न बचावो परन्तु विहितहिंसाके प्रकरणमें ऐसे २ अविहितहिंसाके वाक्य लिखने अपनी अज्ञानता प्रकट करनीहै ॥

पूर्वपक्षी०—सूक्तावली—**शुक्रशोणितसंभूतं येनराभुञ्जतेफलम्॥नरकान्ननिवर्तन्ते यावच्चन्द्रदिवाकरौ॥** अर्थ शुक्रशोणितसे उत्पन्नहोनेवाले मांसको जोपुरुष खातेहैं वो जबतक चन्द्रमासूर्य्यरहें तबतक नरकसें नहींनिवृत्तहोते ॥

आस्तिक०—यिहश्लोकभी भयंकरवाक्यसें अविहितमांसखानेके दोष को बोधनकर्ताहै क्योंकि—जिस्सेभगवद्व्यासजीने यिहअर्थ स्पष्टकहाहै देखो व्यासस्मृति प्र० ११२—**द्विजोजग्ध्वावृथामांसं हत्वाऽप्यविधिनापशून्॥ निरयेष्वक्षयंवास माप्नोत्याचन्द्रतारकम्॥** अ० ३।५७। अर्थ—द्विजपुरुष, वृथामांसको, अविहितमांसको खाकर व पशुओंको अविधिसें मारकर जबतक चन्द्रमा तारा

रहैं तबतक नरकोंमें अक्षयवासको प्राप्तहोताहै ॥

हेपाठको-देखो जैसे श्यामजीनें अविहितमांसके खानेसें व वृथापशु-हिंसासें नरकप्राप्ति कहीहै वैसेही मुक्तावलीश्लोकमेंभीजानो ॥ विहितमांसके खानेसें नहीं प्रत्युत विहितमांसके नहींखानेसें मनुव्यासवसिष्ठादि महर्षिओंने प्रमाणांक ८१ आदिकोंमें नरकआदिकोंकी प्राप्ति कहीहै ॥

हेमित्र —इसमुक्तावलीश्लोकका विशेष उत्तर तो प्रमाणांक १३१ में श्रीगुरुनानकदेवजीके वचनोंसें देखलीजिये ॥

यदि शुक्रशोणितसें पैदाहोताहै अतः मांस अशुद्धहै ऐसे कहो तो यिह तुमारा कथनभी समीचीननहीं तथाही कहताहुं सुनिए

१ -हेमित्र-तो तुमारा शरीरभी शुक्रशोणितसें पैदाहुआहै वो क्या शुक्रशोणितकीन्याई तुमारा शरीर अशुद्धहै ॥

यदि शुक्रशोणितकीन्यांई अशुद्धहै तो तेरेशरीरका स्पर्श कबीभी किसीनेभी नहीं करनाचाहिये ॥

यदि तुमकहो कि-शुक्रशोणितसें उत्पन्न तो हुआहै मेरा शरीर तदपि स्नानआदिकोंसें शरीर शुद्ध होजाताहै तो हेबाल एवंही मांसभी प्रक्षालनआदिकोंकर शुद्धहै प्रत्युत प्रमाणांक १ आदिकोंमें प्रक्षालनमें विनाभी मांस शुद्धही कहाहै ।

२—शुक्रशोणितसें मांस बनताहै, यिह कथनभी चिकित्साशास्त्रके अज्ञानसेंहै क्योंकि-अन्नादिकोंके पाकसें पहिला धातु रसबनताहै उसरसधातुसें ,रक्त मांस मेद; अस्थि मज्जा शुक्र, यिह षटधातु बनतेहैं शुक्रशोणितके मेलसें तो एक बुदबुदामात्र होजाताहै फिर मातानें खाए हुए अन्नादिकोंके पाकसें और बाहिरआने पर बच्चे ने खाए दुग्ध अन्नादिकोंके पाकसे रसरक्त मांसादि सप्तधातु बनतेहैं शुक्रशोणितमें मांस नहीं बनता ।

रसधातुसेंही दुग्ध बनता है और केईक रससें रक्त रक्तसें दुग्ध बनता कहतेहैं जैसे हारीतसंहिता प्र० १३३—क्षीरंस्निग्धंतथारक्तं पित्तेनपाकतांगतम्। रक्तंश्वेतत्वमायाति तथा· क्षीरंसितंभवेत्॥ प्रथमस्थाने अ०८॥८॥

अर्थ-दुग्ध स्निग्धहै तथा रक्तहै, पित्तसें पाकताको प्राप्तहुआ रक्त श्वेतहोजाताहै तथादुग्ध श्वेतहोजाताहै।

प्रश्न-रस रक्त मांसमेदः अस्थिमज्जा शुक्र, इन सप्तधातुओंका आदि बीज तो शुक्रशोणितहैं

समाधान-इनसप्तधातुओंका आदिबीज शुक्रशोणितहै तो रसधातुसें होनेवाले दुग्धकाभी आदिबीज शुक्रशोणितही मानना होगा अतः मांसको अशुद्धमानोंगे तो दुग्धकोभी अशुद्धही कहनाहोगा॥–

३ प्रसिद्धहीहै कि—म्युन्सिपलकमेटोसें खरीदकरभी बागोंमें खेतोंमें अश्वगर्दभश्वान मनुष्यआदिकों का मलरूप खात गेराजाताहै तो अन्न-शाकफलआदिक पैदाहोतेहैं पुष्ट-होतेहैं॥

४ यदितुमकहोकि—अश्वश्वानादिकोंके मलरूपखातसें उत्पन्नहुएभी अन्नशाकादिक शुद्धहीहैं क्योंकि—उनअन्नशाकादिकोंको धर्मशास्त्रोंमें शुद्ध कहाहै भक्ष्यकहेहैं तो हेभ्रातः—देखो प्रमाणांक १ आदिकोंमें घृततैल-शाकआदिकोंकीन्याई मांसकोभी शुद्ध पवित्रहीकहाहै और प्रमाणांक १९५व १२४ आदिकोंमें अवश्यभक्ष्य कहाहै बहुत क्यादेखो प्रमाणांक ११ में श्रीरामजीने सीताको मांस 'मेध्य' पवित्रहीकहाहै तो उनसेविरुद्ध कौनआ-स्तिकपुरुष मांसको अशुद्धकहसक्ताहै॥

पूर्वपक्षी०—अहिंसादिग्दर्शनमें लिखाहै कि—वराहपुराणमें वराहजी ने वसुन्धरासें अपने बत्तीसअपराधिओंमें मांसाहारीको अठारहवांअपराधी कहाहै जैसे—यस्तुमात्स्यानिमांसानि भक्षयित्वाप्रपद्यते। अष्टादशापराधंच कल्पयामिवसुन्धरे अ० ११७॥२१॥ यस्तुवाराहमांसानि प्रापणेनोपपादयेत्। अपराधंत्रयोविंशं कल्पयामिवसुन्धरे ॥२६॥

अर्थ—हेवसुन्धरे मत्स्यकेमांसोंको खाकर जोपुरुष मेरीसेवामें आताहै वो उसका में अठारहवां अपराध गिनताहूं ॥ २१ ॥ हेवसुन्धरे जोपुरुष वराहकेमांसोंको ल्याकर मेरेअर्पणकर्ताहै वो उसका मैं २३ वां अपराध गिनता हूं॥

आस्तिक०—देखो प्रमाणांक ४६ मनुस्मृतिमें जोपांचप्रकारके मत्स्य भक्ष्यकहेहैं उनसेंभिन्नमत्स्यके मांसका इनश्लोकोंमें निषेधकरा जानना, क्योंकि—नहींतो स्मृतिवाक्यनसें विरोधहोगा और ग्रामके वराहके मांसका निषेधकराजानना, वा वराहभगवान्की सेवा में वराहके मांसका निषेध करा जानना॥

होमित्र—यहां विहितमृगबकराऽऽदिकोंके मांसका निषेध नहींकराहै क्योंकि—वराहपुराणमेंभी आपवराहभगवान्ने वसुन्धराप्रति विहितमृगपक्षीओंके मांसका विधानहीकराहुआहै देखो।

वराहपुराण प्र०१३४—मार्गमांसवरंछागं शाशंसमनुयुज्यते॥ एतान्नहिप्रापणेदद्या न्ममचैतत्प्रिया-

'वहम् ॥ अ० ११९ ॥ ११ ॥ अर्थ—मृगका मांस, बकरेका मांस, शशका मांस, श्रेष्ठहै देवादिकर्ममें लगाया जाताहै, लाभकेलिये इनमांसों कों देवे, मेरेको यिहकर्म प्रियपहुंचानेवालाहै ॥

वराहपुराण अ० १३५—पक्षिणांचप्रवक्ष्यामि येप्रयोज्यावसुन्धरे। येचैवममक्षेत्रेषु उपयुज्यन्ति नित्यशः॥ १४ ॥

अर्थ—हेवसुन्धरे पक्षीओंमें जोपक्षी देवादिकर्ममें लगानेयोग्यहैं,—मेरे क्षेत्रोंमें जोपक्षी नित्यउपयोगीहै उनपक्षीओंकोभी कथनकरताहुं ॥

वराहपुराण अ० १३६—लावकंवार्त्तिकंचैव प्रशस्तंचकपिञ्जलम्। एतेचान्येचबहवः शतशोऽथसहस्रशः। ममकर्मणियोग्याये तेमयापरिकीर्त्तिताः ॥ ११९ ॥ १५ ॥

अर्थ—लवापक्षीओंका समूह, बटेरोंका समूह, कपिञ्जलोंका समूह, श्रेष्ठहै अर्थात् विहितहै ॥ एऔर हॉरबहुतसैंकडे हजारोंपक्षी मेरेकर्ममें जो योग्यहै वो मैंने कहहुएहैं ॥

हेपाठक—स्पेदतित्तिरका और चातकका नाम कपिञ्जलहै।

वराहपुराण अ० १३७—यस्त्वेतत्तु विजानीयात्कर्म कर्तातथैवच। नापराध्नोतिसनरो ममचोक्तंवचःप्रिये ॥ १६ ॥

अर्थ—इसकोजोपुरुष जानताहै और वैसेहींकर्मकोकर्ताहै वोपुरुष अपराधी नहींहोता, यिहवचन मेराकहाहुआहै हेप्रियेवसुन्धरे ॥

पूर्वपक्षी०—सांख्यलोगभी मांसभोजियोंके प्रति आक्षेपपूर्वक उपदेश करतेहैं—**यूपंछित्वापशून्हत्वा कृत्वारुधिरकर्दमम् ॥ यद्येवंगम्यतेस्वर्गे नरकेकेनगम्यते** ॥ १ ॥ अर्थात् यज्ञस्तम्भको छेदकर, पशुओंको मारकर, रुधिरका कीचड़ करके, इसतरह यदि स्वर्गमें गमनहो तो नरकमें कौनकर्मसें गमनहोसकेगा, इत्यादि

आस्तिक०—यिह सांख्यसूत्र नहींहै किंतु अहिंसादिग्दर्शनग्रन्थके कर्ता विजयधर्मसूरिजीने वहां नाम तो सांख्य का लिखदिया परंतु यिह श्लोक पाद्मपुराणमें खण्ड १ ॥ अ० १३॥श्लोक ३२३ का है वो बृहस्पति जीने दानवअसुरोंप्रति वंचनालिये कहाहुआहै अतः प्रमाणरूप नहींहै तथापि इसका उत्तर यिहहै कि—जैसे युद्धमें हिंसा विहितहै अतः उसका स्वर्गप्राप्तिफलहै वैसेंही यज्ञमें जानो, वोदेखोप्रमाणांक ५६ में श्री रामानुज स्वामीने वेदप्रमाणसें स्पष्टलिखाहै, हेमित्र धर्माधर्मका निश्चय शास्त्रसें विना अयोगीजनोंको नहीं होसक्ता किंतु शास्त्रसेंही होसक्ताहै वोदेखो प्रमाणांक ५७ में यिहअर्थ सिद्धहीहै अत: निषिद्धहिंसासें नरकप्राप्ति होतीहै विहितहिंसासें नहीं ॥

—):०:(—

हेपाठक-अहिंसादिग्दर्शनमें विजयधर्मसूरिजीने बहुतलेख ऐसेलिखेहैं कि—[व्यासजीने पुराणोंमें इसतरह कहाहै, अर्चिमार्गियोंके उद्गार,वेदान्तियों के वचनसुनो] ऐसेऐसे लिखकर जो चाहे श्लोक लिखदियेहैं परंतु न तो पुराणका नाम लिखा, और नांही अर्चिमार्गियोंके ग्रन्थका नाम लिखा, और नांही किसी वेदान्तग्रन्थका नामलिखा,यिह क्या छल नहीहै ॥

अर्थयिह–विजयधर्मसूरिजीने जैसे वराहपुराण मनुस्मृतिआदिकोंके अध्यायांक श्लोकांक और कहीं पृष्ठांक लिखदियेहैं ऐसीकृपाकरीहै, और कहींकोई श्लोक लिखदिया उसकेग्रन्थका नामभी विजयधर्मसूरिजीने नहीं लिखा अर्थात् बहुतजगें तो पृष्ठांकपर्य्यन्त लिखदेना और बहुतजगें ग्रन्थ का नामभी न लिखना, यिह क्या धोखादेना नहींहै तो होर क्याहै ॥

अतः अहिंसादिग्दर्शनमें लिखेहुए जिनश्लोकोंके ग्रन्थका नाम और अध्यायांक श्लोकांक लिखाहै वोश्लोकभी आर्षग्रन्थकेहैं तो उनका उत्तर लिखूंगा उनकी व्यवस्था करूंगा, और जिनश्लोकोंके ग्रन्थका नामभी नहीं लिखा व अध्यायांक श्लोकांकभी नहींलिखा, ऐसेलेख छलरूप स्पष्टजाने जातेहैं अतः उनश्लोकोंका उत्तरलिखना योग्यहीनहींहै ।

पूर्वपक्षी०—नगोप्रदानंनमहीप्रदानं नान्नप्रदानंहितथाप्रधानम् ॥ यथावदन्तीहबुधाः प्रधानं सर्वप्रदानेष्वभयप्रदानम् ॥ २९८ ॥ पञ्चतन्त्र पृ० ७७ ॥

अर्थात् विद्वान्लोक संपूर्णदानोंमें जैसा अभयदानको उत्तम मानतेहैं वैसा गोदान पृथ्वीदान अन्नदानआदि किसीकोभी प्रधान नहींमानतेहैं ॥

कितनेंही अज्ञानीजीव विनाविचारेही मच्छर डांस खटमल जूं आवगैरह छोटे २ जीवोंको स्वभावसेही मारडालतेहैं और बहुतसे तो घोड़ेके वालकी मूरछलसें, या हाथसें या घरमें धूंआकरकें या गर्मजलसें खटमल आदिजीवोंको मारतेहैं परंतु यादि कोई उनको समझावे तो वह ऊटपटांग जवाव देकर अपना बचाव करनेका यत्न करतेहैं लेकन वस्तुतः वैसे जीवोंके मारनेसेंभी बहुतपापहोताहै–इसविषयको दृढकराने वाला वराह पुराणकाश्लोक देखिये–जरायुजाण्डजोद्भिज्ज स्वेदजा-

निकदाचन ॥ येनहिंसन्तिभूतानि शुद्धात्मानो-
दयापराः ॥ ८ ॥ १३२ अ० ॥ ५३२ पृ० ॥

भावार्थ—मनुष्यगौआदिक जरायुज, अण्डज पक्षी, उद्भिज्ज वनस्पति स्वेदज खटमल मच्छर डांस जूंआलीख वगैरह समस्तजीवोंकी जोपुरुष हिंसा नहींकरतेहैं वो शुद्धात्मा दयापरायणहैं ।

आस्तिक०- हेभ्रातःसर्वजीवोंप्रति अभयदान तो निवृत्तिमार्गवाले संन्यासीओंका धर्महै परंतु वोभी संपूर्णरूपसें नहिंकरसक्ते क्योंकि—शौच स्नान भिक्षाऽऽदिकों लिये चलने फिरने खाने पीने आदिकों कर संन्यासीओंसेभी अनेकसूक्ष्मजीवोंकी हिंसा होतीहै और प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंका भयदियेबिना निर्वाह होहीनहींसक्ता, तथाही कहताहुं सुनिये ॥

यदि खेतालिये हल नहींचलाते तो गृहस्थोंका निर्वाह नहींहोसक्ता क्योंकि—सर्वजैनीभाई तथा किसी महात्माकाभी अन्नपैदाहुएबिना अभय दानसेही जीवन नहींरहसक्ता ॥

यदि खेतालिये बैलभैंसाको जोतकर हलचलातेहैं तो लाठीमारसें क्लेश दियेबिना भयदिएबिना बैलभैंसे नहींचलते अतः बैलभैंसोंको अवश्यभय देनाहोताहै फिर हलके चलानेसे असंख्यक्षुद्रजीव मरते हैं ऐसेहीकूपके अरटमें, गेहूंआदिकोंके गाहनमें गाडीमें कोलूमें खरासमें इत्यादिकोंमें मार पीटसे भयदियेबिना बैलभैंसेआदिक काम नहींदेते उन अरटआदिकोंके चलाएबिना गृहस्थजनोंका निर्वाह नहींहोसक्ता और अरट गाडीआदिकों के चलानेसं असंख्यक्षुद्रजीवोंका मरणभी होताहीहै ॥

ऐसेही हस्ती ऊंठ घोड़ा खच्चर गधाऽऽदिकभी मारपीटकर भयदिये बिना काम नहींदेते इनसें कामलियेबिना गृहस्थजनोंका निर्वाहभी नहींहो

सक्ता और इनसें कामलेनेमें असंख्यक्षुद्रजीवभी मरतेहैं, अतःगृहस्थजनोंनें योग्यताके विचार पूर्वक अभयदेना योग्यहो सक्ताहै ॥

हेमित्र-मच्छर डांस अतिकोमल जीवहैं यदि उनको वस्त्रादिकोंसें हटातेहैं तो वो मरतेहैं, यदि नहींहटाते तो मनुष्यनको अतिक्लेशहोताहै ॥

यदि धूंआं करतेहैं तो मच्छर डांसोंको दुःख होताहै, यदि धूंआं नहींकरें तो गौभैंसआदिक मच्छरडांसोंसें दुःख पापाकर तड़फतेहैं मरतेहैं।

खटमल जूंआंवगैरह जीवोंको यदि खाटसें शरीरसें निकाल डालतेहैं तो उनको चींटी वगैरह खाजातेहैं वो जीवित नहीं रहसक्ते यदि नहींनिकालें तो मनुष्योंको दुःख होताहै, जूंआलीखांसें दुर्दशाभी होतीहै ॥

और केई गौभैंस घोड़ा खच्चर गधाऽऽदिकोंके शरीर के किसीअंगमें जीव पड़जातेहैं तो यदि उसपर फीनैल मुश्ककपूरआदिक औषध लगावें तो सो असंख्य जीव मरतेहैं यदि औषध नहींलगावें तो गौ भैंस घोड़ा आदि मरतेहैं ॥

केई खूओंमें पूरेआदिक जीव पैदा होजातेहैं यदि उसका जल निकालाजावे तो वो असंख्यजीव मरतेहैं, यदि उसखूएमें औषध गेरें तोभी वो लाखोंजीव मरतेहैं ।

यदि जल नहींनिकालें औषधभी नहींगेरें तो उस खराबजलके पीने सें मनुष्य बीमारहोजातेहैं मरतेहैं ॥

वर्षाऋतुमें प्रायः गेहूं चना जौंआदिकोंमें सुसरीआदिजीव पैदाहो जातेहैं फिर यदि उन गेहूं चनाऽऽदिकों को धूपमें नहींफैलायाजावे तो वो सब अन्न जीवोंसे खायाजाताहै इस्से मनुष्योंका निर्वाहही नहींहोसक्ता, इसी में जैनीभाईभी ऐसेअन्नको धूपमें फैलातेहीहैं जब वोअन्न धूपमें फैलाया जावेतो उसअन्नसें निकसकर असंख्यजीव मरतेहैं ॥

विदितरहे कि--रुधिरमें मैलेमें असंख्यजीव होतेहैं तथा दद्रुप्लेग प्रभृतिरोगोंके कृमि भिन्नाभिन्नजातिके होतेहैं ॥

यदि मनुष्यनको मलविकारहुए जुलाब करायाजावे तो हजारों मल-कृमि मरतेहैं, यदि जुलाब नहींकरावें तो मनुष्य बीमारीसें मरतेहैं, ऐसेही रुधिरशोधक औषधसेभी जानो ॥

यदि दद्रु आदिरोगोंका औषधकरें तो सो हजारों रोगकृमि मरतेहैं यदि औषधनहींकरें तो मनुष्य दुःख भोग २ कर मरते हैं ।

हेमित्र–इत्यादिक असंख्यजगोंमें सूक्ष्मजीवोंकी हिंसाका निवारण नहींहोसक्ता तो अब इसमें आप कहें कि गौघोड़ामनुष्यादिक श्रेष्ठजीवोंकी हिंसाकीउपेक्षाकर्के क्षुद्रजीवोंकी रक्षामें तत्परहोना क्या अन्यायनहींहै,जैसेकि राजाम्र वा कल्पवृक्षको काटकर बबूरकी, रक्षाकरणी, वाडकरणी अन्याय नहींहै वो प्रसिद्धअन्यायहीहै ॥

क्योंकि–ऐसे कौनबुद्धिमान्पुरुष कहसक्ताहैकि–गौभैंसघोड़ाऽऽदिक तो दुःखपायें मरें परंतु औषधसे उनके व्रणकृमि नहींमरें ।

और ऐसेभी बुद्धिमान् वा मूढ़ कोईभीपुरुष नहींकहसक्ता कि–बीमारीसें तकलीफपाय २ कर मनुष्य तो मरें परंतु औषधोंसें मलकृमि रुधिरकृमि रोगकृमि व्रणकृमि न तो तकलीफ पावें नांहीं मरें ॥

बहुतसे पूज्ययतिआदिकं जैनीभाईओंकाभी चिकित्सा करणाही व्यापारहै अतः जैनीभाईभी औषध कर्ते करातेहीहैं सो औषधोंका करणा योग्यहीहै क्योंकि--आयुर्वेदसें विहित औषधोंकर जो कूपकृमि व्रणकृमि आदिक मरतेहैं वो आयुर्वेदविहिताहिंसाहै ॥

हेभ्रातः--देखो प्रमाणांक १३४ आदिकोंको वराहपुराणमें साक्षात्

वराहभगवान्नेभी विहितमृगोंके पक्षीओंके मांसका विधानकराहै अतः तुम्हारे लिखे वराहपुराणके श्लोकमें वृथाहिंसाका त्यागकहाजानना ॥

पूर्वपक्षी०--भगवद्गीतामेंभी दैवीसम्पत् और आसुरीसम्पत् जोदिखाई गईहै उनमें दैवीसम्पत् मोक्षको देने वालीहै और आसुरी सम्पत् केवल दुर्गतिका कारणहै दैवीसम्पतमेभी केवलअभयदानकोही मुख्य रखाहै यथा **अभयंसत्त्वसंशुद्धि ज्ञानयोगव्यवस्थितिः** अ०१६। १ ॥ इत्यादिक बहुतश्लोकहैं, भावार्थ अभय याने भयका अभाव १, सत्त्वसंशुद्धि चित्तसंशुद्धि अर्थात चित्तप्रसन्नता २, आत्मज्ञान प्राप्तकरनेके उपायोंमें श्रद्धाही ज्ञानयोगव्यवस्थितिहै ३, इत्यादिक ॥

आस्तिक०–यहांभाष्यकारभी अभयपदका अभीरुता अर्थकर्तेहैं औरभाष्यकी आनन्दगिरिटीका **अभीरुता शास्त्रोपदिष्टेऽर्थे संदेहंहित्वाऽनुष्ठाननिष्ठत्वम्** ॥ अभयका अर्थ, अभीरुता, भयरहितहोना अर्थात् अपने २ वर्णआश्रमके योग्य शास्त्रने उपदेशकरे अर्थमें संशयको त्यागकरके अनुष्ठानमें स्थिरताही अभयपदका अर्थहै और विजयधर्मसूरिजीनेभी भयका अभाव अभयपदका अर्थलिखाहै तो दानपद अपनीतर्फसें लगाकर जो विजयधर्मसूरिजीने पहिलअभयदान लिखाहै वह यहां अयुक्तहीहै ॥

और अभयदानके विषयमें तो मैं अबीविस्तारसें लिखआयाहुं ।

जैनिओंका उपहास—**हिंसायत्रपराधर्मः अधर्मस्तत्रकीदृशः। ब्राह्मणोयत्रमांसाशी चाण्डालस्तत्रकीदृशः॥**

अर्थ—जिसमतमें हिंसा परमधर्महै उसमतमें अधर्मकैसाहै, जिसमतमें ब्राह्मण मांसाशीहै उसमतमें चाण्डाल कैसाहै ॥

उत्तर—**श्रुत्यादिविहिताहिंसा धर्मोयत्रसखे स्मृतः। अधर्मस्तत्रविज्ञेय स्तदन्यासावृथैवसा ७ ब्राह्मणोयत्रहेमित्र विहितामिषभुक्स्मृतः ॥ चाण्डालस्तत्रविज्ञेयो निषिद्धामिषभोजनः ॥ ८ ॥**

टीका—हेसखे जिसमतमें श्रुतिआदिकोंमें विहितहिंसा धर्म स्मृतिओंमें कहाहै, उसमतमें अविहितहिंसा अधर्महै वो अविहितहिंसा वृथाहिंसा कहीजातीहै ॥ ७ ॥

हेप्रियमित्र—जिसमतमें ब्राह्मण विहितमांसखानेवाला स्मृतिओंमें कहाहै, उसमतमें निषिद्धमांसखानेवाला चांडालहै ॥ ८ ॥

पूर्वपक्षी०—मनुस्मृतिके अ० ११ का—**अभोज्यानांतु-भुक्त्वान्नं स्त्रीशूद्रोच्छिष्टमेवच॥ जग्ध्वामांसम-भक्ष्यंच सप्तरात्रंयवान्पिबेत्** ॥ १५२ ॥

भावार्थ—जिसकाअन्न खानेलायक नहींहै उसका अन्न खाकर और स्त्री तथा शूद्रका जूंठा खाकर तथा सर्वदा अभक्ष्यही याने नहींखाने-लायक मांसको खाकर शुद्धहोनाचाहे तो सातादिनतक यवका पानी पीना चाहिये ॥

विवेचन—प्रायश्चित्तविधिमें मांसखानेसें प्रायश्चित्तभी दिखलायाहै तो भी हिंसासें लोक क्यों नहींडरतेहैं ॥

आस्तिक०—हेपाठक-विजयधर्मसूरीजी बहुतजगें दुराग्रहकर सत्य-अर्थको छिपाके असत्यअर्थकोही लिखतेहैं। देखोइसमनुश्लोककीओं टीकाभी दिखलाताहूं ॥

मेधातिथिकामनुभाष्य प्र० ॥ १३८—**अभक्ष्यंमांसं प्लवहंसचक्रवाकादीनाम् ॥**

अर्थ—प्लवहंसचकवाऽऽदिकोंके अभक्ष्यमांसको खाएतो सातदिन जौं पीवे ॥

सर्वज्ञनारायणकी टीका प्र० १३९—**अभक्ष्यंमांसं जालपादादीनाम् ॥**

अर्थ—जालकीन्यांई जिनके पैरहोवें ऐसे हंस बतकआदिकोंके अभक्ष्यमांसको खाए तो सातदिन जौं पीवें ॥

विवेचन—मनुश्लोकमेंभी अभक्ष्यमांसके खानेका यिह सातदिन जौं पीने प्रायश्चित्तकहाहै उनकी टीकामेंभी प्लवहंसचकवाऽऽदिकोंका अभक्ष्यमांस अर्थ लिखाहै तो आश्चर्य्यहै कि सत्यअर्थको छिपाकर धोखादेनेके महापापसें क्यों नहींडरते. विहितमांसके खानेका प्रायश्चित्त नहीं प्रत्युत देखो प्रमाणांक ८१ आदिकोंको विहितमांसके नहींखानेके अतिदोष कहेहैं प्लवनाम वानरका और किसीपक्षीविशेषकाहै ॥

—o—

पूर्वपक्षी०—विधिविहितमांसखानेमें दोष न माननेवालोंको देखनाचाहिये कि-श्रीमद्भागवततीय चतुर्थस्कन्धके २५ वें अध्यायमें प्राचीनबर्हिष राजाने-नारदजीसें पूछाकि-मेरा मन स्थिर क्यों नहींरहताहै तब नारदजीने योगबलसें देखकर कहाकि-आपनेजो प्राणियोंके बधवाले बहुतसें यज्ञ

कियेहैं इसीसें आपका चित्त स्थिर नहींरहताहै, ऐसा कहकर योगबलसें राजाको यज्ञमें मारेहुए पशुओंका दृश्य आकशमें दिखलाया और नारदजी नें कहाकि-हेराजन् दयारहित होकर हजारोंपशुओंको यज्ञमें जो तुमने मारा है वे पशु इससमय क्रुद्धहोकर यह रस्ता देखरहेहैं कि-राजा मरकर कब आवे और हमलोग उसको अस्त्रोंसें काटकर कब अपनाबदला चुकावें देखिये श्रीमद्भागवतके चतुर्थस्कन्धमें—

भोभोःप्रजापतेराजन् पशून्पश्यत्वयाऽध्वरे ॥ संज्ञापितान्जीवसंघान् निर्घृणेनसहस्रशः ॥ ७॥ एतेत्वांसंप्रतीक्षन्ते स्मरन्तोवैशसंतव ॥ संपरेत-मयैःकूटै श्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ॥ ८ ॥

इनदोनों श्लोकोंका भावार्थ ऊपरही स्पष्ट होचुकाहै ॥

आस्तिक०—उन पशुयज्ञोंकरही प्राचीनबर्हिषराजा निवृत्तिमार्गके अधिकारीहुए इस्सें राज्यको गृहस्थाश्रमको गृहस्थकेउनयज्ञोंको छुडवाकर वानप्रस्थकरानेलिये नारदजीने ऐसीरचना करदिखलाई इस्सें देखो भागवत

प्राचीनबर्हीराजर्षिः प्रजासर्गाभिरक्षणे । आदि-श्यपुत्रानगमत् तपसेकपिलाश्रमम् ।स्क०४।अ०२९।८३।

अर्थ—जब उपदेशकर्के नारदजी सिद्धलोकको चलेगए तबप्राचीन बर्हिषराजा प्रजासृष्टि पालनेलिये (प्रचेतस् पुत्र आवें तो वो राज्यमें स्थापित करदेने) ऐसे मंत्रीजनोंको कहकर आप तपलिये कपिलमुनिके आश्रम को चलागया ॥

देखो प्रमाणांक १२० को युधिष्ठिरके यज्ञमें ३०१ अजआदिपशु वेदविधिसें मारेगए, फिरदेखो स्वर्गारोहनपर्व १४ वेंको जब युधिष्ठिरजी स्वर्गकोगए तब मार्गमें नांही वोपशु आए और नांही युधिष्ठिरको किसीने अस्त्रोंसें काटा और युधिष्ठिरजीनें तो वनमें हजारोंमृगोंकोभी माराहै तोभी शरीरसहितही स्वर्गमें पहुंचे ॥

औरदेखो महाराजादशरथके यज्ञमेंभी ३०१ पशुओंका बलिप्रदान करागया ॥

वा० रामायण प्र० १४० पशूनांत्रिशतंतत्र यूपेषुनियतंतदा ॥ अश्वरत्नोत्तमंतत्र राज्ञोदशरथस्यह ॥ वा०का०१॥स०१४॥३२ ॥

वा०रामायण प्र० १४१—कौसल्यातंहयंतत्र परिचर्य्यसमंततः ॥ कृपाणैर्विशशासैनं त्रिभिः परमयामुदा ॥ ३३ ॥

राजादशरथके उसयज्ञमें तब तीनसौ पशु श्रेष्ठ यूपोंमें बान्धेगए, तहां अश्वोंमें रत्नरूप उत्तमअश्वथा ॥ ३२ ॥

तहां प्रोक्षणादिकोंसें संस्कारकर्के उस अश्वको कौसल्या महारानी परमहर्षसें तीनकृपाणोंकर काटतीभई ॥ ३३ ॥

हेपाठक—अयोध्यापुरी सरयूतीर्थके तटपर महाराजादशरथने ऐसा यज्ञकरा जिसमें पशुओंका बलिप्रदानहुआ उसयज्ञसें रामलक्ष्मणआदि चार पुत्ररत्नप्राप्तहुए ॥

ऐसेदशअश्वमेधयज्ञ श्रीरामजीनेंभी करेथे सो देखो प्रमाणांक १३० में

ऐसा अश्वमेधयज्ञ महाराजा सगरनेंभी कराथा देखो।

भागवत प्र० १४२—**तंपरिक्रम्यशिरसा प्रसाद्यहय-मानयत् ॥ सगरस्तेनपशुना क्रतुशेषंसमापयत्** ॥ स्क० ६॥अ० ८॥३०॥

अर्थ --प्रक्रमाकर्के उसकपिलजीको शिरसें प्रमाणकर प्रसन्नकर्के सगर का पौत्रः अंशुमान् अश्वको ल्याताभया सगरमहाराजा उसपशुसें यज्ञशेषको समाप्त कर्ताभया ॥३०॥

दौष्यन्ति महाराजानेंभी गंगा और यमुनाके तटपर ५५ अश्वमेधयज्ञ करे देखो भागवतप्र०१४३—**पञ्चपञ्चाशतामेध्यै गंगा यामनुवाजिभिः ॥ मामतेयंपुरोधाययमुनाया-मनुप्रभुः** ॥स्क०६॥अ०२०॥२५॥ अर्थ ममताके पुत्र दीर्घतमाको पुरोहित बनाकर यज्ञके योग्य पवित्र ५५ अश्वनसें गंगायमुनाके तटपर अनुलोमविधिमें दौष्यन्तिमहाराजा यज्ञकर्ताभया ॥

ऐसे २ विख्यात महाराजे सबही यज्ञ कर्तेआये हैं सो दशरथसगर रन्तिदेव युधिष्ठिरआदिक स्वर्गमेंही पहुंचे उनके मार्गमें नांहीं कोइपशुआया और नांहीं उनको किसीने काटा ॥

उन हजारों पशुओंने मरकर जन्मान्तरमें देशांतरमें जाकर पूर्वजन्मका स्मरणकर्के बदलाचुकाना, स्पष्टअसंभवभीहै दशरथ रन्तिदेव युधिष्ठिर अर्जुनादिकोंकी स्वर्गमें प्राप्ति इतिहासग्रन्थोंमें कहीहीहै ॥

और प्रमाणांक ८६ आदिकोंसेभी विधिविहितहिंसाका शुभफलही सिद्धहै और प्राचीनबर्हिषराजाभी ऐसे यज्ञोंकरही शुद्धचित्त निवृत्तिमार्गका

अधिकारीहुआ, उसको राज्यगृहस्थाश्रमादि छुडवाकर वानप्रस्थकरानेलिये नारदजीने ऐसीरचना करादिखलाई, जैसे कि-विष्णुनारायणने नारदजीका मुख वानरका रचदियाथा ॥

पूर्वपक्षी०--यज्ञमें हिंसाकरणेका निषेध महाभारतशान्तिपर्वके मोक्षाधिकारमें अ० २७३ पृष्ठ १५४ में लिखाहै यथा-**तस्यतेनानुभावेन मृगाहिंसात्मनस्तदा ॥ तपोमहत्समुच्छिन्नं तस्माद्धिंसानयज्ञिया** ॥ १८ ॥

महाभारत अ० १४४ **अहिंसासकलोधर्मो हिंसाधर्म स्तथाहितः ॥ सत्यंतेऽहंप्रवक्ष्यामि नोधर्मःसत्य-वादिनाम्** ॥ २० ॥

भावार्थ---स्वर्गके अनुभावसें एकमुनिनें मृगकी हिंसाकरी तब उस मुनिका जन्मभरका बड़ाभारी तप नष्टहोगया अतएव हिंसासें यज्ञभी हितकर नहीं है वस्तुतः अहिंसाही सकलधर्महै और अहिंसाही सच्चा हितकरहै मैं तुमसे सत्यकहताहुं कि-सत्यवादीपुरुषका हिंसाकरनेका धर्म नहींहै ॥

आस्तिक०-खेदहै कि-महाभारतकी पं० नीलकण्ठकृतटीकामें इस २० वें श्लोकके द्वितीयपादमें हिंसापद छेदकरके अर्थकराहै, उसको अहिंसापद दुराग्रहसें विजयधर्मसूरीजैनीजी बनातेहैं-और इसके चतुर्थपादमें योधर्मः वा नोधर्मः, ऐसा पाठभेदहै वोभी नीलकण्ठजीनें टीकामें दिखलायाहै ॥ -

हेप्रियपाठक-महाभारतमें एक ब्राह्मणवानप्रस्थके यज्ञके यिहश्लोकहैं अतः इसप्रकरणमें यिह श्लोक उपयोगी नहींहैं क्योंकि-यहां प्रवृत्तिमार्गवाले

गृहस्थजनोकेलिए प्रसंग चलाहुआहै वानप्रस्थोंकेलिये नहीं तथापि वान प्रस्थब्राह्मणकी वोकथाही संक्षेपसें लिखताहुं ॥

सत्यनामा उञ्छवृत्ति एकऋषिथा पुष्करधारिणीनामा उसकी स्त्रीथी वनमें जायके उस ऋषिने श्यामाकअन्न और शाक आदिकोंसे यज्ञ आरम्भ किया, वनमें उसऋषिके समीप धर्मराज आयके किसीनिमित्तसें मृगरूपहोता भया, मृगरूपहुए धर्मराजनें उसमुनिको कहा कि–मंत्रकाअंग जो पशुहै उस पशुसेंविना तूं यज्ञ कर्ताहैं, यिह तूं ठीक नहींकर्ता ।

यदि तुम कहो कि–मैं निर्धनपुरुषहुं पशुको खरीद नहींसक्ता तो हेब्रह्मन् अग्निमें मेरेको फैंक उससें तूं स्वर्गको जा, फिर तदनन्तर सावित्री भगवतीनें प्रत्यक्षहोकर कहा कि—मेरेनिमित्त यिहपशु अग्निमें हवन करा चाहिये तब उसब्राह्मणने कहा कि-मैं सहवासीमृगको नहींमारूंगा, ऐसे कहीहुई सो सावित्री भगवती "यिह दुष्टाचरित क्याहै" ऐसे उसमूढ़जनकी उपेक्षाकर्के निवृतहुई सावित्रीभगवती रसातल देखनेकी इच्छासे यज्ञाग्निमें प्रविष्ट होगई ।

पुनः बद्धांजलिहुआ हरिणमृग उसब्राह्मणसें प्रार्थनाकर्ताभया कि 'मेरेको अग्निमें फैंक' फिर उसब्राह्मणने उसमृगको स्पर्शकर्के कहा कि–चले जाईए तदनन्तर वो हरिण आठ कदम जाकर फिर हटआया, पुनः कहने लगा कि–हेसत्यब्राह्मण मेरेको मार यज्ञलिए हतहुआ मैं सद्गतिको प्राप्त होवुंगा ॥

और मेरेदियेहुंएं चक्षुःसें स्वर्गकी अप्सरांको विचित्रविमानोंको गंधर्वों को देख तदनन्तर "ऐसास्वर्ग मेरेको मिले" ऐसी इच्छाकर लगेहुएचक्षुःसें वो ब्राह्मण चिरतक देखकर्के और मृगको स्वर्गार्थीदेखकर हिंसासें स्वर्गवास

निश्चित कर्ताभया मृगहोकर वोधर्मराज वहुतवर्ष बनमें रहकर जिसनिमित्तसें मृगहुआथा उसका निस्तारा अपना उद्धारकिया ॥

हे पाठक – इतनीकथासें अनन्तर यिहश्लोकहैं

उनदोनोंश्लोकोंका अर्थ – "पशुको मारकर स्वर्गमें प्राप्तहोउंगा" इस भावसें मृगकी हिंसामें मनवाले उस वानप्रस्थब्राह्मणका महत्तप नष्टहुआ उससे वानप्रस्थ ब्राह्मणको हिंसा यज्ञलिये हितकर नहीं ॥१८॥—अहिंसा सकलधर्महै वैसेही स्वर्गदायिहोनेसें हिंसाधर्म हितकरहै, मैं तुझको सत्य कहताहुं हमारा सत्यवादीओंका धर्महै अथवा मैं तुझको सत्यकहताहुं सत्यवादीओंका जो धर्महै ॥२०॥

अव विचारकरें कि—वो वानप्रस्थब्राह्मण तो शाकआदिकोंसेंही यज्ञ करनेलगाथा, फिर उसने मृगको माराही नहीं तो उसके तपका नाश क्यों हुआ ॥

और उसब्राह्मणनें सावित्रीभगवतीके वाक्यकाभी आदर नहींकरा, तथा मृगरूपधर्मराजके वाक्यनकाभी आदर नहींकरा, अर्थात् सावित्रीभगवती आदिकोंके कहने से भी उसने मृगहिंसा नहींकी तोफिर उसब्राह्मणके तपका क्षय क्योंहुआ ॥

यदि आप कहो कि–उसब्राह्मणको मृगके मारणेसें स्वर्गप्राप्तिका निश्चयहुआ उससें उसकेतपका क्षयहुआ तोहेभ्रातः वोनिश्चयभी धर्मराजके बारंबारकथनसें और गन्धर्वअप्सरांआदिकोंके दिखलानेसें हुआ अतः ऐसे-निश्चयके करानेवाला धर्मराजथा इस्सें धर्मराजके तपका क्षयहोनाचाहियेथा ॥

फिर वो निश्चयभी सत्यहीथा क्योंकि देखो तुम्हारेलिखे इस २० वें श्लोकके द्वितीयपादकी ॥

नीलकण्ठीटीका प्र० १४५—**तथातेनस्वर्गप्रदत्वेनरूपेणाहितः**

अर्थ—वैसे स्वर्गदायीरूपसें हिंसाधर्म हितकरहै ॥

और प्रमाणांक६६ आदिकोंमेंभी विधिविहितहिंसाका श्रेष्ठफलही दिखलायाहै वो रन्तिदेव दशरथ युधिष्ठिरआदिकोंकोभी श्रेष्ठफलहीहुआहै तो ब्राह्मणके तपका क्षयक्यों हुआ सो अर्थसें जाना जाताहै कि-सावित्री-भगवतीके वाक्यका अनादरकरणेकर उसकेतपका क्षय हुआ ॥

—*०*—

होर जो १८ वें श्लोक में कहाहै कि—यज्ञलिये हिंसा हितकरनहीं,,वो वानप्रस्थ ब्राह्मणलिये कहाहै क्योंकि यदि क्षत्रियादि गृहस्थोंकोलियेभी यज्ञीयहिंसाहितकर न होतीतो -देखो प्रमाणांक १२६का व्यासभगवान् पापोंकी निवृत्तिलिये हिंसायुक्त अश्वमेधका उपदेश क्योंकरसक्तेथे ॥

फिर ऐसेयज्ञमें आपकृष्णभगवान् और व्यासप्रभृतिमहर्षिजन संमिलित कैसे होसक्तेथे ॥

महाभारत प्र० १४६— **राज्ञोमहानसेपूर्वं रन्तिदेवस्य वैद्विज । द्वेसहस्रेतुबध्येते पशूनामन्वहंतदा । समांसंददतोह्यन्नं रन्तिदेवस्यनित्यशः ॥** पर्व ३ ॥ अ० २०८ ॥ ८ ॥ **अन्नस्याहिप्रदानेन रन्तिदेवोदिवंगतः ॥** प० १३ ॥ अ० ११२ ॥ १२ ॥

अर्थ हेद्विज-मांससहितअन्न के दानकरणेवालाजो रन्तिदेव उस रन्तिदेवराजाके पाकस्थानमें दो हजार अजआदिपशु प्रतिदिन मारेजातेथे ॥ ८ ॥ वो रन्तिदेवराजा ऐसेअन्नकेप्रदानकर स्वर्गको प्राप्तहुआ ॥ १२ ॥

देखो मांससहितअन्न के प्रदानकरणेकर रन्तिदेवके तपका पुण्यका क्षय नहींहुआ किन्तु रन्तिदेवजी स्वर्गमेंही पहुंचे और सगर युधिष्ठिर आदिकभी असंख्य महाराजे पशुहिंसावाले यज्ञनसें स्वर्गादिउत्तमगतिको प्राप्तहुए अतः विधिविहितहिंसा हितकरही सिद्धहै ॥

यदि आप कहें कि—वो ब्राह्मण वानप्रस्थथा निवृत्तिमार्गवाले वानप्रस्थको पशुहिंसाका संकल्पकरनाभी योग्यनहींहै इस्सें उसके तपका क्षय हुआतो हेमित्र वो मैं प्रथमही लिखचुकाहूं कि–यहांतो प्रवृत्तिमार्गवाले गृहस्थजनोंकेलिये पशुबलिप्रदानका मांसखानेका विचार चला हुआहै, इस विचार में वानप्रस्थसम्बन्धी यिहश्लोक जैनीभाईके लिखे अनुपयोगीहीहैं ॥

—०—

शंका—यदि वानप्रस्थलिये पशुवलिदेना योग्यनहींहैतो श्रीरामजी तथा युधिष्ठिरादिक पांडवभी बनवासमें क्यों मृगोंकोमारकर मांसको खाते और ब्राह्मणोंको खुलाते रहेहैं ॥

समाधान–रामजी तथा पांडवोंने गृहस्थाश्रमका त्यागकर नियत वानप्रस्थकाग्रहण नहींकराथा किन्तु उनका वनवास नैमित्तक हुआहै वो क्षात्रियमहाराजेथे अतः विधिसे विहितमांसको खुलाना व खाना उनका शास्त्र विहित धर्म ही था ॥

शंका–सावित्री भगवतीने उस ब्राह्मणको पशुबलिदानलिये क्यों प्रेरणाकी थी–

समाधान–सावित्री भगवतीका यिह तात्पर्य्यथाकि–यदि तूं वानप्रस्थ बनताहैतो जपयज्ञ ध्यानयज्ञकरो यदि गृहस्थब्राह्मणहैतो शास्त्रविधिका उल्लंघन मतकर किंतु विधिसें पशुबलिप्रदानकरो ॥